S.4

स्वामी श्रीशिवानन्द सरस्वती विरचित

काशीमाहात्म्य

कुलपति डॉ० मण्डन मिश्र की प्रस्तावना से अलङ्कृत

सम्पादक

डॉ० हरिश्चन्द्रमणि त्रिपाठी

सम्पूर्णानन्द-संस्कृत-विश्वविद्यालय
वाराणसी

UNIVERSITY-SILVERJUBILEE-GRANTHAMĀLĀ

[Vol. 23]

KĀŚĪMĀHĀTMYA

OF

SVĀMĪ ŚRĪ ŚIVĀNANDA SARASVATĪ

FOREWORD BY

DR. MANDAN MISHRA

VICE-CHANCELLOR

EDITED BY

DR. HARIŚCANDRA MAṆI TRIPĀṬHĪ

Publication Officer

Sampurnanand Sanskrit University

Varanasi



VARANASI

1997

Research Publication Supervisor—
Director, Research Institute,
Sampurnanand Sanskrit University
Varanasi.

Published by—
Dr. Harish Chandra Mani Tripathi
Publication Officer,
Sampurnanand Sanskrit University
Varanasi–221 002.

Available at—
Sales Department,
Sampurnanand Sanskrit University
Varanasi–221 002.

First Edition, 1000 Copies
Price–Rs. 100. 00

Printed by—
VIJAY PRESS,
Sarasauli, Bhojubeer
Varanasi.

विश्वविद्यालय–रजतजयन्ती–ग्रन्थमाला

[२३]

स्वामी श्रीशिवानन्द सरस्वती विरचित

काशीमाहात्म्य

कुलपति डॉ० मण्डन मिश्र की प्रस्तावना से अलङ्कृत

सम्पादक

डॉ० हरिश्चन्द्रमणि त्रिपाठी

प्रकाशनाधिकारी

सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय

वाराणसी



वाराणसी

२०५३ वैक्रमाब्द　　१९१८ शकाब्द　　१९९७ ख्रेस्ताब्द

अनुसन्धान-प्रकाशन-पर्यवेक्षक —
निदेशक, अनुसन्धान-संस्थान
सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय
वाराणसी ।

▫

प्रकाशक —
डॉ० हरिश्चन्द्रमणि त्रिपाठी
प्रकाशनाधिकारी,
सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय
वाराणसी–२२१ ००२.

▫

प्राप्ति-स्थान —
विक्रय-विभाग,
सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय
वाराणसी–२२१ ००२.

▫

प्रथम संस्करण, १००० प्रतियाँ
मूल्य — १००=०० रुपये

▫

मुद्रक —
विजय-प्रेस,
सरसौली, भोजूबीर
वाराणसी ।

प्रस्तावना

भारतवर्षस्येतिवृत्ते काश्याः स्थानं सर्वथाऽद्वितीयम्। वस्तुतोऽस्य राष्ट्रस्येतिहासस्य निर्माणे काश्या अवदानं सर्वथाऽनुपमेयम्। एकत्र भगवती गङ्गा, अपरत्र भगवान् विश्वनाथः, सङ्कटमोचनो मारुतिनन्दनः, अन्ये चापरिगणनीया देवा अत्र विराजन्ते। एवं हि प्रतीयते यद् देवा अपि नगरेऽस्मिन् विराजमानाः किमपि विशिष्टं गौरवमनुभवन्ति। वस्तुत इदं तेषां सर्वप्रियं स्थानम्। अत्रैव भारतीयसंस्कृतेर्विकासः, तत्त्वज्ञानस्य च समुद्भवः सञ्जातः। वस्तुतो विद्याया विविधा विधा अत्र प्रवर्तिताः फलिताः, पुष्पिताश्च, अत एवास्याः सर्वविद्याराजधानीत्वं सङ्गच्छते। वर्तमानेऽपि काले सम्पूर्णानन्दसंस्कृतविश्वविद्यालयः, महात्मागान्धिकाशीविद्यापीठम्, बनारसहिन्दूविश्वविद्यालयः, केन्द्रीय-उच्चतिब्बतीशिक्षासंस्थानञ्चेति चत्वारो विश्वविद्यालयाः काश्यास्तमेव महिमानं संवर्द्धयन्ति। न केवलं भारतीयाः, अपि तु पाश्चात्त्या अपि विद्वांसोऽत्र समागत्यात्मानं कृतार्थयन्ति, सामान्यजनाश्च तीर्थस्यास्य यात्रां जीवनस्य साफल्यमङ्गीकुर्वन्ति। भगवान् विश्वनाथः समस्तेषु ज्योतिर्लिङ्गेषु प्रथमतया वन्दनीय इत्यस्माकं शास्त्रीया मान्यता।

अस्या नगर्या माहात्म्यमधिकृत्य विभिन्नेषु पुराणेषु संस्कृतवाङ्मयस्यान्येषु च ग्रन्थेषु यावद्वर्णितम्, न तावदन्यस्याः कस्या नगर्या विषये। अनेन विश्वविद्यालयेन स्कन्दपुराणान्तर्गतस्य काशीखण्डस्य भागत्रयं संस्कृत-हिन्दी-व्याख्याद्वयोपेत प्रकाशितम्, चतुर्थश्च भागः शीघ्रमेव प्रकाशयिष्यत इत्यहं विश्वसिमि। तमेव विषयमधिकृत्य काशीमाहात्म्यस्य सङ्कलनं तत्रभवद्भिर्वन्दनीयैः **स्वामिश्रीशिवानन्दसरस्वतिपादैर्**विधाय हिन्दीभाषायामनूद्य च विश्वविद्यालयप्रकाशनाय समर्पितमिति हेतोः शिवानन्दस्वरूपेभ्यः श्रीसरस्वतिपादेभ्यः स्वकीयानि कृतज्ञतापुष्पाण्युपहरामि।

प्रकाशनस्यास्य सम्पादनं विश्वविद्यालयस्य यशस्विना प्रकाशनाधिकारिणा व्याकरणाचार्येण **डॉ० हरिश्चन्द्रमणित्रिपाठिना** कृत्वा ग्रन्थस्य सुषमा संवर्द्धिता। श्रीत्रिपाठिनां प्रकाशनाधिकारित्वे विश्वविद्यालयस्यास्य प्रकाशनविभागो नितरां संवर्द्धितः। अनेन विश्वविद्यालयस्य प्रतिष्ठा सर्वस्मिन्नपि जगति समृद्धा—इति हेतोः स्वकीयैः सहायकैः सह श्रीत्रिपाठिनो वर्द्धापनीयाः। ग्रन्थस्यास्य मुद्रका विजय-प्रेस-सञ्चालकाः **श्रीगिरीशचन्द्रमहोदया** अपि धन्यवादार्हाः, येषां च सहयोगेनैवेदं पुष्पं संस्कृतविद्वद्भ्यः समुपह्रियते।

वाराणसी
माघपूर्णिमा,
वि० सं० २०५३

मण्डनमिश्रः
कुलपतिः
सम्पूर्णानन्दसंस्कृतविश्वविद्यालयस्य

सम्पादकीय

यतिवर स्वामी **श्रीशिवानन्द सरस्वती महाराज** द्वारा प्रणीत "काशी माहात्म्य" के सम्पादन का गुरुतर भार मेरे ऊपर पूर्व कुलपति **आचार्य श्री वि० वेङ्कटाचलम्** महोदय ने सौंपा था। स्वामी जी द्वारा विरचित यह ग्रन्थ पाँच अध्यायों में विभक्त है, जिनमें क्रमशः **"काशी-तत्त्व-विमर्श"**, **"मुक्तिधाम काशी"**, **"काशी की ओंकाररूपता"**, **"विश्वेश्वर-महिमा"** तथा **"अविमुक्त-क्षेत्र"** प्रभृति विषयों का विवेचन किया गया है। स्वामी जी ने वेदों से लेकर पौराणिक वाङ्मय का गम्भीर आलोडन करके इस पुस्तक को मूर्तिमान् किया है। जैसा इस ग्रन्थ के नाम से ही स्पष्ट हो रहा है कि इसमें काशी की महिमा का वर्णन है। उनके अनुसार काशी की चरितार्थता न केवल इसके भौगोलिक स्वरूप में ही सिद्ध होती है; अपितु इसकी सिद्धि के लिए काशी के भौगोलिक स्वरूप के साथ ही साथ प्रधानरूप से भगवान् विश्वेश्वर, सुधास्यन्दिनी माता गङ्गा एवं अन्यान्य देवगण की महिमा का अनुध्यान आवश्यक है। स्वामी जी महाराज ने इन सभी तथ्यों एवं तत्त्वों से जुड़े हुए विशेषरूप से पौराणिक-वाङ्मय को अपने विश्लेषण का उपजीव्य बनाया है।

काशी-तत्त्व की महिमा सनातन रही है। काशी के लोकोत्तर स्वरूप के वर्णन से स्कन्दमहापुराण का काशीखण्ड ओत-प्रोत है। महर्षि व्यास ने काशीखण्ड के प्रारम्भ में ही इसकी अलौकिकता का बड़ा मनोहारी चित्रण किया है—

भूमिष्ठापि न यात्र भूस्त्रिदिवतोऽप्युच्चैरधस्थापि या
या बद्धा भुवि मुक्तिदा स्युरमृतं यस्यां मृता जन्तवः।
या नित्यं त्रिजगत्पवित्रतटिनीतीरे सुरैः सेव्यते
सा काशी त्रिपुरारिराजनगरी पायादपायाज्जगत्॥

[का० ख० १।२]

"अर्थात् जो भूतल में विराजमान रहते हुए भी स्वयं भूमि नहीं है, जो अधस्तल में स्थित होने पर भी स्वर्ग से ऊपर है, जो स्वयं भूमण्डल में बद्ध होने पर भी मुक्ति प्रदान करती है, जिसमें मृत होने वाले प्राणि मात्र अमृत-पद के अधिकारी हो जाते हैं एवं त्रैलोक्य पावनी गङ्गा के तट पर देवगण द्वारा जो सदैव सेवित है, वह त्रिपुरान्तक की राजधानी श्रीकाशी अज्ञानरूप विपत्ति से जगत् की रक्षा करे"।

इस मङ्गलश्लोक में महर्षि व्यास ने काशी के चिन्मय स्वरूप का बड़ा मार्मिक-चित्रण किया है। ऐसी लोकोत्तर काशी को काशीखण्ड में शाश्वत निरूपित किया गया है। उसमें अनुष्ठित कर्मों की शाश्वतता ऐसी है कि प्रलय काल में भी उनका प्रलय नहीं होता।

"अत्यल्पमपि यत्कर्म कृतमत्र शुभाशुभम्।
प्रलयेऽपि न तस्यास्ति प्रलयो मुनिसत्तम"॥

[का० ख० ६१।१५२]

"अर्थात् काशी क्षेत्र में किये गये छोटे से छोटे शुभाशुभ कर्मों का प्रलयकाल में भी प्रलय नहीं होता।"

काशीखण्ड में ही इस अविमुक्त-क्षेत्र काशी को 'नाभितीर्थ' भी कहा गया है, क्योंकि यह पृथ्वी के 'नाभिस्थान' में स्थित है। महाश्मशान मणिकर्णिका से सनाथित इस नाभितीर्थ में पूरे 'ब्रह्माण्डगोलक' का लय एवं उदय होता रहता है। जैसा कि काशीखण्ड में ही कहा गया है—

"नाभितीर्थमिदं प्रोक्तं नाभिभूतं यतः क्षितेः।
अपि ब्रह्माण्डगोलस्य नाभिरेषा शुभोदया॥
सा मणिकर्णिकेयीयं नाभिर्गम्भीर्यभूमिका।
ब्रह्माण्डगोलकं सर्वं यस्यामेति लयोदयम्॥"

[का० ख० ६१।१५३-१५४]

मोक्षदायिनी सप्त-पुरियों में काशी का स्थान मध्य स्थान में पढ़ा गया है—

अयोध्या मथुरा माया काशी काञ्ची अवन्तिका।
पुरी द्वारावती चैव सप्तैता मोक्षदायिकाः॥

इसके मोक्षदायोस्वरूप के वारे में काशीखण्ड में कहा गया है—

तारकं ब्रह्म व्याचष्टे तेन ब्रह्म भवन्ति हि।
एवं श्लोको भवत्येष आहुर्वै वेदवादिनः॥
भगवानन्तकालेऽत्र तारकस्योपदेशतः।
अविमुक्ते स्थितान् जन्तून् मोक्षयेन्नात्र संशयः॥
नाविमुक्तसमं क्षेत्रं नाविमुक्तसमा गतिः।
नाविमुक्तसमं लिङ्गं सत्यं सत्यं पुनः पुनः॥
अविमुक्तं परित्यज्य योऽन्यत्र कुरुते रतिम्।
मुक्तिं करतलान् मुक्त्वा सोऽन्यां सिद्धिं गवेषयेत्॥

[का० ख० ५।२७-३०]

ऐसे अविमुक्त क्षेत्र का स्वरूप-निरूपण स्वामी जी महाराज ने अपने इस ग्रन्थ में बड़ी विक्षचणता के साथ किया है। उन्होंने काशी के स्वरूप और उसकी महिमा को रूपायित करने के लिए मधुकरी-वृत्ति अपनाकर पूरे पौराणिक-वाङ्मय का अनुसन्धान करते हुए इस ग्रन्थ को मौलिकस्वरूप प्रदान किया है। काशी की महिमा के निरूपण में असंख्य ग्रन्थ लिखे गये हैं। उसी कड़ी में स्वामी जी ने सन्त-हृदय से काशी-भक्ति प्रदर्शित की है। अतः ऐसे अनुपम एवं लोकहितकारी ग्रन्थ के प्रणयन के लिए मैं **स्वामी श्रीशिवानन्द जी महाराज** को सादर प्रणाम करता हूँ।

इस महनीय ग्रन्थ के प्रकाशन हेतु प्रेरणा प्रदान करने वाले पूर्व कुलपति मनीषिप्रवर **प्रो० वि० वेङ्कटाचलम्** जी को शिरसा नमन करता हूँ। इसी क्रम में विश्वविद्यालय के प्रकाशनों को स्वर्णाक्षरों में लिखे जाने की ऐतिहासिक भूमिका प्रदान करने वाले वर्तमान कुलपति विद्वन्मूर्धन्य माननीय **डॉ० मण्डन मिश्र** जी को सादर प्रणाम करता हूँ, जिनकी स्फूर्तिमान् प्रेरणा से इस ग्रन्थ का प्रकाशन शीघ्र हो सका। इस ग्रन्थ के सम्पादन में पदे-पदे सहयोग करने वाले कर्मठ प्रूफ-रीडर **डॉ० हरिवंश कुमार पाण्डेय** एवं **श्री अशोक कुमार शुक्ल** को भी हार्दिक धन्यवाद प्रदान करता हूँ, साथ ही इस ग्रन्थ के मुद्रक विजय-प्रेस के सञ्चालक **श्रीगिरीशचन्द्र** को धन्यवाद देना अपना कर्त्तव्य समझता हूँ, जिनके सतत् प्रयास से इसका मुद्रण शीघ्र सम्पन्न हो सका।

यतः इस ग्रन्थ का नाम **'काशी-माहात्म्य'** है, अतः इसे काशीपति भगवान् विश्वनाथ के श्रीचरणों में अर्पित करता हूँ।

वाराणसी
महाशिवरात्रि-पर्व,
वि० सं० २०५३

विद्वद्विधेय
हरिश्चन्द्र मणि त्रिपाठी
प्रकाशनाधिकारी,
सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय
वाराणसी

विषयानुक्रमणी

द्वितीय–अध्याय

तृतीय–अध्याय

चतुर्थ–अध्याय

पंचम–अध्याय

काशी-माहात्म्य

काशी-तत्त्व-विमर्श

श्री काशी संसार की सबसे प्राचीन नगरी है, इसे प्राचीन और नवीन इतिहास के विद्वान् भी स्वीकार करते हैं[1]। सबसे प्राचीन ग्रन्थ 'ऋग्वेद' है, उसमें भी काशी का उल्लेख मिलता है—**'काशिरित्ते'**[2] ।

काशी विश्व से परे है, अर्थात् सर्वोत्कृष्ट है।

'यक्षः काशीनां भरतः सात्वतामिव'[3] ।

काशीस्थ सात्त्विक प्राणियों में मानव-देहधारी होकर भो जड़भरत जी देवस्वरूप यक्ष के समान थे।

'यो मा पाकेन मनसा चरन्तमभिचष्टे अनृतेभिर्वचोभिः।
आप इव काशिना संगृभीता असन्नस्त्वासत इन्द्र वक्ता'[4] ॥

ब्रह्मर्षि वसिष्ठ कहते हैं कि मैं सबके साथ पवित्र मन से व्यवहार करता हूँ, फिर भी मुझे जो झूठा दोष लगाता है, वह दुष्ट मनुष्य उसी तरह समाप्त हो जाता है, जिस प्रकार काशी में मृत्यु होने के पश्चात् जीवों के कर्म समूल नष्ट हो जाते हैं।

'काश्यां विदेहकैवल्यं भवतीति सुनिश्चितम्'[5] ।

काशी में जीवों को विदेह कैवल्य प्राप्त होता है, यह सुनिश्चित है।

यत्र कुत्रापि वा काश्यां मरणे स महेश्वरः।
जन्तोर्दक्षिणकर्णे तु मत्तारं समुपादिशेत्[6] ॥

काशी में कहीं पर भी मरने पर भगवान् शङ्कर प्राणियों के दाहिने कान में तारक मन्त्र का उपदेश देते हैं। उपदेश प्राप्त करते ही प्राणी तत्काल मुक्ति को प्राप्त हो जाता है।

---

१. द्रष्टव्य—'वैदिक इण्डेक्स आफ नेम्स एण्ड सब्जेक्ट्स—पृ० १५३–५५।
२. ऋ० वे० ३।३०।५; ३. श० ब्रा० ३।११।९।४; ४. अ० वे० ८।४।८।
५. छा० उ० ३।८।२; ६. मुक्ति० उ० १।१६।

'अत्र हि जन्तोः प्राणेषूत्क्रममाणेषु रुद्रस्तारकं ब्रह्म व्याचष्टे, येनासावमृतो भूत्वा मोक्षीभवति, तस्मादविमुक्तमेव निषेवेत अविमुक्तं न विमुञ्चेदेवमेवैतद्याज्ञवल्क्यः'[1] ।

निश्चित ही अविमुक्त देवों का देवयजन समस्त प्राणियों का ब्रह्मसदन है। यहाँ ही जीवों के प्राणोत्क्रमण काल में भगवान् रुद्र 'तारक' ब्रह्म का उपदेश करते हैं, जिससे वे जीव अमर होकर मोक्षमार्गी होते हैं। इसलिए अविमुक्त क्षेत्र का सेवन अवश्य करना चाहिए। अविमुक्त क्षेत्र का त्याग नहीं करना चाहिए, यही योगी याज्ञवल्क्य का मत है।

श्रुतिस्मृतिपुराणानां रहस्यं यस्त्वचीकरत् ।
सर्वपापप्रशमनं सर्वशान्तिकरं परम्[2] ॥

श्रुति, स्मृति तथा पुराणों में जो रहस्य बताया गया है, वह सब काशी में ही है। अतः काशी समस्त पापों का नाश करने वाली तथा परमशान्ति प्रदान करने वाली है।

भूर्भुवःस्वःप्रदेशेषु काशी परमपावनम्[3] ।

भूर्भुवः स्वः प्रदेशों की अपेक्षा काशी ही परम पावन है।

सत्यं सत्यं पुनः सत्यं सत्यं सत्यं पुनः पुनः ।
दृश्यो विश्वेश्वरो नित्यं स्नातव्या श्रीमणिकर्णिका[4] ॥

बार-बार त्रिसत्य यही है कि भगवान् विश्वेश्वर का नित्य दर्शन तथा श्रीमणिकर्णिका में स्नान करना चाहिए।

मोक्षदाः सप्तपुर्यश्च तासु काशी विशिष्यते[5] ।

अयोध्या, मथुरा, माया आदि सप्त पुरियाँ मोक्ष देने वाली हैं, उनमें काशी का विशेष महत्त्व है।

काशी ब्रह्मेति विख्याता तद्विवर्तो जगद्भ्रमः ।
अविवर्तं तदेवाहुः काशीति ब्रह्मवादिनः[6] ॥

काशी ही ब्रह्म है और उसका विवर्त भ्रमरूप जगत्। इसीलिए ब्रह्मवादी लोग काशी को अविवर्त्त कहते हैं।

---

१. जाबा० उप० १।१९; २. का० ख० ९५।४; ३. वही—५९।५।
४. वही—१००।१०५; ५. केदा० माहा० ६७; ६. वही—८८।

श्रुतिस्मृतिपुराणेषु सर्वशास्त्रेषु पार्वति ।
काशी ब्रह्मेति विख्याता तद् ब्रह्म प्राप्यतेऽत्र हि[1] ॥

हे पार्वति ! श्रुति, स्मृति, पुराणों में तथा सब शास्त्रों में काशी ब्रह्मरूप से विख्यात है । अतएव काशी में ब्रह्म की प्राप्ति होती है ।

सर्वधर्मफलं सम्यक् काश्यां श्रद्धचेद्यदा मनः ।
काशी ब्रह्मेति विख्याता यद्विवर्तो जगद्भ्रमः[2] ॥

जब मन की काशी में श्रद्धा हो जाती है, तब सभी धर्मों का फल ठीक-ठीक मिल जाता है । काशी ब्रह्मरूप से विख्यात है, यह संसार जिसका भ्रमरूप विवर्त है ।

यथा लौहं स्पर्शमणौ पतितं कनकं भवेत् ।
तथा काश्यां ब्रह्मरूपं प्राप्नुयाच्छिवरूपताम् ॥

जैसे पारसमणि से स्पर्श होने पर लोहा भी स्वर्ण बन जाता है, उसी प्रकार काशी में शिव जी के सान्निध्य से जीवमात्र ब्रह्मरूप हो जाता है ।

तस्मात्काशी ब्रह्मरूपा जडपृथ्वीरसङ्गता ।
महर्जनस्तपोलोकवासिभिर्मुनिभिर्मही[3] ॥

इसीलिए काशी ब्रह्मरूप है, जो पृथ्वी से सङ्गत नहीं है । महः, जनः, तपोलोक में निवास करने वाले ऋषियों से यह मुक्त रहती है ।

स्थूलादपि स्थूलतरा काशिका ब्रह्मरूपिणी ।
यथा मनुष्यदेहेऽस्मिन् शोधिते भाति वस्तुतः[4] ॥

स्थूल से स्थूलतर काशी ब्रह्मरूपिणी है । जैसे मनुष्य के शरीर में स्वच्छता है, वैसे ही काशी में स्वच्छता और पवित्रता है । काशी की पवित्रता से ही काशी में मनुष्यों के पाप नष्ट होते हैं ।

काशी ब्रह्मैव साक्षाद्धि विदुषां श्रुतिचक्षुषाम्[5] ।

वैदिक विद्वानों ने काशी को साक्षात् ब्रह्म के सदृश कहा है ।

काशीस्मरणमात्रेण किं चित्रं यदघं व्रजेत् ।
गर्भवासोऽपि नश्येत विश्वेशानुग्रहात्परात्[6] ॥

---

१. केदा० मा० ५३; २. का० र० २।२८ ; ३. वही—२।११७ ।
४. वही—२६।९१; ५. वही—२६।८१; ६. का० ख० ५०।१२८ ।

जिस काशी में रहने से विश्वेश्वर का परम अनुग्रह हो जाने पर गर्भवास का दुःख भी छूट जाता है, उसी काशी के स्मरण करने मात्र से यदि पाप ही कट जावे, तो इसमें कौन बड़ा आश्चर्य है।

वाराणसीति काशीति महामन्त्रमिमं जपन्।
यावज्जीवं त्रिसन्ध्यं तु जन्तुर्जातु न जायते[१]॥

"वाराणसी-काशी" इस महामन्त्र का जन्म भर त्रिकाल सन्ध्यायों में जो जीव जप करता है, उसे फिर जन्म नहीं लेना पड़ता, अर्थात् जन्म-मृत्यु के बन्धन से छूटकर जीव मुक्त हो जाता है।

योजनानां शतस्थोऽपि विमुक्तं संस्मरेद्यदि।
बहुपातकपूर्णोऽपि पदं गच्छत्यनामयम्[२]॥

एक सौ योजन पर स्थित रहने पर भी जो श्री काशी का स्मरण करता है, वह बहुत पापकर्मों से पूर्ण होने पर भी समग्र पापों से रहित हो जाता है।

गच्छता तिष्ठता वापि स्वपता जाग्रतार्थवा।
काशीत्येष महामन्त्रो येन जप्तः स निर्भयः[३]॥

जो प्राणी चलते, स्थिर रहते, सोते और जागते हुए हर समय 'काशी' इस दो अक्षरों के महामन्त्र को जपते रहते हैं, वे इस कराल संसार में निर्भय रहते हैं, अर्थात् इस असार संसार से मुक्त हो जाते हैं।

श्रुतं कर्णामृतं येन काशीत्यक्षरयुग्मकम्।
न समाकर्णयत्येव स पुनर्गर्भजां व्यथाम्[४]॥

'काशी' इन दो अक्षरों को जिन प्राणियों ने अपने कानों से सुन लिया, वे पुनः गर्भवासजन्य व्यथा का अनुभव नहीं करते हैं, अर्थात् गर्भवास-व्यथा से मुक्त हो जाते हैं।

येन काशी हृदि ध्याता येन काशीह सेविता।
तेनाहं हृदि सन्ध्यातस्तेनाहं सेवितः सदा॥
काशीं यः सेवते जन्तुर्निर्विकल्पेन चेतसा।
तमहं हृदये नित्यं धारयामि प्रयत्नतः[५]॥

---

१. का० ख० ३१।१२६; २. नार० पु० ६।३७; ३. का० ख० ६४।३६।
४. वही—६४।३३; ५. वही—५३।९३–९४।

विश्वनाथ जी कहते हैं कि जो मनुष्य हृदय में काशी का ध्यान करता है, जो मनुष्य निर्विकल्प चित्त से काशी का स्मरण करता है, समझना चाहिए कि उसने मेरा हृदय में ध्यान कर लिया, उससे मैं सदैव सेवित रहता हूँ तथा मैं नित्य उसे प्रयत्नपूर्वक अपने हृदय में धारण करता हूँ।

ये स्मरन्ति सदाकालं वदन्ति च पुरीमिमाम्।
तेषां विनश्यति क्षिप्रमिहामुत्र च पातकम्[१] ॥

जो लोग सदा इस 'काशी' पुरी का स्मरण करते रहते हैं, शीघ्र ही उनके इस लोक तथा परलोक के पातक विनष्ट हो जाते हैं।

'काशीस्मरणपुण्येन स्वर्गाद्भ्रष्टो हि जायते'।
'स्मरन्ति ये नराः काशीं यत्र कुत्रापि संस्थिताः[२]'।
'काशिका परमपदप्रकाशिका दर्शनश्रवणकीर्तनादिभिः[३]'।

स्वर्ग से भ्रष्ट हुआ जीव भी 'काशी' के स्मरणजन्य पुण्य से मुक्त हो जाता है। जो लोग जहाँ कहीं भी स्थिर होकर काशी का स्मरण करते हैं, वे भी पुण्यशाली हैं।

यदि काशी का दर्शन, श्रवण, कीर्तन किया जाय, तो काशी परमपद की प्रकाशिका है। अतः 'काशी' परमपद को प्राप्त कराती है।

काश्यां येषां नाम गृह्णन्ति लोका बीजं तेषां जायते मोक्षमार्गे।
काशीं ये वै संस्मरन्त्यन्यदेशे तानप्यात्मा शङ्करस्तारयेच्च[४] ॥

काशी में जो लोग 'काशी' का नाम लेते हैं, समझना चाहिए कि उन लोगों के मोक्ष का बीज जम गया है। जो अन्य देशों में 'काशी' का स्मरण करते हैं, उन्हें भी काशी विश्वनाथ जी तार देते हैं, अर्थात् वे भी मुक्त हो जाते हैं।

गर्भरक्षामणिर्मन्त्रः काशीवर्णद्वयात्मकः।
यस्य कण्ठे सदा तिष्ठेत्तस्याकुशलता कुतः[५] ॥

यह 'काशी' वर्णद्वय गर्भस्थ शिशु की रक्षा के लिए रक्षामणि मन्त्र है। जिसके कण्ठ में यह मन्त्र रहता है, उसका अहित कभी नहीं हो सकता।

सुधां पिबति यो नित्यं काशीवर्णद्वयात्मिकाम्।
स नैर्जरीं दशां हित्वा सुधैव परिजायते[६] ॥

---

१. पद्म० पु० ३२२।६१; २. का० ख० २।४४; ३. का० र० ३।१५।
४. वही—३।२२; ५. का० ख० ६४।३१; ६. वही—६४।३२।

स्कन्द जी अगस्त्य मुनि से कहते हैं कि जो दो वर्णों वाले 'काशी' इस नाम का साक्षात् सुधापान करता है, अर्थात् सस्नेह निरन्तर 'काशी' का जप करता हुआ आनन्द में लीन रहता है, वह देवताओं की श्रेणी से अपने को ऊपर कर लेता है, अर्थात् देवताओं से भी श्रेष्ठ हो जाता है।

येन बीजाक्षरयुगं काशीति हृदि धारितम्।
अबीजानि भवन्त्येव कर्मबीजानि तस्य वै[1] ॥

जो प्राणी 'काशी' नामक बीजरूप को हृदय में धारण करता है, उसके कर्मबीज निर्बीज हो जाते हैं, अर्थात् कर्मजन्य फल नष्ट हो जाते हैं।

काशीति वर्णद्वितयं स्मरंस्त्यजति पुद्गलम्।
यत्र क्वापि भवेत्तस्य कैलासे वसतिः स्फुटा[2] ॥

'काशी' इन दो अक्षरों का स्मरण करता हुआ जो व्यक्ति जहाँ कहीं भी शरीर का परित्याग करता है, उसका कैलास में वास होता है, यह निश्चित है।

काशी काशीति काशीति बहुधा संस्मरन् द्विजः।
न पश्यति हि नरकान् वर्तमानान् स्वयंकृतान् ॥

वह द्विज 'काशी-काशी-काशी' इस प्रकार बारम्बार स्मरण करता हुआ स्वयं कृत वर्तमान नरकों को नहीं देखता है, अर्थात् मुक्त हो जाता है।

अद्यारभ्य महाभागा ये स्मरिष्यन्ति काशिकाम्।
तेषां पापक्षयो भूयात् मोक्षबीजं भवत्वनु ॥
तीर्थयात्रार्थिनो ये हि काश्यामागत्य धार्मिकाः[3] ॥

आज से जो मनुष्य काशी का स्मरण करेंगे, उनके पाप नष्ट हो जायेंगे तथा तत्पश्चात् वही मोक्ष का कारण बन जायेगा। जो धर्म की भावना से तीर्थयात्रा के रूप में काशी आते हैं, वे भी इस लाभ को प्राप्त कर लेंगे।

कैर्न संस्मरणीया सा काशी विश्वविमोहिनी[4] ।

विश्वमोहिनी काशीपुरी किसके द्वारा स्मरण करने योग्य नहीं है? अर्थात् सब के स्मरण करने योग्य है।

---

१. का० ख० ६४।३७; २. पद्मपु०; ३. का० र० १४।४९–५०।
४. का० ख० ५५।५०।

ते पुनः काशिकां प्राप्य जितेन्द्रियमनोगुणाः ।
भवन्ति शुद्धाः शुद्धात्मन् ! शुद्धब्रह्मस्वरूपिणः ।।
स्मरणं कीर्तनं काश्यां दर्शनं मोक्षबीजकृत्[1] ।।

काशी में आकर इन्द्रियों एवं मन को जीतकर शुद्ध एवं शुद्ध ब्रह्मस्वरूप वाले हो जाते हैं। काशी में (देवी-देवताओं का) स्मरण, कीर्त्तन तथा दर्शन मोक्ष देने वाला है।

काशी काशीति काशीति शिवशङ्कर ! केशव ।
पाहि मां पतितं दीनं गुरुदेवापराधिनम्[2] ।।

"काशी-काशी-काशी", "शिव-शङ्कर-केशव" ! आप गुरुदेवापराधी पतित एवं दीन मेरी रक्षा करें, ऐसा कहने वाला व्यक्ति निष्पाप तथा शिव और विष्णु का भक्त होता है।

यो मन्त्रं जपति प्रातः काशीवर्णद्वयात्मकम् ।
स तु लोकद्वयं जित्वा लोकातीतं व्रजेत्पदम्[3] ।।

जो प्रातःकाल 'काशी' इस दो अक्षर के मन्त्र का जप करता है, वह दो लोकों पर विजय प्राप्त करके लोकातीत परमपद को प्राप्त करता है।

काशी काशीति काशीति रसना यदि संस्कृता ।
यस्य कस्यापि भूयाच्च चेत्स मुक्तो न संशयः ।।

"काशी-काशी-काशी" इस प्रकार कहने वाली किसी की भी रसना (जीभ) यदि सुसंस्कृत है, तो वह उसको मुक्ति प्रदान करने वाली है, इसमें संशय नहीं है।

जिह्वाग्रे वर्तते यस्य काशीत्यक्षरयुग्मकम् ।
न तस्य गर्भवासः स्यात् क्वचिदेव सुमेधसः[4] ।।

जिसकी जिह्वा के अग्रभाग पर 'काशी' यह दो अक्षर वाला नाम सदा रहता है, उस मनुष्य का कभी भी गर्भवास नहीं होता, वह सभी पापों से मुक्त होकर भगवान् शङ्कर का गणेश्वर हो जाता है।

यस्तु काशीति काशीति द्विस्त्रिर्जपति पुण्यवान् ।
अपि सर्वपवित्रेभ्यः स पवित्रतरो महान्[5] ।।

---

१. का० र० १४।५१–५२; २. वही—९।७०; ३. का० ख० ८५।६२।
४. वही—८५।६१; ५. वही—५३।९२।

स्कन्द जी कहते हैं कि जो व्यक्ति दो-तीन बार "काशी-काशी" जपता है, वह पुण्यात्मा है। काशी का नाम जपने वाला व्यक्ति पवित्रों में भी महान् पवित्र माना जाता है।

काशीनामसुधापानं ये कुर्वन्ति निरन्तरम्।
तेषां वर्त्म भवत्येव सुधामवसुधामयम्[१]॥

जो लोग निरन्तर अमृतमय काशी का जप रूपी सुधापान करते हैं, उनका मार्ग अमृतमय हो जाता है और काशी नाम जपने से उनको मुक्ति हो जाती है।

येन काशी हृदि ध्याता येन काशीह सेविता।
तेनाहं हृदि सन्ध्यातस्तेनाहं सेवितः सदा॥
काशीं यः सेवते जन्तुर्निर्विकल्पेन चेतसा[२]॥

विश्वनाथ जी कहते हैं कि जो व्यक्ति निर्विकल्प चित्त से काशी की सेवा करता है तथा हृदय में ध्यान करता है, उससे मैं सदा सेवित रहता हूँ।

शिवः काशी शिवः काशी काशी काशी शिवः शिवः[३]।

"शिव काशी-शिव काशी" इस प्रकार जपने से काशीवास का फल मिलता है।

"काशी" नाम जप के सम्बन्ध में यहाँ तक लिखा गया है कि—

तिष्ठता गच्छता वापि स्वपता जाग्रतापि वा।
अयं मन्त्रः सदा जप्यः सुखाप्त्यै काशिवासिना[४]॥

खड़े होते, चलते, बैठते, सोते 'काशी' इस मन्त्र का सदैव जप करना चाहिए, इससे सुख (सम्पत्ति) की प्राप्ति होती है।

काशी काशीति काशीति जपतो यस्य संस्थितिः।
अन्यत्रापि सतस्तस्य पुरी मुक्तिः प्रकाशते॥

"काशी-काशी" जपता हुआ जो व्यक्ति कहीं भी मर जाता है, उसे काशीपुरी मुक्ति प्रदान करती है।

नाममात्रमपि श्रुत्वा निष्पापो जायते नरः[५]।

काशी का नाममात्र सुनकर ही मनुष्य निष्पाप हो जाता है।

---

१. का० ख० ५५।५२; २. वही—५३।९३; ३. कल्पसूत्र।
४. का० ख० ५१।१३८; ५. वही—५८।६४।

स्वभावतस्त्वियं काशी सुखविश्रामभूर्मम ।
ये काश्यां नाम गृह्णन्ति येऽनुमोदन्त एव हि[1] ॥

शङ्कर पार्वती जी से कहते हैं कि हे देवि ! स्वभावतः यह काशी मेरी सुख एवं विश्राम की भूमि है। जो काशी में नाम ग्रहण करते हैं तथा अनुमोदन करते हैं, वे मनुष्य धन्य हैं।

वाराणस्यां नाम गृह्णन् विशेषात् ।
तीर्त्वा मृत्युं मृत्युजेताः स्वयं स्यात्[2] ॥

विशेषकर वाराणसी (काशी) नाम ग्रहण करने से व्यक्ति मृत्यु को पार कर स्वयं मृत्युजेता हो जाता है।

काशीति नाम जपतां शिवनामतुल्यं
विन्ध्याद्रिपापनिचयो विलयं प्रयाति ।
किं तत्कथाश्रवणकीर्तनवासदानैः
सम्यक् प्रदक्षिणवतामशुभस्य नाशः[3] ॥

भगवान् सदाशिव के नाम के समान केवल "काशी-काशी" का जप करने वाले नर-नारियों के विन्ध्याचल के समान पापों का ढेर होने पर भी पाप नष्ट हो जाते हैं तथा जो विद्वान् काशीमाहात्म्य की कथा कहते हैं और जो श्रद्धा से श्रवण करते हैं (सुनते हैं) एवं काशी में निवास, ब्राह्मणों को दान देते हुए काशी की प्रदक्षिणा (पञ्चक्रोशी यात्रा) करते हैं, उन विद्वानों को धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष चारों पदार्थ हस्तामलक होते हैं।

नामापि मधुरं यस्याः परानन्दप्रकाशकम् ।
काश्याः काशीति काशीति सा कैः पुण्यैर्न जप्यते[4] ॥

जिसका मधुर नाम अत्यन्त आनन्ददायक है, ऐसी काशी किन पुण्यों से नहीं जपी जाती ? अर्थात् अत्यन्त पुण्यात्मा हो "काशी-काशी" नाम हमेशा जपते हैं।

ते मे शाखविशाखाभाः स्कन्दनन्दिगजास्यवत् ।
त एव भक्ता मे देवि ! त एव मम सेवकाः[5] ॥

वे ही स्कन्द, नन्दी एवं गणेश जी की तरह शाखा-प्रशाखा के रूप में हैं। हे देवि ! वे ही मेरे भक्त और सेवक हैं।

---

१. का० ख० ९७।२७१; २. ब्रह्मवैवर्तपुराण; ३. का० र० ९।१०५।
४. का० ख० ५५।५१; ५. वही—९७।२७२।

बहुनात्र किमुक्तेन वाराणस्या गुणान् प्रति ।
नामापि गृणतां काश्याश्चतुर्वर्गो न दूरतः[१] ।।

वाराणसी के गुण कहाँ तक कहे जाँय, इसके नाममात्र के उच्चारण से चतुर्वर्ग-फल प्राप्त होता है ।

जन्मान्तरसहस्रेषु यत्पापं समुपार्जितम् ।
रुद्रस्थलीं प्रविष्टस्य तत्सर्वं व्रजति क्षयम्[२] ।।

सहस्रों जन्म-जन्मान्तर के जो पाप जीव संचित किये रहता है, वे सभी पाप उस जीव के 'रुद्रस्थली' काशी में प्रवेश होने मात्र से क्षीण हो जाते हैं ।

जन्मान्तरसहस्रेषु यत्पापं पूर्वसञ्चितम् ।
अविमुक्तं प्रविष्टस्य तत्सर्वं व्रजति क्षयम्[३] ।।

हजारों जन्मों के संचित पाप अविमुक्त (काशी) क्षेत्र में प्रवेश करते ही नष्ट हो जाते हैं ।

यत्किञ्चिदशुभं कर्म कृतं मानुषबुद्धिना ।
अविमुक्ते प्रविष्टस्य तत्सर्वं भस्मसाद्भवेत्[४] ।।

मनुष्य-बुद्धि के कारण जो कुछ अशुभ कर्म कर दिये जाते हैं, वे इस अविमुक्त (काशी) क्षेत्र में प्रवेश करने मात्र से भस्म हो जाते हैं ।

यदि पापो यदि शठो यदि वाऽधार्मिको नरः ।
वाराणसीं समासाद्य पुनाति सकलं कुलम्[५] ।।

पापी, शठ (दुष्ट) एवं अधार्मिक भी यदि वाराणसी (काशी) में प्रवेश कर जाँय, तो समस्त कुल को पवित्र करते हैं ।

कोटिजन्मकृतपुण्यभारभृत् काशिकां समनुविश्य निर्मलः ।
जायते विगतभारजीवनः शान्तिमाप्य परशान्तिभाजनम्[६] ।।

करोड़ों जन्मों के किये हुए पुण्य-भार को धारण करने वाला काशी में प्रवेश करके निर्मल हो जाता है और उसका जीवन पापरूप भार से मुक्त हो जाता है तथा वह शान्ति-प्राप्ति के पश्चात् परमशान्ति को प्राप्त करता है ।

---

१. नारद-पुराण—;　२. का० ख० ६९।५३;　३. पद्मपु० स्वर्गखण्ड, ३ ।
४. मत्स्यपु०;　५. पद्मपु०, स्वर्गखण्ड, ३३।३९;　६. का० र० ६।६६ ।

अन्यान्यपि च पापानि महान्त्यल्पानि यानि च।
क्षयन्ति तानि सर्वाणि काशीं प्रविशतां सताम्[1] ॥

सज्जनों के काशी में प्रवेश करते ही अन्यान्य समग्र पाप, चाहे छोटे हों अथवा बड़े, अपने आप ही क्षय हो जाते हैं।

काशीदर्शनमात्रेण निष्पापो जायते नरः।
एकेन रेणुना काश्याः शुद्धयन्ति मलिनो जनाः[2] ॥

'काशी' के दर्शनमात्र से मनुष्य निष्पाप हो जाता है; क्योंकि 'काशी' के एक धूलिकण से मलिन जन शुद्ध हो जाते हैं।

काशीदर्शनमात्रेण निष्पापो जायते नरः।
पुण्यभारं पापनाशं कृत्वा विशति काशिकाम्[3] ॥

'काशी' के दर्शन मात्र से ही मनुष्य निष्पाप हो जाता है तथा काशी में प्रवेश से जो पुण्य का दुर्वह बोझ हो जाता है, वह पाप का नाश करता हुआ काशी में प्रवेश कर जाता है।

यदन्यत्रार्जितं पापं तत्काशीदर्शनाद् व्रजेत्[4] ।
दृशौ कृतार्थे कृतकाशिदर्शने[5] ।
काशीदर्शनजं पुण्यं प्राप्नोति नियतं नरः[6] ।

अन्यत्र का अर्जित पाप काशी के दर्शन मात्र से ही क्षीण हो जाता है। काशी के दर्शन से नेत्र कृतार्थ हो जाते हैं। काशी के दर्शन का पुण्य मनुष्य अवश्य प्राप्त करता है।

तावत्पापानि जृम्भन्ते नानाजन्मार्जितान्यपि।
यावत्काशी न हृत्संस्था पुनर्भवविघातिनी[7] ॥

अनेक जन्मों के अर्जित पाप तब तक गरजते हैं, जब तक भवविनाशिनी काशी का दर्शन नहीं होता। काशी का दर्शन होते ही सभी पाप शान्त हो जाते हैं।

---

१. का० ख० ४६।३१; २. वही; ३. वही।
४. वही—७५।२१; ५. वही—४४।४२; ६. वही।
७. वही—५०।१२७।

श्रेयसां भाजनं चैतन्नृजन्म न मुधा नयेत् ।
देवानामपि दुष्प्राप्यं काशीसन्दर्शनादृते[1] ॥

समस्त कल्याणों का आधार और देवताओं का भी दुष्प्राप्य इस मनुष्य जन्म को विना काशी के दर्शन किये वृथा (व्यर्थ) नहीं करना चाहिए ।

तुलापुरुषदानेन यत्पुण्यं सम्यगाप्यते ।
काशीदर्शनमात्रेण तत्पुण्यं श्रद्धयाऽस्तु वै[2] ॥

सम्यक् प्रकार से तुलापुरुष दान करने से जो पुण्य प्राप्त होता है, श्रद्धापूर्वक काशी के दर्शन मात्र से वही पुण्य प्राप्त होता है ।

अन्यत्र विहितं पापं नश्येत् काशीनिरीक्षणात् ।
काश्यां कृतानां पापानां दारुणेयं तु यातना[3] ॥

दूसरे स्थानों का किया हुआ पाप काशी को देखते ही विनष्ट हो जाता है; परन्तु काशी में किये हुए पापों के लिये घोर भैरवी यातना भोगनी ही पड़ती है ।

प्रयागस्नानपुण्येन यत्पुण्यं स्याच्छिवप्रदम् ।
काशीदर्शनमात्रेण तत्पुण्यं श्रद्धयाऽस्त्विह[4] ॥

प्रयाग तीर्थ में स्नान से जो मङ्गलप्रद पुण्य प्राप्त होता है, वही पुण्य श्रद्धापूर्वक 'काशी' के दर्शन मात्र से प्राप्त हो जाता है ।

अतीतं वर्तमानं च यज्ज्ञानाज्ञानतोऽपि वा ।
सर्वं तस्य च यत्पापं क्षेत्रं दृष्ट्वा विनश्यति[5] ॥

अतीत या वर्तमान में ज्ञान या अज्ञान से किये गये जीवों के समस्त पाप काशी-क्षेत्र के दर्शन मात्र से विनष्ट हो जाते हैं ।

यस्य दर्शनमात्रेण कृतार्थो मोक्षमाप्नुयात्[6] ॥

काशी के दर्शन मात्र से ही मनुष्य कृतकृत्य होकर मोक्ष-पद का अधिकारी हो जाता है ।

---

१. का० ख० ५०।१३३; २. वही—३६।९३; ३. वही—३३।११५ ।
४. वही—२६।९१; ५. म० पु० १८५।५५; ६. का० र० १३।६२ ।

विमर्श

पुराणों में काशी की उत्पत्ति के सम्बन्ध में प्रमाण मिलता है कि चौदह कल्प पहले प्रलय के पश्चात् जब सृष्टि आरम्भ हुई, तब भगवान् ने सर्वप्रथम पशु-पक्षी, मृग आदि जन्तुवों को उत्पन्न किया। प्राणियों को उत्पत्ति के पश्चात् भगवान् को सन्तोष नहीं हुआ, पुनः उन्होंने मनुष्यों को उत्पन्न किया। मनुष्य को देखकर भगवान् प्रसन्न हो गये। जब मनुष्य उत्पन्न हुए, तो वे पृथ्वी पर चारों ओर फैल गये। जन्म-जन्मान्तरों के संस्कार से वे अनेक प्रकार के कर्म करने लगे। भगवान् शङ्कर कैलास में विराजमान थे। करुणा के सागर भगवान् शिव जी कहने लगे—हे प्रभो! प्राणियों का कल्याण कैसे होगा? क्या कल्प-कल्पान्तर, जन्म-जन्मान्तर तक प्राणी रोग से ग्रसित रहेंगे? क्या वे सभी प्राणी दुःख, कष्ट और संकट में तड़पते रहेंगे? जन्म और मृत्युरूपी महान् कष्ट से तड़पते हुए मनुष्यों को मुक्ति कैसे मिलेगी?

भगवान् शङ्कर के प्राणियों के प्रति दया से युक्त वचन सुनकर भवानी शङ्कर भगवान् से प्रश्न करती हैं कि हे शिव! मृत्युलोक में रहने वाले प्राणियों का कल्याण कैसे होगा? वे प्राणी जन्म-मृत्युरूपी भवसागर से कैसे मुक्त होंगे? तब भगवान् शङ्कर ने कहा कि हे भवानी! मृत्युलोक के प्राणियों का कल्याण कैसे होगा और इनको कैसे मुक्ति मिलेगी? इस विषय में मैं अत्यन्त चिन्तित हूँ। हे भवानी! मैं मृत्युलोक के सभी जीवधारियों और प्राणिमात्र को मुक्ति देने के लिए मुक्तिक्षेत्र खोलना चाहता हूँ। इस पर भवानी प्रसन्न होकर कहती हैं कि हे स्वामी! मृत्युलोक में आप कहाँ मुक्तिक्षेत्र खोलना चाहते हैं?

तदनन्तर भगवान् विश्वनाथ कहते हैं कि हे भवानी! भारतवर्ष के मध्यभाग में उत्तरवाहिनी भागीरथी गङ्गा जी के परमपावन तट पर 'काश्य' नामक एक महानगरी है। उसी 'काश्य' नामक महानगरी में मैं जन्म-मृत्युरूपी महान् कष्ट में फँसे हुए प्राणियों को मुक्ति देने के लिए 'मुक्तिक्षेत्र' खोलूँगा। हे भवानी! जैसे देवताओं के लिए कैलास है, वैसे ही मृत्युलोक के प्राणियों को मोक्ष देने के लिए शिवलोक-सदृश 'काश्य' (काशी) नामक मुक्तिक्षेत्र का निर्माण करता हूँ। तदनन्तर विश्वनाथ जी ने एक ज्योतिर्मय देदीप्यमान शिव-ज्योतिर्लिङ्ग को प्रकट किया।

तदनन्तर भगवान् शिव हाथ में त्रिशूल लेकर कहने लगे कि हे त्रिशूल! तुम काशी में जाओ और काशी के मध्यभाग में खड़े हो जाओ।

तीनों लोक (त्रिकण्टक) के ऊपर प्रकाशमान दिव्य शिव-ज्योतिर्लिङ्ग पञ्चक्रोशात्मक होकर काशी में सदा निवास करेगा। मैं भी काशी के पञ्चक्रोशात्मक ज्योतिर्लिङ्ग में प्राणियों को मोक्ष देने के लिए सदा काशीवास करूँगा। इतना कहकर

भगवान् शिव ने अपने शिर की एक जटा को उखाड़ा। उखाड़ते ही कालभैरव प्रकट हो गये और हाथ जोड़कर कहने लगे—"हे प्रभो ! मेरे लिए क्या आज्ञा है" ?

विश्वनाथ जी कहते हैं—"हे भैरव ! तुम काशी के कोतवाल और महामन्त्री बनो और तत्काल जाकर काशी की रक्षा करो। काशीवास करने वालों को सभी प्रकार की सुविधा प्रदान करो। उनकी सब प्रकार से रक्षा करो। काशीवासियों को कष्ट देने वाले व्यक्ति को कठोर दण्ड दो। काशी में पाप करने वाले अनाचारी, दुराचारियों को डण्डे से मारकर काशी से बाहर निकालो। काशी की निन्दा करने वाले अभिमानियों का अभिमान चूर्ण कर उन्हें कठोर दण्ड दो। काशीवासियों के अज्ञान को मिटाकर उनमें ज्ञान भर दो। उन्हें वैराग्य दो। उन्हें ईश्वर की अडिग भक्ति प्रदान करो। हे कालभैरव ! काशी की रक्षा करो"।

इस प्रकार कहने के पश्चात् विश्वनाथ जी कहते हैं कि हे भैरव ! तुम काशी के अधिपति हो। यह काशी तुम्हारे ही अधीन रहेगी। विश्वनाथ जी कहते हैं कि हे अन्नपूर्णे ! तुम और हम दोनों काशीवास करेंगे। तुम सभी प्राणियों को अन्न देना, आवास देना, उन्हें (सन्मार्ग) ज्ञान, भक्ति, वैराग्य की ओर प्रेरित करना और मैं सभी प्राणियों को मुक्ति दूँगा। हे अन्नपूर्णे ! हमारी काशीपुरी तीनों लोकों से श्रेष्ठ होगी। त्रैलोक्य में काशी जैसी पुरी नहीं होगी। काशी में जो व्यक्ति क्षणमात्र भी वास करेगा, उसको विशेष फल की प्राप्ति होगी।

काशी के दर्शन से जन्म-जन्मान्तर के पाप समाप्त हो जायेंगे। हे अन्नपूर्णे ! हमारी काशीपुरी में मरने वाला प्राणी पुनः जन्म नहीं लेगा। काशी में शरीरत्याग करने वाले प्राणियों को सारूप्य प्राप्त होगा। पुनः वह हमारा सान्निध्य प्राप्त करके सायुज्य प्राप्त करेगा। वेदों में ब्रह्मरूपा, मुक्तिरूपा (काशी) कहेंगे। हे अन्नपूर्णे ! मृत्युलोक के प्राणी अल्पायु, अल्पबुद्धि और शक्तिहीन होंगे। प्रलय से पहले मृत्युलोक के सभी देवता और सभी तीर्थ काशी में आकर रहेंगे। प्रलय के पश्चात्, सृष्टि के बाद में सभी देवता और सभी तीर्थ यथास्थान एक साथ रहेंगे। जन्म-जन्मान्तर के पुण्य से मनुष्य तीर्थों में जाकर दान-यज्ञादि करके वहाँ निवास करेंगे। जो मनुष्य कथा श्रवण करते हुए और कथा कहते हुए, साधना, ज्ञान और भक्ति का उपदेश करते हुए काशीवास करेंगे, उनको अन्य क्षेत्र में स्थित प्राणियों से हजारों गुना अधिक फल मिलेगा। हे अन्नपूर्णे ! मैं प्रतिज्ञा करता हूँ कि काशी में रहने वाला प्राणी भूखा नहीं रहेगा। इतना ही नहीं, काशी में मरने वाला प्राणी भी पुनर्जन्म नहीं लेगा। मैं सबको मुक्ति प्रदान करूँगा। मृतकों की अस्थियाँ काशी की गङ्गा में छोड़ने पर और काशी के बाहर मरने वाले प्राणियों को काशी में जलाने पर मैं उन सभी प्राणियों को मुक्त कर दूँगा।

जो व्यक्ति विश्व में कहीं भी रहकर हमारी पूजा-अर्चना, उपासना, पञ्चाक्षरी महामन्त्र का जप-अनुष्ठानादि और मेरा स्मरण करेगा, उसे मैं मुक्त कर दूँगा। यह हमारी प्रतिज्ञा है। विश्वनाथ जी पुनः कहते हैं—हे अन्नपूर्णे! जो मनुष्य पञ्चक्रोशात्मक (पञ्चक्रोशी) शिव-ज्योतिर्लिङ्ग की बाहर से दर्शन-यात्रा एवं काशी की अन्तर्गृही दर्शन-यात्रा करेंगे, उन सबको मैं मुक्त कर दूँगा। हे पार्वती! जो मनुष्य केवल काशीवास करके मुक्ति प्राप्त करना चाहते हैं, उनको काशीवास कराने वाला तथा अन्न, वस्त्र, दूध, मिष्ठान्न आदि दान देने वाला जहाँ कहीं भी देह-त्याग करे, उसको मैं मुक्त कर दूँगा। हे अन्नपूर्णे! एक बात मैं और कहना चाहता हूँ कि जो मनुष्य वेद, पुराण, उपनिषदादि शास्त्रों का प्रेमपूर्वक अध्ययन–अध्यापन और सनातन धर्म का प्रचार-प्रसार करेगा, मैं उसके पूर्वजों सहित उसे मुक्त कर दूँगा। हे अन्नपूर्णे! हमारी काशी में जो मनुष्य जलाशय, कुण्ड, कूप आदि का निर्माण और मन्दिरों का जीर्णोद्धार, मूर्त्ति स्थापित करेंगे तथा प्रेरित करके करायेंगे, उन भक्तों को उनके पूर्वजों सहित मुक्ति दूँगा। निवृत्ति मार्ग के शिवयोगी, शिवभक्त तथा ज्ञानी साधु-महात्मा, संन्यासियों को अन्न, वस्त्र, आवास आदि से सहयोग करने वाले को भी जब तक वह जीवित रहेगा, ऐश्वर्य और अपनी भक्ति दूँगा। वह जहाँ भी शरीर-त्याग करे, उसे मुक्त कर दूँगा। हे भवानी! कल महाशिवरात्रि का दिन है। मैं महाशिवरात्रि के दिन पञ्चक्रोशात्मक ज्योतिर्लिङ्ग को काशी में स्थापित करूँगा।

हे भवानी! मृत्युलोक में सबसे श्रेष्ठ मोक्ष-क्षेत्र मेरी काशीपुरी होगी। इसकी सबसे बड़ी विलक्षणता होगी कि मृतक को भी विवाहादि सामग्रियों से सजा करके 'राम नाम सत्य है' इस प्रकार गीत गाते हुए श्मशान तक ले जाया जायेगा। इससे अधिक आश्चर्य और क्या होगा? इस प्रकार भगवान् विश्वनाथ यहाँ काशी में सदा-सर्वदा माँ अन्नपूर्णा के साथ स्थित हो गये। काशी की उत्पत्ति के सम्बन्ध में इस प्रकार का प्रमाण मिलता है।

विश्वनाथ जी को कैलास से काशी में आये चौदहवीं चतुर्युगी बीत रही है। विश्वनाथ जी के कैलास से काशी आने के पश्चात् तेरह बार प्रलय हुआ और तेरह बार सृष्टि हुई; क्योंकि चौदहवीं चतुर्युगी में विश्वनाथ जी काशी आये थे। यह अट्ठाइसवीं चतुर्युगी है। तब से तेरह बार कलियुग आया और गया। यह कलियुग चौदहवाँ है। यह बात मैंने अपने परमपूज्य गुरु जी स्वामी श्री करपात्री जी महाराज द्वारा सुनी थी।

तुलसीकृत रामायण के विजया-टीकाकार श्री विजयानन्द तिवारी ने भी केदार-माहात्म्य में लिखा है :—

"काशी के धार्मिक स्वरूप के विचार में तो यह काशी केवल पुण्य-क्षेत्र ही नहीं; अपितु भगवान् श्री विश्वनाथ जी का प्रत्यक्ष स्थावर स्वरूप ही है। इनके दर्शन एवं गङ्गास्नान करने से पाप क्षीण होते हैं और पुण्य का उदय होता है। भागीरथी (गङ्गा) प्राणियों के पापों का नाश करने के लिए काशी में उत्तरवाहिनी होकर बहती हैं। ये काशी कभी भी नहीं छोड़ती हैं। गङ्गाजल विश्वनाथ (शङ्कर जी) को अत्यन्त प्रिय है। इसलिए शिव-पूजन में सबसे उत्तम सामग्री गङ्गाजल ही माना गया है"।

इस वाराह कल्प में सबसे प्राचीन वैदिक-वाङ्मय 'ऋग्वेद' माना जाता है। 'ऋग्वेद' में भी काशी-माहात्म्य का वर्णन है, अतः 'काशी' अनादि है।

क्षेत्रस्य च प्रवक्ष्यामि गुणान् गुणवतां वरे !।
याञ्छ्रुत्वा सर्वपापेभ्यो मुच्यते नात्र संशयः[1] ॥

भगवान् शङ्कर कहते हैं—हे वरानने ! काशी के दिव्य गुणों तथा काशी-माहात्म्य का वर्णन करता हूँ, जिनके श्रवण मात्र से समस्त पापों से मुक्ति होती है।

शृणुयादेकमपि य आख्यानं काशिखण्डजम्।
श्रुतानि तेन सर्वाणि धर्मशास्त्राण्यसंशयम्[2] ॥

जिसने काशी-माहात्म्य के एक आख्यान का भी श्रवण कर लिया, वह समस्त धर्मशास्त्रों का श्रवण कर लिया, इसमें कोई सन्देह नहीं है।

श्रुताश्च सर्वधर्मास्तैर्महापुण्यैकराशिभिः।
श्रुतं यैः स्थिरचेतोभिः काशीमाहात्म्यमुत्तमम्[3] ॥

महापुण्यात्मा जन स्थिरचित्त से यदि काशी-माहात्म्य का श्रवण करते हैं, तो समझना चाहिए कि उन्होंने समस्त धार्मिक ग्रन्थों का श्रवण कर लिया है।

श्रुतिस्मृतिपुराणानां महासारश्रुतो महान्।
भवन्तोऽपि महाप्राज्ञाः काशीमाहात्म्यवेदिनः ॥
श्रयन्तु काशीं नियतं सर्वपापापनुत्तये[4] ॥

---

१. मत्स्यपुराण, अ० १८३; २. का० ख० १००।११५।
३. वही—१००।११३; ४. का० ख० १२।२१३।

आप लोगों ने श्रुति, स्मृति तथा पुराणों के महान् सार को सुन लिया है। आप सभी लोग महाबुद्धिमान् होने के साथ-साथ काशी के माहात्म्य-वेत्ता भी हैं। अतः आप सभी पापों की निवृत्ति के निमित्त निरन्तर ही काशी में वास करें।

स्थितिः काश्यां येषां परमसुखसन्तानसुखिनाम् ।
सतां सङ्गान्नित्यं हरिहरकथास्वादनजुषाम्[1] ॥

जो लोग काशीवास कर रहे हैं, उन्हें नाना प्रकार के सुख प्राप्त हो रहे हैं, नित्य सन्तों का सत्सङ्ग मिल रहा है तथा भगवान् शिव एवं विष्णु की कथाओं का आस्वादन प्राप्त हो रहा है। यह सब पुण्यात्माओं को ही प्राप्त होता है।

सतां सङ्गाद् धर्मकथा भवन्ति हितकारिकाः ।
महापुण्यप्रदा तत्र भोगमोक्षैकशेवधिः[2] ॥

सन्तों की सङ्गति से प्राप्त धार्मिक कथाएँ कल्याणकारक होती हैं, साथ ही अत्यधिक पुण्य प्राप्त होता है। काशी भोग और मोक्ष की खान है, अर्थात् काशी भोग तथा मोक्ष प्रदान करती है।

यत्पुण्यं लभ्यते मर्त्यैस्तदेतच्छ्रवणाद् ध्रुवम् ।
श्रवणादस्य खण्डस्य लभते तन्न संशयः[3] ॥

दान और यज्ञ करने से जो पुण्य प्राप्त होता है, वही पुण्य काशी-माहात्म्य के श्रवण से प्राप्त होता है, इसमें कोई सन्देह नहीं है।

काशीखण्डस्य श्रवणात् तत्स्यात्सुष्ठु न संशयः ।
दत्वा दानानि सर्वाणि कृत्वा यज्ञाननेकशः[4] ॥

काशी-माहात्म्य के श्रवण से समस्त दान तथा अनेक यज्ञ करने का फल प्राप्त होता है, इसमें सन्देह नहीं।

शृण्वन्तु सर्वे वक्ष्यामि काशीमाहात्म्यमद्भुतम् ।
न चात्र विस्मयः कार्यः काशीं प्रति कदाचन[5] ॥

सभी लोग सुनें, मैं काशी का अद्भुत माहात्म्य वर्णन कर रहा हूँ। इसमें आश्चर्य की कोई बात नहीं है, क्योंकि यह काशी सर्वश्रेष्ठ है।

---

१. का० रह० २१।९२; २. वही—१२।१२०, १३०; ३. का० ख० १००।१०९। ४. वही—१००।१०७-१०८; ५. का० रह० ९।१०९।

का० मा०—३

काशीकथासंश्रवणेन सम्यग् मनःशुद्धिर्जायते वै नराणाम् ।
स्थितिप्रकारं परमं वेत्ति सम्यक् स्थित्वा यथावत्प्रविमुच्यते भयात्[1] ।।

काशी की कथा (माहात्म्य) सुनने से मनुष्यों के मन की भलीभाँति शुद्धि हो जाती है। काशी में रहने का ढंग मालूम हो जाता है तथा विधिवत् काशी में रहते हुए भय से विमुक्त हो जाता है।

सहस्रकार्याणि विहाय काश्यां काशीगुणान् संशृणुयाद्यथावत् ।
क्षेत्रस्वरूपं प्रतिबुध्यते यैः श्रद्धा रतिः पापनिवृत्तिरुद्भवेत्[2] ।।

सहस्रों कार्यों को छोड़कर काशी में निवास करते हुए विधिवत् काशी के गुणों को सुनना चाहिए। जो काशी-क्षेत्र के स्वरूप को भलीभाँति समझ लेते हैं, उनको काशी के प्रति श्रद्धा तथा प्रेम हो जाता है एवं उन्हें पापों से मुक्ति मिल जाती है।

कल्याणः प्राप कल्याणं काशीमरणमात्मनः ।
निस्तीर्णो दानबलतः काश्यां काशीकथाश्रयः[3] ।।

काशी में मरने से अपना कल्याण होता है, अतः उसे (काशी को) प्राप्त करना चाहिए। काशी में रहकर काशी का माहात्म्य सुनते हुए दान देने वाला व्यक्ति (दान के बल से) मुक्त हो जाता है।

य इमां शृणुयान्नित्यं कथां पापप्रणाशिनीम् ।
त्यक्तपापो विशुद्धात्मा रुद्रसामीप्यमाप्नुयात्[4] ।।

जो इस पापनाशिनी काशी की कथा को नित्य सुनता है, उसके पाप छूट जाते हैं, आत्मा निर्मल हो जाती है और वह व्यक्ति रुद्र की सामीप्य मुक्ति प्राप्त करता है।

श्रवणेन परा सिद्धिः श्रवणेन परं सुखम् ।
श्रवणेन परं ज्ञानं धर्मादिः श्रवणेन च ।।

काशी में वेद-पुराणादि की कथा सुनने से सिद्धि, सर्वश्रेष्ठ सुख, सर्वश्रेष्ठ ज्ञान तथा धर्म आदि की प्राप्ति होती है और धर्म द्वारा मुक्ति प्राप्त होती है।

---

१. का० रह० ६।५६; २. वही—६।५५ ।
३. वही—२५।१०८; ४. पद्मपु० ३५।४९ ।

महिमानं महाप्राज्ञ! सर्वतीर्थोत्तमोत्तमम् ।
श्रुत्वापि यं महाप्राज्ञो महापापैः प्रमुच्यते[1] ।।

बिन्दुमाधव श्रीविष्णु जी से कहते हैं—हे महाप्राज्ञ ! सभी तीर्थों से उत्तमोत्तम काशी की महिमा है। काशीमाहात्म्य सुनने वाले स्त्री-पुरुष सम्पूर्ण महापापों से वञ्चित हो जाते हैं।

शृण्वन्तु सुविचित्रार्थां कथां शुद्धिविधायिनीम्[2] ।।
प्राह काशीकथां दिव्यां मुनीनामभिशृण्वताम्[3] ।।

काशी के माहात्म्य में नाना प्रकार के विचित्र वर्णन हैं तथा काशी का माहात्म्य मानव को पवित्र कर देता है।

काशी के माहात्म्य की कथा मनुष्य में दिव्य गुणों का सन्निवेश कर देती है।

काश्यां पापकृतो यो हि श्रुत्वा काशीकथामृतम् ।
पश्चात्तापेन संयुक्तो भवानीं भावयेद्वशी[4] ।।

काशी में रहकर भी जो पाप करने वाले हैं, वे भी काशी के माहात्म्यरूपी कथामृत का पान कर पश्चात्ताप करते हुए भवानी के भक्त बनकर पापमुक्त हो जाते हैं।

काशीकथामृतरसं पिबतां किमलं भवेत्[5] ।।

काशी के कथारूपी अमृत-रस का पान करने वालों को और क्या अच्छा लग सकता है ?

श्लोकार्द्धं श्लोकपादं वा नित्यं ये काशिकामृतम् ।
पिबन्ति ये महाभागास्तेषां भीतिर्न भैरवी[6] ।।

जो व्यक्ति काशीमाहात्म्य का आधा श्लोक, अर्थात् दो पाद अथवा एक पाद नित्य सुनते या कहते हैं, ऐसे भाग्यशाली पुरुषों को यम से भय कौन कहे, काशी में मरने से भैरवी यातना भी नहीं भोगनी पड़ती।

---

१. का० ख० ६०।१४२; २. का० रह० २५।१६; ३. वही—२१।२।
४. वही—२०।१२२; ५. वही—१७।६; ६. वही—२६।७८।

महापातकयुक्तोऽपि शृणुयाद्यः कथामृतम् ।
स मुक्तो मुक्तिमाप्नोति पुण्यसम्भारदुर्लभाम्[१] ॥

महापातक से युक्त मनुष्य भी यदि काशी-माहात्म्य की कथा का श्रवण करता है, तो वह पुण्याधिक्य से भी न प्राप्त होने वाली मुक्ति को प्राप्त करता है।

श्रुत्वा धीमान् कथां पुण्यां पुनस्तद्गतमानसः ।
शुभबुद्धिमवाप्नोति पापैरपि विमुच्यते[२] ॥

बुद्धिमान् व्यक्ति इस पुण्यदायक काशी की कथा को सुनकर पुनः उसका मनन करता हुआ शुभ बुद्धि को प्राप्त करता है तथा सभी पापों से निर्मुक्त हो जाता है।

काश्यामागत्य सततं कथाश्रवणतत्परः ।
श्रद्धां बुद्धिं परां प्राप्य महाघौघविनाशिनीम्[३] ॥

काशी में आकर जो सदा भगवत्कथा (काशी-माहात्म्य) का श्रवण करता है, वह महापातकनाशिनी श्रेष्ठ श्रद्धा, बुद्धि को प्राप्त करता है।

प्रवर्त्तते काशिकायां मिलत्यात्मा जनार्दनः ।
सर्वे शृण्वन्ति सद्वृन्दे स्थित्वा काशिकथां मुहुः ॥
कथन्न साक्षाद्भवति भगवान् मधुसूदनः[४] ॥

काशी के माहात्म्य की कथा को सुनने के लिए सभी के बीच में स्वयं भगवान् मधुसूदन भी उपस्थित रहते हैं। अतः कथा-श्रवण के साथ-साथ उनका साक्षात्कार भी सभी को प्राप्त हो जाता है।

सूतः काशीकथां श्रुत्वा येऽलं बुद्धिमुपासते ।
तेऽलं सुखाय मोक्षाय धर्माय हिं गुणसंयुताः[५] ॥

जो लोग काशी के माहात्म्य की कथा सुनकर अपनी बुद्धि से ज्ञान प्राप्त करते हैं, वे गुणयुंक्त होकर अत्यधिक धर्म, सुख एवं अन्त में मोक्ष प्राप्त कर लेते हैं।

---

१. ब्रह्मवैवर्तपुराण; २. का० ख० ८०।८५; ३. का० रह० १९।७३।
४. वही—१९।२६; ५. वही—२२।१।

शृण्वन्तु मुनयः सर्वे कथां सर्वाङ्गमाश्रिताम् ।
ममापि परमानन्ददायिनीं दुःखनाशिनीम्[1] ॥

हे मुनियों ! आप सभी लोग सम्पूर्ण वेद-वेदाङ्ग आश्रित काशी के माहात्म्य की कथा का श्रवण करें, जो परम दुःखशामक होने के साथ ही मुझको भी परमानन्द-दायक है ।

काश्यां परां कथामेतां गङ्गामाहात्म्यसंयुताम् ।
शृणोति श्रावयति यः सर्वपापैः प्रमुच्यते[2] ॥

गङ्गा जी के माहात्म्य से संयुक्त काशी की इस उत्कृष्ट कथा को जो सुनता है अथवा सुनाता है, वह सभी पापों से मुक्त हो जाता है ।

काश्यामेवं ये मनुष्या वसन्ति ते वै काश्याः प्राप्नुवते सुखं स्वम् ।
स्नानं दानं गुर्वर्चनं च नित्यं भक्त्या कुर्वतां कुत्र बन्धः[3] ॥

जो मनुष्य काशी में निवास करते हैं, वे निश्चित ही सुख प्राप्त करते हैं। काशी में भक्तिपूर्वक गङ्गास्नान, दान एवं गुरु का पूजन करने वाले मनुष्य बन्धनमुक्त हो जाते हैं, अर्थात् उन्हें मोक्ष प्राप्त हो जाता है ।

स सदा काशिमाहात्म्यश्रवणसक्तमानसः ।
निर्विघ्नकामः सततं काश्यां वाससुखोऽन्वहम्[4] ॥

जो काशी के माहात्म्य को सुनने में मन लगाये हुए हैं, उनको इच्छाएँ पूर्ण तथा निर्बाध हो जाती हैं एवं वे निरन्तर सुखपूर्वक काशीवास करते रहते हैं ।

धर्मान्तरं शक्त्यनुसारतो ये कुर्वन्त्यवश्यं श्रवणं सुसेवते ।
ते काशिकायामपराधहीना भवन्ति नित्यं श्रवणप्रधानाः[5] ॥

जो मनुष्य धर्मान्तरों में शक्त्यनुसार आस्था रखता हुआ काशीमाहात्म्य का श्रवण करते हुए काशीवास करता है, वह सभी अपराधों से रहित हो जाता है ।

त्वद्भक्तिकाशिवासाभ्यां रहितः पापकर्मणा ।
सत्सङ्गश्रवणाद्यैश्च कालो गच्छतु नः सदा ॥

हे भगवन् ! हमारा समय आपकी भक्ति, काशीवास तथा सत्सङ्ग-श्रवणादि कार्यों में ही व्यतीत हो एवं पापकर्मों से रहित हो ।

---

१. का० रह० २४।२; २. वही—२१।१२२; ३. वही—२४।१० ।
४. वही -२४।२६; ५. वही—२४।११ ।

ये तु व्याकुलचित्तदेहवचसोऽसत्सङ्गयुक्ताः परम् ।
तेषां कुत्र सुखं मृता यान्त्येव भोगाब्तु[1] ॥

जो मनुष्य चित्त, देह एवं वाणी से व्याकुल हैं और सत्सङ्ग से युक्त हैं, उन्हें सर्वदा सुख प्राप्त होता है तथा वे संसार का भोग कर मरणोपरान्त शिवपद को प्राप्त करते हैं, ऐसी काशी की महिमा है।

सूतास्माभिः श्रुताः पुण्याः कथाः काश्याः सुदुर्लभाः ।
पुरीणां सङ्गमो यत्र तत्र मोक्षो न संशयः[2] ॥

श्रीशौनक जो कहते हैं—हे सूत ! हम लोगों ने अत्यन्त दुर्लभ तथा पवित्र काशी की कथा सुनी। जहाँ समस्त पुरियों का सङ्गम है, ऐसी काशी में मोक्ष प्राप्त होता है, इसमें कोई सन्देह नहीं।

ततो धर्मकथा स्पष्टा पुण्यदा पापनाशिनो ।
भुज्यते चान्नमस्माभिः काश्या वार्धुषिकस्य च[3] ॥

यह स्पष्ट कथा है कि सर्वविध पुण्य देने वाली तथा पापनाशिनी काशी में (अशक्य दशा में) वार्धुषिक (घोर पापिष्ठ) का अन्न भी खाकर काशीवास करना चाहिए, अर्थात् अत्यन्त विपरोत परिस्थितियों में भी काशीवास अवश्य करना चाहिए।

तस्याः श्रवणजात् पुण्यात्प्राप्नुमस्त्वद्य काशिकाम्[4] ॥

काशो-माहात्म्य की कथा के श्रवण करने से जो पुण्य हुआ, उस पुण्य के द्वारा मुझे काशो को प्राप्ति हुई, अर्थात् काशो-माहात्म्य-श्रवण से ही काशी-प्राप्ति होती है।

सूत जीव महाबुद्धे व्यासशिष्य हरिप्रिय ।
यत्त्वा काशिमाहात्म्यं श्राविता ऋषयोऽमलाः ॥
धर्मदानव्रतधर्मसाधनैरन्यैश्च यागादिभिराप्यते यत् ।
पुण्यं भवेत्तेन दृढा मतिः सतां काशीकथाश्रवणे मानवानाम्[5] ॥

हे सूत ! जीव ! महाबुद्धे ! व्यासशिष्य ! हरिप्रिय ! निर्मल ऋषियों को जो आपने काशी-माहात्म्य सुनाया, वह धर्म, दान, व्रत तथा अन्य यज्ञादि साधनों से प्राप्य है। उक्त साधनों के पुण्य से ही काशी-माहात्म्य की कथा सुनने में मानवों की बुद्धि दृढ़ होतो है।

---

१. का० रह० २३।१०५ ; २. वही—१३।५७; ३. वही—१२।७२, ८० ।
४. का० ख० २।१११; ५. का० रह० २६।७५-७६ ।

गङ्गां विहायाशुचिगर्तपापो धिग्धिक्कृतः साधुजनैर्महात्मा ।
भवत्यवश्यं सुकृतैर्विहीनो मृतः स चेत् काशिकायां पिशाचः[1] ॥

गङ्गा को छोड़कर अपवित्र गर्त में पड़ने वाले और साधुओं से गर्हित (निन्दित) महात्मा भी धिक्कार प्राप्त करते हैं। वे निश्चित रूप से पुण्यों से हीन होकर मरते हैं और काशी में पिशाच योनि प्राप्त करते हैं।

काशीकथाश्रवणमङ्गलपूर्णमूर्त्ति-
मूर्तः स एव भगवान् शिवशान्तिमूर्त्तिः ।
ते पापराशिमपहृत्य परं प्रियस्य
शुद्धातिशुद्धसुखरूपपदं भजन्ते[2] ॥

काशी की कथा का श्रवण ही मङ्गल की पूर्ण मूर्त्ति तथा भगवान् शिव की शान्त मूर्त्ति है। इस कथा को सुनने वाले पापराशि को छोड़कर परमप्रिय शुद्धातिशुद्ध सुखरूप पद को प्राप्त करते हैं।

काशीमाहात्म्यसंयुक्तं शृण्वतां सर्वयात्रिणाम् ।
काशीकृतानां पापानां यातनां भैरवीं पराम्[3] ॥

काशी-क्षेत्र का माहात्म्य श्रवण करने पर भी जो यात्री पाप-कर्म करते हैं, उन्हें भयङ्कर भैरवी यातना भुगतनी पड़ती है।

शान्तव्रतस्ततः शम्भुं नमस्कृत्य पुनः पुनः ।
कथयामास सुकथां काशीवासिजनप्रियाम्[4] ॥

भगवान् शम्भु को बारम्बार प्रणाम कर शान्तचित्त एवं व्रतस्थ होकर श्रीसूत जी ने काशीवासियों को प्रिय लगने वाली इस शुभ कथा को सुनाया।

सूत ! स्कान्दमिदं श्रुत्वा काशीमाहात्म्यमुत्तमम् ।
नरो न निरयं याति कृत्वाऽप्यघसहस्रकम्[5] ॥

हे सूत जी ! स्कन्दपुराणोक्त इस पवित्र काशी-माहात्म्य को सुनकर मनुष्य नरक को नहीं भोगता, भले ही वह हजारों पाप किया हो।

---

१. का० र० ६।६३; २. वही—३।८४; ३. वही—९।१२३।
४. वही—१२।१३१; ५. का० ख० १००।१०६।

काशीति च विदुर्वेदास्तत्र मुक्तिः प्रतिष्ठिता ।
कृते त्रिशूलवज्ज्ञेयं त्रेतायां चक्रवत्तथा ॥
द्वापरे तु रथाकारं शङ्खाकारं कलौ युगे ॥

वेदों में कहा गया है कि गङ्गा से देहलीविनायक तक तथा अस्सी और वरुणा के बीच में मुक्ति-भूमि स्थित है, जिसे 'काशी' कहते हैं।

'काशी' सतयुग में त्रिशूल के आकार में, त्रेतायुग में चक्र के आकार में, द्वापरयुग में रथ के आकार में और कलियुग में शंख के आकार में रहती है। यहाँ समग्र मनोकामनाओं की प्राप्ति होती है।

'काशी' में 'शिव-शिव' नाम जपने से मन, वाणी एवं शरीर से किये हुए पापों का प्रायश्चित्त हो जाता है और पापों का नाश होता है। अतः सभी भक्तों को शिव जी की उपासना अवश्य करनी चाहिए। दर्शन, पूजन और उपासना करने से भक्ति और ज्ञान की प्राप्ति भी होती है।

वरणा चाप्यसिश्चैव द्वे नद्यौ सुरवल्लभे ।
अन्तराले तयोः क्षेत्रं भूमावपि विशेषतः ॥

पञ्चक्रोशप्रमाणं तु क्षेत्रं दत्तं मया तव ।
क्षेत्रमध्ये यदा गङ्गा गमिष्यति सरित्पतिम्[1] ॥

वरणा और असी, ये दोनों नदियाँ देवताओं तक को अतिप्रिय हैं। इन दोनों नदियों के बीच की भूमि में यह काशी-क्षेत्र है। मैंने तुमसे इसका (काशी का) प्रमाण पञ्चक्रोशात्मक (पाँच कोस) कहा है। इस क्षेत्र के मध्य से होकर गङ्गा जी समुद्र में जायेंगी।

मुखं शङ्खस्य गङ्गायां पृष्ठे देहलिसन्निधौ ।
वामपार्श्वस्थितं तोयं रामाख्यं वरणाभिधम्[2] ॥

भगवान् शिव काशी का वर्णन करते हुए कहते हैं कि देहलीविनायक के पृष्ठभाग में स्थित शङ्ख का मुख गङ्गा जी में है, जो कि शङ्खतीर्थ के नाम से प्रसिद्ध है। यही स्थान काशी की पश्चिम सीमा है। देहलीविनायक के वामभाग में रामेश्वर-तीर्थ वरणा के जल में है, अर्थात् शङ्खतीर्थ से रामेश्वर-तीर्थ तक 'काशी' की सीमा है।

---

१. ब्र० वै० पु० तीर्थप्रकाश ; २. नारद-पुराण।

अविमुक्तं महत्क्षेत्रं पञ्चक्रोशपरीमितम् ।
ज्योतिर्लिङ्गं तदेकं हि ज्ञेयं विश्वेश्वराभिधम्[1] ।।

पञ्चक्रोश परिमाण जो अविमुक्त (काशी) नामक महाक्षेत्र है, उसे एकमात्र विश्वेश्वर (विश्वनाथ) संज्ञक ज्योतिर्लिङ्गस्वरूप मानना चाहिए।

काशी चैतन्यरूप है। इसलिए प्रलयकाल में भी काशी नष्ट नहीं होती।

छत्राकारं तु किं ज्योतिर्जलादूर्ध्वं प्रकाशते ।
निमग्नायां धरिण्यां तु न निमज्जति तत्कथम् ।।

सदाशिवो महादेवो लिङ्गरूपधरः प्रभुः ।
मया स्मृतो लोकमुक्त्यै प्रादेशपरिमाणतः ।।

लिङ्गरूपधरः शम्भुर्हृदयाद् बहिरागतः ।
महतीं वृद्धिमासाद्य पञ्चक्रोशात्मकोऽभवत्[2] ।।

ऋषिगण वे, प्रलय के समय में श्री सनातन महाविष्णु से पूछते हैं—"हे भगवन्! यह छत्र के आकार की ज्योति के रूप में जल के ऊपर क्या प्रकाशित है, जो प्रलयकाल में पृथ्वी के डूबने पर भी नहीं डूबती"? इस प्रश्न के उत्तर में श्री महाविष्णु जी कहते हैं—"हे ऋषियों! लिङ्गरूपधारी सदाशिव महादेव का हमने तीनों लोकों के कल्याण के लिए (आदि में) स्मरण किया था। तब वे शम्भु प्रदेश भर के लिङ्ग के रूप में हमारे हृदय से बाहर आए और पुनः अतिशय वृद्धि को प्राप्त कर पञ्चक्रोशात्मक (काशी) हो गये। यह वही पञ्चक्रोशात्मक ज्योतिर्लिङ्ग (काशी) है"।

विविध पुराणों के वर्णनानुसार वाराणसी (काशी) की सीमा पूर्व में आधी गङ्गा जी तक, पश्चिम में चितईपुर से मडुवाडीह–लहरतारा–वाराणसी रेलवे स्टेशन के पश्चिमी गेट की सड़क से वरणा-पुल तक तथा दक्षिण में असी-नदी तक और उत्तर में वरणा नदी तक है।

धर्मार्थकाममोक्षाख्यं पुरुषार्थचतुष्टयम् ।
अखण्डं हि यथा काश्यां न तथान्यत्र कुत्रचित्[3] ।।

पराशर ऋषि सूत जी से कहते हैं कि धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष रूपी चारों पुरुषार्थ काशी में जैसे अखण्ड हैं, वैसे अन्यत्र कहीं भी नहीं हैं।

---

१. का० ख० २६।१३१ ; २. का० रह० २।८९,१०८; ३. का० ख० ३।८५।

धर्मार्थकाममोक्षाणां यद्यत्रास्ति मनोरथः ।
तदा वाराणसीं याहि याहि त्रैलोक्यपावनीम् ।।
सर्वकामफलप्राप्तिस्तदैव स्याद् ध्रुवं नृणाम्[1] ।।

तामस मुनि श्री शङ्कर जी से कहते हैं कि यदि इस जन्म में धर्म, अर्थ, काम एवं मोक्ष रूपी चारों पुरुषार्थों में से किसी एक भी पुरुषार्थ या चारों पुरुषार्थों की इच्छा हो, तो त्रैलोक्य-पावनी वाराणसी (काशी) में जाओ। काशी में प्रवेश करते ही सभी मनोरथों की प्राप्ति हो जाती है, यह सुनिश्चित है।

देवेषु च यथा शम्भुस्तीर्थमुख्येषु काशिका ।
व्रतेष्वेकादशी मुख्या पुराणेषु तथा त्विदम्[2] ।।

देवों में शम्भु, तीर्थों में काशी, व्रतों में एकादशी और पुराणों में स्कन्दपुराण मुख्य माने जाते हैं।

भूमिष्ठाऽपि न यात्र भूस्त्रिदिवतोऽप्युच्चैरधस्थापि या
या बद्धा भुवि मुक्तिदा स्युरमृतं यस्यां मृता जन्तवः ।
या नित्यं त्रिजगत्पवित्रतटिनीतीरे सुरैः सेव्यते
सा काशी त्रिपुरारिराजनगरी पायादपायाज्जगत्[3] ।।

भूमि पर स्थित होने पर भी जो नगरी भूमि पर नहीं है, तीनों लोक से भिन्न है, जो भूलोक में मुक्ति देने वाली है, जिस नगरी में मरने वाले समग्र प्राणी अमरत्व प्राप्त करते हैं, जो नित्य तीनों जगत् को पवित्र करने वाली गङ्गा नदी के तीर पर देवताओं से सेवित है, वह 'काशी' त्रिपुरारिराज (भगवान् शङ्कर) की नगरी है। वह 'काशी' जगत् को विनाश होने से बचाती है।

देवि किं बहुनोक्तेन चतुर्वर्गप्रदा भुवि ।
काशीं विना जगत्यन्या नास्ति नास्ति कलौ ध्रुवम्[4] ।।

भगवान् विश्वनाथ जी कहते हैं कि हे देवि ! अधिक क्या कहें, काशी धर्म, अर्थ, काम एवं मोक्ष रूपी चारों पुरुषार्थों को देने वाली है। कलियुग में काशी के अलावा जगत् में कोई दूसरी पवित्र नगरी नहीं है।

---

१. का० ख० ८६।४४; २. का० रह० २६।८० ; ३. का० ख० १।२ ।
४. काशीमूलरहस्य ।

रत्नं सुवर्णे खचितं यथा भवेत्
तथा पृथिव्यां खचिता हि काशिका।
न काशिका भूमिमयी कदाचित्
ततो न मज्जत्यसत्कृतीयत्[1]॥

जिस तरह सुवर्ण में रत्न जटित होता है, उसी तरह पृथ्वी में काशी जटित है। काशी कभी भी भूमिमयी नहीं है। इसलिये कभी भी कुशल पुरुष यहाँ नहीं डूबते हैं।

शुक्लपक्षे यथा चन्द्रः कलया कलयैधते।
एवं काश्यां निवसतां धर्मराशिः पदे पदे[2]॥

जैसे शुक्लपक्ष में चन्द्रमा कला-कला बढ़ता है, उसी प्रकार से काशी में रहने वालों की धर्मराशि भी पग-पग पर बढ़ा करती है।

श्रद्धाबीजो विप्रपादाम्बुसिक्तः शाखाविद्यास्ताश्चतस्रो दशापि।
पुष्पाण्यर्था द्वे फले स्थूलसूक्ष्मे मोक्षःकामो धर्मवृक्षोऽयमीड्यः[3]॥

धर्मरूपी वृक्ष सब लोगों को सेवनीय है। इस धर्म-वृक्ष का बीज श्रद्धा है और वह ब्राह्मणों के चरणोदक से सींचा गया है। इसी की शाखा के रूप में चतुर्दश विद्याएँ प्रसिद्ध हैं, इसके पुष्प न्यायपूर्वक उपार्जित धन हैं एवं इस वृक्ष के स्थूल और सूक्ष्म, काम तथा मोक्ष दोनों ही फल हैं, अर्थात् धर्मरूपी वृक्ष के द्वारा मोक्ष-प्राप्ति के लिए काशीवास अवश्य करना चाहिए।

तस्मात्काश्यां देवगेहे स्थितानां पुण्यकारिणाम्।
अपराधसहस्राणि क्षमते धूर्जटिर्घृणी[4]॥

पुण्य करने वाले लोग जो काशी के देवमन्दिरों में रहते हैं, उनके हजारों अपराधों को भगवान् शिव क्षमा कर देते हैं।

अविमुक्तस्य माहात्म्यं षड्भिर्वक्त्रैः कथं मया।
वक्तुं शक्यं न शक्नोति सहस्रास्योऽपि यत्परम्[5]॥

स्वामिकार्तिकेय कहते हैं कि (भला) जिस अविमुक्त-क्षेत्र (काशी) का माहात्म्य सहस्रमुख अनन्तदेव (शेषनाग) भी यथार्थरूप से वर्णन नहीं कर सकते, उसे मैं इन छः मुखों से कैसे कह सकता हूँ।

१. का० खं० ३।९६; २. का० खं० ३।९४; ३. वही० ३।९५।
४. अग्निपुराण; ५. का० खं० २५।७८।

काश्यान्तु कृत्यापुण्या वै मल्लोकं विशते हरेः ।
काश्यां विसृष्टदेहा ये संयुज्यन्ते शिवेन ते[1] ॥

काशी में सकाम पुण्य करने वाले मेरे लोक या विष्णु के लोक को प्राप्त होते हैं और जो लोग काशी में देहत्याग करते हैं, वे शिव जी में मिल जाते हैं।

उवास वत्सरं कृष्णः काश्यां पाशुपतैर्युतः ।
भस्मोद्धूलितसर्वाङ्गो रुद्राध्ययनतत्परः[2] ॥

मध्यमेश्वर के निकट भगवान् कृष्ण का स्थान है। एक समय भगवान् कृष्ण ने पाशुपतों के साथ भस्म धारण करके रुद्राष्टाध्यायी का पाठ करते हुये एक वर्ष पर्यन्त काशी में निवास किया था।

वैष्णवानां यथा शम्भुः पुराणानामिदं तथा ।
क्षेत्राणां चैव सर्वेषां तथा काशी ह्यनुत्तमा[3] ॥

जिस प्रकार वैष्णवों में भगवान् शङ्कर सर्वश्रेष्ठ हैं, पुराणों में जैसे श्रीमद्भागवत पुराण है, उसी प्रकार समग्र तीर्थक्षेत्रों में काशी सर्वश्रेष्ठ है।

भूर्लोके नैव संयुक्तमन्तरिक्षे शिवालयम् ।
अमुक्तास्तु न पश्यन्ति मुक्ताः पश्यन्ति चेतसा[4] ॥

यह काशी भूलोक तथा अन्तरिक्ष से संलग्न नहीं है। इस काशी को अमुक्त लोग नहीं देख सकते, जो मुक्त हैं, वे ही चित्त से देख पाते हैं।

ब्रह्मचर्यव्रतोपेताः सिद्धा वेदान्तकोविदाः ।
आदेहपतनाद्यावत् तत्क्षेत्रं यो न मुञ्चति[5] ॥

ब्रह्मचर्यव्रतयुक्त सिद्ध जन तथा वेदान्तशास्त्र में निष्णात जन शरीर-त्याग पर्यन्त इस काशी-क्षेत्र का त्याग नहीं करते।

यज्ञैर्देवत्वमापन्ना गीर्वाणा वासवादयः ।
यज्ञैर्दानैस्तपोभिश्च तेभ्योऽप्याधिक्यमस्ति मे[6] ॥

इन्द्रादि देवतागण यज्ञ के द्वारा देवत्व प्राप्त किये हैं। 'काशी' तो यज्ञ, दान एवं तप से भी अधिक फलदायिनी है।

---

१. काशी-केदारमाहात्म्य, १३।६९; २. पद्मपु० स्वर्गखण्ड, ३६।३।
३. श्रीमद्भागवतपु०—१२।१३।१६; ४. मत्स्यपु० १८२।७।
५. मत्स्यपु० १८२।८; ६. का० ख० ५८।१६८।

काशीं त्विति न जानन्ति महामोहनभूरियम् ।
इति सम्यग्विजानामि काशि ! त्वां मोहनौषधम्[1] ॥

काशी की भूमि महामोहिनी है, इसे लोग नहीं जानते । शङ्कर जी कहते हैं कि यह काशी मोहनरूप औषधि है, इसे मैं भली-भाँति जानता हूँ ।

काशी सर्वाऽपि विश्वेशरूपिणी नात्र संशयः ।
आश्चर्यकारि परमं काशी भक्तिप्रवर्द्धनम् ॥

समग्र काशी शिवस्वरूपा है, इसमें कोई संशय नहीं । यह काशी भुक्ति और मुक्ति की प्रदात्री, परम आश्चर्यकारक एवं भक्ति की वृद्धि करने वाली है ।

अविलुप्तब्रह्मचर्यो विश्वेशानुग्रहाद् भवेत् ।
अनुग्रहश्च वैश्वेशः काशीप्राप्तिकरः परः ॥
काशीप्राप्त्या भवेज्ज्ञानं ज्ञानान्निर्वाणमृच्छति ।
निर्वाणार्थं प्रयत्नो हि सदाचारस्य धीमताम्[2] ॥

विश्वेश्वर के अनुग्रह से ही ब्रह्मचर्य विचलित नहीं होता और वही विश्वेश्वर का परम अनुग्रह काशी-प्राप्ति का कारण है ।

काशी की प्राप्ति होने से ज्ञान होता है और ज्ञान उत्पन्न होने पर निर्वाण मिल जाता है । इसी निर्वाणपद की प्राप्ति के लिए बुद्धिमानों को सदाचार के परिपालन का प्रयत्न करते रहना चाहिए ।

अविमुक्तं महाक्षेत्रं परं निर्वाणकारणम् ।
क्षेत्राणां परमं क्षेत्रं मङ्गलानां च मङ्गलम्[3] ॥

अविमुक्त महाक्षेत्र (काशी तो) परम निर्वाण का कारण है । समस्त क्षेत्रों में परम क्षेत्र और मङ्गलों का भी मङ्गलस्वरूप है ।

सद्यस्तारयते लोकान् भैरवी-यातनां विना ॥
मा भूदत्र प्रजानामतितरमसहा भैरवी-यातना मे ।
गेहेऽन्तर्भूप्रदेशे विघटितवपुषां तारकस्योपदेशात्[4] ॥

यह काशी भैरवी यातना के बिना शीघ्र ही लोगों को तार देती है । इस काशी में प्रजाओं को अतिदुःसह भैरवी यातना नहीं होती । यहाँ अन्तर्गृही क्षेत्र में तारक-मन्त्र के उपदेश से शरीर-त्याग करने वालों को भैरवी यातना कथमपि नहीं प्राप्त होती ।

---

१. का० ख० ५३।४५; २. वही—३६।७९-८० ; ३. वही—३५।१ ।
४. ब्रह्मवैवर्तपु० काशी-केदार-माहात्म्य ।

या मे मुक्तिपुरी काशी सर्वाभ्योऽपि गरीयसी ।
आधिपत्ये च तस्यास्ते कालराजः सदैव हि ।।

भगवान् विश्वनाथ जी कहते हैं कि समग्र मुक्तिपुरियों में मेरी काशी सर्वश्रेष्ठ पुरी है। इस काशीपुरी का आधिपत्य भगवान् कालराज सदैव करते रहते हैं।

विश्वेशप्रीणनार्थाय धनं निधनमेव वा ।
न्यायेन काश्यां यः कुर्यात् स धन्यः स च धर्मवित् ।।

योऽसौ विश्वेश्वरो देवः काशीपुर्यामुमे स्थितः ।
लिङ्गरूपधरः साक्षान्मम श्रेयास्पदं हि तत्[1] ।।

जो कोई विश्वेश्वर के प्रसन्नतार्थ काशी में धन अथवा निधन (मृत्यु) को न्यायपूर्वक (सम्पादन) करता है, वही धर्मज्ञ और परम धन्य है। उस काशीपुरी में जो विश्वेश्वरदेव लिङ्गरूप धारण कर साक्षात् बैठे हैं, वही मेरे परमश्रेय के आस्पद हैं।

श्रद्दधानो विधिस्नातः कृतसर्वोदकक्रियः ।
जपन् देवान् समभ्यर्च्य सर्वमन्त्रफलं लभेत् ।।
स्नात्वा मौनेन विश्वेशदर्शनान्नियतेन्द्रियः ।
सर्वव्रतकृतं श्रेयो लभेद्वाचंयमः शिवे[2] ।।

जो श्रद्धालुजन विधिपूर्वक स्नान के अनन्तर समस्त उदक-क्रियाओं को सम्पन्न कर काशी-क्षेत्र में जप करता हुआ देवताओं की पूजा करता है, वह समस्त मन्त्रों के जप का फल-लाभ करता है।

हे शिवे! जो कोई जितेन्द्रिय होकर काशी-क्षेत्र में मौनधारणपूर्वक विश्वेश्वर का दर्शन करता है, वह मानो सकल व्रत करने के पुण्य को प्राप्त करता है।

अल्पेन कालेन समस्तमेव सार्धं पुना रुद्रपिशाचरुद्रैः ।
भवप्रसादेन कृतोपदेशः पिशाचयोनेरपि मुक्तिमेति[3] ।।

काशी में जो पापी मरते हैं, उनको विश्वनाथ जी कृपा करके थोड़े समय में ही भयङ्कर रुद्रपिशाचों (ब्रह्मराक्षस आदि) के साथ तारक मन्त्र का उपदेश देते हैं, जिससे पिशाचयोनि से भी मुक्ति मिल जाती है।

---

१. का० ख० २६।१२९-१३०; २. वही—२६।१२२-१२३।
३. सनत्कुमार-संहिता, त्रि० से०, पृ० ३०१।

सर्वेभ्यः काशिसंस्थेभ्यो मोक्षभिक्षां प्रयच्छति ।
त्रिपुरारिः पुरद्वारि कदास्यां मोक्षभिक्षुकः[1] ॥

काशी में निवास करने वालों को मोक्ष-भिक्षा देने के लिए भगवान् त्रिपुरारि (विश्वनाथ जी) सदा प्रतीक्षा करते रहते हैं कि हमारे द्वार पर यह मोक्ष-भिक्षुक कब आयेगा और मैं कब मोक्ष की भिक्षा दूँगा ।

अमरा मरणं सर्वे वाञ्छन्तीह प्रसूतये ।
देवा मुनीन्द्रा राजानो वाञ्छन्त्यनुदिनं भुवि[2] ॥

देवतागण, मुनिलोग एवं राजा, सभी अपनी मृत्यु इसलिए चाहते हैं कि पुनः काशी में जन्म लेकर एवं काशी में शरीर-त्याग कर कैवल्य (मोक्ष-पद) की प्राप्ति कर सकें ।

हरः काशी हरः काशी काशी काशी हरो हरः ।
शिवः काशी शिवः काशी काशी काशी शिवः शिवः ॥

शिव ही काशी हैं, शिव ही काशी हैं, काशी ही शिव है, काशी ही शिव है, अर्थात् काशी और शिव में कोई भेद नहीं है । यह काशी परमकल्याणकारक है ।

विश्वेशानुगृहीतानां विच्छिन्नाखिलकर्मणाम् ।
भवेत्काशीं प्रति मतिर्नेतरेषां कदाचन[3] ॥

जिन पर श्रीविश्वनाथ जी की कृपा होती है और जिनके पापकर्म नष्ट हो चुके हैं, उन्हीं की रुचि काशी के प्रति होती है, उनसे भिन्न किसी अन्य की रुचि कथमपि काशी के प्रति नहीं हो सकती ।

न विमुक्तं मया यस्मादविमुक्तमिदं ततः ।
क्षेत्रं वाराणसी पुण्यं मुक्तिदं सम्भविष्यति ॥

भगवान् विश्वनाथ जी कहते हैं कि इस काशी को मैंने कभी नहीं छोड़ा, अतएव इसे अविमुक्त कहते हैं । वाराणसी नामक यह क्षेत्र परमपुण्यशाली एवं मोक्ष-प्रद भी होगा ।

---

१. लिङ्गपुराण ; २. काशी-मूलरहस्य ; ३. का० ख० ५०।१३० ।

अन्यक्षेत्रे कृतं पापं पुण्यक्षेत्रे विनश्यति ।
पुण्यक्षेत्रे कृतं पापं वाराणस्यां विनश्यति ।।
वाराणस्यां कृतं पापमन्तर्गेहे विनश्यति[1] ।।

अन्य क्षेत्र में किया गया पाप पवित्र क्षेत्र में नष्ट हो जाता है, पवित्र क्षेत्र में किया गया पाप वाराणसी में नष्ट हो जाता है और वाराणसी में किया गया पाप अन्तर्गृही यात्रा में नष्ट हो जाता है ।

दक्षिणे चोत्तरे चैव ह्ययने सर्वदा मया ।
क्रियते क्षेत्रदाक्षिण्यं भैरवस्य भयादपि[2] ।।

विवस्वान् (सूर्य) कहते हैं—मैं भगवान् भैरव के भय से दक्षिणायन एवं उत्तरायण में सदैव काशी-क्षेत्र (पञ्चक्रोशी) की प्रदक्षिणा किया करता हूँ ।

गङ्गोत्तरवहा काश्यां लिङ्गं विश्वेश्वरं मम ।
उभे विमुक्तिदे पुंसां प्राप्ये दानबलात्कलौ[3] ।।

भगवान् शङ्कर जी कहते हैं कि काशी में उत्तरवाहिनी गङ्गा और मेरा विश्वेश्वर लिङ्ग (बस) ये दोनों ही मुक्ति के दाता हैं; परन्तु कलियुग में तो ये दोनों दान के ही बल से प्राप्त हो सकते हैं ।

काशिका सकल-तीर्थ-सेविता
काशिका सकल-देव-पूजिता ।
काशिका सकल-शास्त्र-रूपिता
काशिका परम-पद-प्रकाशिका ।।

यह काशी समस्त तीर्थों से सेवित है, समस्त देवों से पूजित है, समस्त शास्त्रों में वर्णित है तथा यह काशी परम पद की प्रकाशिका है ।

महापातकिनो देवि ! ये तेभ्यः पापकृत्तमाः ।
वाराणसीं समासाद्य ते यान्ति परमां गतिम्[4] ।।

हे देवि ! जो महापातकी हैं तथा जो उनसे भी बढ़कर पातकी हैं, वे काशी (वाराणसी) प्राप्त कर परम गति प्राप्त करते हैं ।

---

१. ब्र० वै० पु० ; २. सनत्कुमार-संहिता ।
३. का० ख० ३२।१२६; ४. पद्मपु० ३३।५३ ।

परं गुह्यतमं क्षेत्रं मम वाराणसी पुरी।
सर्वेषामेव भूतानां संसारार्णवतारिणी[1] ॥

युधिष्ठिर की आकांक्षा पर नारद जी ने ईश्वर-देवी-संवाद से काशी-माहात्म्य के विषय में कहा—हे पार्वती ! मेरी काशी (वाराणसी) पुरी अत्यन्त गुप्त क्षेत्र है। यह संसार के समस्त जीवों को संसार-सागर से पार कराती है।

पुरीं वैश्वेश्वरीं प्राप्तो मनः स्वास्थ्यमवाप च।
ततः प्राप्य च तां काशीं तापसः क्वाप्यतर्कितम्[2] ॥

विश्वेश्वर की यह पुरी काशी मुझे प्राप्त हुई, अतः मन भी स्वस्थ हो गया। इस काशी में कुछ अतर्कित अचिन्त्य ही पुण्य प्राप्त होता है।

येन काश्यां समभ्यर्चि येन काश्यां प्रतिष्ठितम्।
येन काश्या स्तुतं लिङ्गं स मेरूपाद्यदर्पणः ॥
तत्त्वं स्वच्छोऽसि मुकुरो मम नेत्रत्रयस्य हि।
काश्यां लिङ्गार्चनात्त्वाष्ट्र वरं वरय सुव्रत ॥
काश्यां यो राजधान्यां मे हित्वा मामन्यमर्चयेत्[3] ॥

विश्वनाथ जो कहते हैं कि जिसने काशी में शिवलिङ्ग का पूजन किया है, जिसने काशी में शिवलिङ्ग की प्रतिष्ठा की है एवं जिसने काशी में शिवलिङ्ग की स्तुति की है, वह मेरे तीनों नेत्रों के लिये स्वच्छ दर्पण है। काशी में लिङ्गार्चन से मनोरथ की प्राप्ति ध्रुव है। मेरी राजधानी (काशी) में मेरी उपासना छोड़कर अन्य की अर्चना व्यर्थ ही है।

धराधरेन्द्रस्य धरातिसुन्दरा न मां तथास्यापि धिनोति धूर्जटे।
धरागतापीह न या ध्रुवं धरा पुरी धुरीणा तव काशिका यथा ॥
न यत्र काश्यां कलिकालजं भयं न यत्र काश्यां मरणात्पुनर्भवः।
न यत्र काश्यां कलुषोद्भवं भयं कथं विभो सा नयनातिथिर्भवेत्[4] ॥

हे धूर्जटे ! (शिव !) जो पृथिवी पर होकर भी कभी भूमि नहीं है, वह आपकी श्रेष्ठ काशीपुरी जैसा सुख देती है, वैसा आनन्द मेरे पिता हिमालय तथा इस मन्दर पर्वत की भूमि पर भी कहीं नहीं है।

---

१. पद्मपु० स्वर्गखण्ड, ३३।९ ; २. का० ख० ८६।५५।
३. का० ख० ८६।८७-८९; ४. वही, ४४।३०-३१।

हे विभो ! जहाँ पर कलि और काल का भय नहीं है, न ही पाप का ही कोई भय है एवं जिस काशीपुरी में मर जाने से ही पुनः पुनर्जन्म का दुःख भी नहीं भोगना पड़ता, वह काशीपुरी फिर कब इन आँखों को कृतार्थ करेगी ?

वाराणसी तु भुवनत्रय-सारभूता
रम्या नृणां सुगतिदा किल सेव्यमाना ।
अत्रागता विविधदुष्कृतकारिणोऽपि
पापक्षये विरजसः सुमनःप्रकाशाः[1] ॥

वाराणसी पुरी तीनों लोकों का सारभूत एवं सुरम्य है । अनेक प्रकार के दुष्कर्म करने वाले भी काशी में आकर पवित्र हो जाते हैं, उनका मन निर्मल हो जाता है ।

ब्राह्मणाः क्षत्रिया वैश्याः शूद्रा वै वर्णसङ्कराः ।
स्त्रियो म्लेच्छाश्च ये चान्ये सङ्कीर्णाः पापयोनयः ॥
कीटाः पिपीलिकाश्चैव ये चान्ये मृगपक्षिणः ।
चन्द्रार्धमौलिनः सर्वे ललाटाक्षा वृषध्वजाः ॥
शिवे मम पुरीं देवि ! जायते नात्र संशयः[2] ॥

विश्वनाथ जी अन्नपूर्णा जी से कहते हैं—हे अन्नपूर्णे ! ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र एवं वर्णसंकर, स्त्री, म्लेच्छ और अन्य सङ्कीर्ण पापयोनि के लोग, कीट, चींटी, पशु, मृग तथा पक्षी काशी में शरीर-त्याग करने से चन्द्रमौलि शिव के ललाटाक्ष वृषध्वज शिवरूप में परिणत हो जाते हैं, इसमें कोई सन्देह नहीं है ।

अविमुक्तं महत्क्षेत्रं पञ्चक्रोशपरीमितम् ।
ज्योतिर्लिङ्गं तदेकं हि ज्ञेयं विश्वेश्वराभिधम्[3] ॥

पञ्चक्रोश परिमाण जो अविमुक्त नामक महाक्षेत्र है, उसे एक ही विश्वेश्वर संज्ञक ज्योतिर्लिङ्ग जानना चाहिए ।

एवं ज्ञात्वा तु मेधावी नाविमुक्तं त्यजेन्नरः ।
अविमुक्तप्रसादेन विमुक्तो जायते यतः[4] ॥

यह विचार कर बुद्धिमान् मनुष्य काशी का कभी भी त्याग नहीं करते; क्योंकि अविमुक्त के प्रसाद से ही वे विमुक्त होते हैं ।

---

१. नारद-पुराण; २. कूर्मपु० १।३१-३२; ३. का० ख० २६।३३१ ।
४. का० ख० २५।७७ ।

तीर्थार्थी न बहिर्गच्छेन्न देवार्थी कदाचन ।
सर्वतीर्थानि देवाश्च वसन्त्यत्राविमुक्तके ।
अविमुक्तं समासाद्य न त्यजेन्मोक्षकामुकः[1] ।।

तीर्थाटन तथा देवदर्शन के लिए काशी के बाहर कथमपि नहीं जाना चाहिए; क्योंकि सम्पूर्ण तीर्थ एवं देवता काशी में ही विराजमान हैं। मोक्ष चाहने वाले लोगों को कभी भी अविमुक्त-क्षेत्र (काशी) का त्याग नहीं करना चाहिए।

त्वां प्रतिनिधीकृत्यास्माभिस्त्वद्भक्तिभावितैः ।
प्रतिष्ठितेषु लिङ्गेषु सान्निध्यं भवतोऽस्त्विह[2] ।।

ब्राह्मण विश्वनाथ जी से कहते हैं कि हे भगवन्! आपकी भक्ति से भावित अन्तरात्मा वाले हम भक्तगण आपके प्रतिनिधि के रूप में प्रतिष्ठित इन शिवलिङ्गों में आपका सान्निध्य निरन्तर चाहते हैं, अर्थात् आप निरन्तर इन शिवलिङ्गों में निवास करें।

काश्यां श्रीदेवदेवस्य विश्वनाथस्य पूजनम् ।
सर्वपापहरं पुंसामनन्ताभ्युदयावहम् ।।
संसारदावनिर्दग्धं जीवभीरुहजीवनम् ।
दुःखार्णवौघपतित-प्राणिनिर्वाणकारणम्[3] ।।

काशी में देवाधिदेव श्री विश्वनाथ जी का पूजन समस्त पापों का अपहरण करने वाला तथा मनुष्यों का अनन्त अभ्युदयकारक है। संसाररूपी दावाग्नि से दग्ध जीवरूपी वृक्षों को जीवित करने वाला एवं दुःखरूपी सागर में गिरे हुए प्राणियों का उद्धारक है।

चतुर्णामपि वेदानां पुण्यमध्ययनाच्च यत् ।
तत्पुण्यं जायतां काश्यां गायत्रीलक्षजापतः[4] ।।

चारों वेदों के अध्ययन करने से जो पुण्य प्राप्त होता है, काशी में एक लाख गायत्री के जपने से वही पुण्य प्राप्त हो जाता है।

अष्टाङ्गयोगाभ्यासेन यत्पुण्यमपि जायते ।
तत्पुण्यं साधिकं भूयाच्छ्रद्धाकाशीनिषेवणात्[5] ।।

अष्टाङ्ग योगसाधन से जो पुण्य प्राप्त होता है, उससे अधिक पुण्य श्रद्धापूर्वक काशी-सेवन से प्राप्त होता है।

---

१. ब्र० वै० पु०; २. का० ख० ६४।६२; ३. शिवपुराण।
४. का० ख० २६।८४; ५. वही—२६।८५।

विश्वेश्वरो यत्र न तत्र चित्रं धर्मार्थकामामृतरूपरूपः।
स्वरूपरूपः स हि विश्वरूपस्तस्मान्न काशीसदृशी त्रिलोकी[1]॥

भला जहाँ पर धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष को देने के लिए ही मूर्त्तिमान् होकर भगवान् विश्वेश्वर स्वयं विद्यमान हैं, वहाँ पर आश्चर्य की क्या बात है? क्योंकि वे विश्वनाथ अखण्ड सच्चिदानन्द साक्षात् विश्वरूप हैं। इसी से त्रैलोक्य भी काशी के समान नहीं है।

यथा लौहं स्पर्शमणौ पतितं कनकं भवेत्।
तथा काश्यां ब्रह्मरूपं प्राप्नुयाच्छिवरूपताम्॥

जैसे पारसमणि से स्पर्श होने पर लोहा भी सोना बन जाता है, उसी प्रकार काशी में शिव जो के सान्निध्य से जीवमात्र ब्रह्मरूप हो जाता है।

न काशीसदृशी माता गर्भवासप्रणाशिनी।
गर्भवासादिदुःखानि पापानि च महान्त्यपि[2]॥

काशी के समान कोई माता नहीं हैं, जो सबको गर्भवास से मुक्ति प्रदान करती है। यह काशी गर्भवास आदि दुःख और बड़े से बड़े पापों को नष्ट कर देती है।

शशका मशकाः कीटाः पतङ्गास्तुरगोरगाः।
पञ्चक्रोश्यां मृताः काश्यां सन्तु निर्वाणदीक्षिताः॥
नामापि गृह्णतां काश्याः सदैवास्त्वेनसः क्षयः[3]॥

शशक, मशक, कीट, पतंग, तुरग, उरग इत्यादि भो पंचक्रोशी काशी में यदि शरीर-त्याग करते हैं, तो वे निर्वाणपद को प्राप्त करें। केवल काशी का नाम लेने वालों का भी सदैव पापक्षय होवे।

काश्यां लिङ्गप्रतिष्ठा यैः कृताऽत्र सुकृतात्मभिः।
सर्वे धर्माः कृतास्तैस्तु त एव पुरुषार्थिनः[4]॥

जिन पुण्यात्माओं ने इस काशीपुरी में शिवलिङ्ग की स्थापना की है, वे ही पुरुषार्थी तथा सभी धर्मों को करने वाले माने जाते हैं।

---

१. का० ख० ३।९८; २. का० रह० ४।६६।
३. का० ख० २६।८०-८१; ४. वही—८९।१२०

यत्र वासकृतां पुंसां धर्मराशिः पदे पदे ।
स्वर्धुनीस्पर्शमात्रेण महापातकसन्ततिः ॥
यत्र संक्षयति क्षिप्रं तां काशीं को न संश्रयेत्[1] ॥

जहाँ निवास करने से ही मनुष्य को पद-पद पर धर्मराशि अर्थात् पुण्यसमूह प्राप्त होते हैं तथा जहाँ निकट हो बहतो हुई गङ्गा के स्पर्शमात्र से महापापों का क्षय शीघ्र ही हो जाता है, उस काशी में भला कौन नहीं निवास करना चाहता ? अर्थात् सभी लोग काशीवास करना चाहते हैं ।

श्रद्धा धर्मश्च मोक्षश्च श्रद्धा पापप्रणाशिनी ।
धर्मेण काशिकां प्राप्य मोक्षसिद्धिमवाप सः ॥

श्रद्धा, धर्म तथा मोक्ष इन तीनों में श्रद्धा पाप को दूर करती है । धर्म से काशी प्राप्त होती है और काशी प्राप्त होने से मनुष्य मोक्ष प्राप्त करता है ।

यत्र विश्वेश्वरः साक्षाद्यत्र स्वर्गतरङ्गिणी ।
मिथ्या तत्रानुमन्यन्ते तार्किकाश्चानुसूयकाः ॥

उदाहरन्ति ये मूढाः कुतर्कबलदर्पिताः ।
काश्यां सर्वेऽर्थवादोऽयं ते विट्कीटा युगे युगे[2] ॥

जहाँ पर साक्षात् विश्वनाथ विराजमान हैं और स्वयं स्वर्ग-गङ्गा जहाँ पर विद्यमान हैं, उस पुण्य-क्षेत्र पर ईर्ष्या करने वाले कुतार्किक लोग ही व्यर्थ का अनुमान लड़ाते हैं ।

जो लोग अपने कुतर्क-बल के अभिमानो बनकर काशो के विषय में इन बातों को अर्थवाद ही समझते हैं, वे सब युग-युग तक विष्ठा के क्रमि होकर रहते हैं और कदापि सद्गति नहीं प्राप्त कर सकते ।

कस्यचित् काशितीर्थस्य महिम्नो महतस्तुलाम् ।
नाधिरोहेन्मुने नूनमपि त्रैलोक्यमण्डपः[3] ॥

हे मुनिवर ! समस्त त्रैलोक्यमण्डल भी कदापि काशी के किसी तीर्थ की महिमा की तुला (तराजू) पर निश्चय ही नहीं चढ़ सकता है ।

---

१. वही—८६।४०; २. का० ख० ४६।६३–६४; ३. वही—४६।६५ ।

किमत्र नो सन्ति पुरः सहस्रशः पदे पदे सर्वसमृद्धिभूमयः ।
परं न काशीसदृशी दृशोः पदं क्वचिद्गता मे भवता शपे शिव ।।

पार्वती जी भगवान् शिव से कहती हैं कि हे शिव ! क्या इस पृथिवी पर हजारों नगर नहीं हैं ? अथवा जगह-जगह सारी समृद्धियों से युक्त भूमि नहीं है ? तो भी हे शिव ! मैं आपकी ही शपथ करती हूँ, मैंने तो काशी-जैसी दूसरी कोई भी पुरी नहीं देखी है ।

काश्यां धर्मस्तच्चतुष्पादरूपः काश्यामर्थः सोऽप्यनेकप्रकारः ।
काश्यां कामः सर्वसौख्यैकभूमिः काश्यां श्रेयस्तत्तु किं नात्र यच्च[1] ।।

काशी में धर्म अपने चारों पैरों से खड़ा है, अर्थ भी काशी में अनेक प्रकार से वर्तमान है, फिर काशी में काम तो समस्त सौख्यों का एकमात्र आश्रय ही रहा है । वस्तुतः ऐसी कौन-सी श्रेयस्कर वस्तु है, जो काशी में नहीं है ?

धर्मस्तु सम्पत्तिभरैः किलोह्यतेऽत्यर्थो हि कामैर्बहुदानभोगकैः ।
अन्यत्र सर्वं स च मोक्ष एकः काश्यां न चान्यत्र तथा यथाऽत्र[2] ।।

किसी स्थान में प्रचुर धन व्यय करके धर्मलाभ प्राप्त होता है और कहीं पर बहुत-से दान-भोगों के द्वारा अर्थ और काम की प्राप्ति भी हो सकती है । भले ही किसी स्थान में ये सब पाये जाँय; परन्तु यह एक मोक्ष, जैसा काशी में है, वैसा अन्यत्र कहीं भी नहीं प्राप्त होता (यहाँ सायुज्य मोक्ष प्राप्त होता है) ।

क्षेत्रं पवित्रं हि यथाऽविमुक्तं नान्यत्तथा यच्छ्रुतिभिः प्रयुक्तम् ।
स धर्मशास्त्रैर्न च तैः पुराणैस्तस्माच्छरण्यं हि सदाऽविमुक्तम्[3] ।।

श्रुति, स्मृति, पुराणादि के अनुशासनानुसार इस अविमुक्त-क्षेत्र (काशी) के सदृश पवित्र स्थान कोई अन्य नहीं है । अतएव अविमुक्त के ही शरणागत होना, यही परम पुरुषार्थ है (कर्तव्य है) ।

इत्थं सुनिश्चित्य मुनिर्महात्मा क्षेत्रप्रभावं श्रुतितः पुराणात् ।
श्रीविश्वनाथेन समं न लिङ्गं पुरी न काशीसदृशी त्रिलोक्याम्[4] ।।

महात्मा मुनि-श्रेष्ठ अगस्त्य ऋषि ने वेद-पुराण आदि के द्वारा श्रीमद्विश्वनाथ के समान शिवलिङ्ग और काशी के सदृश पुरी त्रैलोक्य में दूसरी नहीं है—इस क्षेत्र का यह (अद्भुत) माहात्म्य निश्चय करके बताया ।

१. का० ख० ३।९७; २. वही—५।२३ ।
३. वही—५।२४ ; ४. वही—५।३१ ।

तत्र देवर्षयः पूर्वं सिद्धा ब्रह्मर्षयस्तथा ।
उपास्य देवमीशानमापुरन्ते परं पदम्[1] ॥

काशी में देवर्षियों, सिद्धों एवं ब्रह्मर्षियों ने शिव की उपासना करके अन्त में परम पद (मोक्ष) प्राप्त किया है ।

मत्स्योदर्यास्तटे पुण्ये स्थानं गुह्यतमं शुभम् ।
गोचर्ममात्रं राजेन्द्र ओङ्कारेश्वरमुत्तमम्[2] ॥

काशी में मत्स्योदरी के पवित्र तट पर एक गुप्त स्थान है, वह गोचर्म मात्र है । उसे ओङ्कारेश्वर कहते हैं ।

या मे मुक्तिपुरी काशी सर्वाभ्योऽपि गरीयसी ।
आधिपत्ये च तस्यास्ते कालराजः सदैव हि[3] ॥

सभी मुक्तिदायिनी पुरियों में मेरी काशी सर्वश्रेष्ठ पुरी है; क्योंकि यहाँ का आधिपत्य साक्षात् कालराज करते हैं ।

क्वैकान्तशीलत्वमिहास्ति पुंसः क्व चेन्द्रियप्रीतिनिवृत्तिरस्ति ।
क्व योगयुक्तिः क्व च दैवतेज्या काश्यां विनैभिः सहजेन मुक्तिः ॥
विश्वेशसंशीलनमेव योगस्तपश्च विश्वेशपुरीनिवासः ।
व्रतानि दानं नियमा यमाश्च स्नानं द्युनद्यां यदुदग्वहायाम्[4] ॥

इस संसार में पुरुष की एकान्तशीलता कहाँ है ? और इन्द्रियों की प्रीति से निवृत्ति कहाँ होती है ? एवं योगयुक्ति और देवतार्चन विधि कहाँ बन पड़ती है ? तब (हाँ) इन सब के बिना ही काशी में मुक्ति सहज ही मिल जाती है ।

विश्वेश्वर का सेवन ही योगाभ्यास और विश्वनाथ की काशीपुरी का निवास ही तपस्या एवं उत्तरवाहिनी गंगा का स्नान ही नियम, यम, दान और व्रत, सब कुछ है ।

तीर्णोऽहं कर्मपाशाद्धि कृच्छ्रात्प्रारब्धसंक्षयात् ।
संसारादपि तीर्णोऽहं काशीवासफलाश्रयः[5] ॥

मैं कर्मपाश से छुटकारा पा गया हूँ; क्योंकि मेरे प्रारब्ध का क्षय हो गया है । मैं संसार से भी पार हो गया हूँ; क्योंकि मेरे पास काशीवास का फल है । अर्थात् काशीवास करने से समग्र कर्मपाशों से मुक्त होकर जीव मुक्ति (मोक्ष) प्राप्त करता है ।

---

१. पद्म-पु० ३४।८ ; २. वही—३४।९ ; ३. का० ख० ।
४. वही—४०।१९२–१९३ ५. का० र० ।

विश्वागौरीं च तदनु पूजयित्वातिभक्तितः।
विश्वस्य पूज्यो भवति ततो विश्वमयो भवेत्[१] ॥

काशी में भक्तिपूर्वक विश्वागौरी की पूजा करने के पश्चात् जो कोई विश्वनाथ जी की पूजा करता है, वह मनुष्य विश्वपूज्य होकर विश्वमय हो जाता है।

कृत्वा पापसहस्राणि पिशाचत्वं वरं त्विह।
न तु क्रतुशतप्राप्यः स्वर्गः काशीपुरीं विना[२] ॥

सहस्रों पाप करके काशी में पिशाच होना बहुत श्रेष्ठ है; परन्तु सैकड़ों यज्ञ के द्वारा प्राप्य स्वर्ग भी काशीपुरी के बिना श्रेष्ठ नहीं है।

अन्तकाले मनुष्याणां भिद्यमानेषु मर्मसु।
वातेनातुद्यमानानां स्मृतिर्नैवोपजायते ॥

तत्रोत्क्रमणकाले तु साक्षाद्विश्वेश्वरः स्वयम्।
व्याचष्टे तारकं ब्रह्म येनासौ तन्मयो भवेत्[३] ॥

अन्तकाल में जबकि मनुष्यों के मर्मस्थान फटने लगते हैं और वायु से शरीर छटपटाने लगता है, तो उस समय स्मरण-शक्ति नहीं रह जाती; परन्तु काशी में प्राण निकलने के समय साक्षात् विश्वेश्वर स्वयं तारक-ब्रह्म का उपदेश करते हैं, जिससे मनुष्य ब्रह्ममय हो जाता है।

महापापौघशमनीं पुण्योपचयकारिणीम्।
भुक्तिमुक्तिप्रदामन्ते को न काशीं सुधीः श्रयेत्[४] ॥

कार्त्तिकेय जी अगस्त्य ऋषि को सम्बोधित करते हुए कहते हैं कि कौन ऐसा बुद्धिमान् है, जो महापापौघनाशिनी, पुण्यवर्द्धिनी, भुक्तिमुक्ति-प्रदायिनी काशी का अन्त में आश्रयण नहीं करना चाहता ?

यत्सुखं काशिवासेऽत्र न तद्ब्रह्माण्डमण्डपे।
अस्ति चेत्तत्कथं सर्वे काशीवासाभिलाषुकाः[५] ॥

काशीवास करने में जो सुख है, वह समस्त ब्रह्माण्ड-मण्डप में कहीं भी नहीं है। यदि कहीं यह सुख होता, तो क्यों सभी लोग काशीवास की अभिलाषा करते ?

---

१. का० ख० ६१।११४; २. वही—२५।७१ ; ३. वही २५।७२-७३।
४. का० ख० २५।७६ ; ५. वही—३।८२।

एकदेशस्थितमपि यथा मार्तण्डमण्डलम् ।
दृश्यते सर्वगं सर्वैः काश्यां विश्वेश्वरस्तथा[1] ॥

जैसे सूर्यदेव एकदेश में स्थित रहने पर भी सब किसी को सर्वव्यापी दिखलाई पड़ते हैं, वैसे ही काशी में विश्वनाथ जी सर्वत्र ही स्थित हैं।

बहूपसर्गो योगोऽयं कृच्छ्रसाध्यं तपो हि यत् ।
योगाद्भ्रष्टस्तपोभ्रष्टो गर्भक्लेशसहः पुनः[2] ॥

योग तो अनेक विघ्नों से भरा हुआ है और तपस्या बड़ी ही कष्टसाध्य है। अतः योग एवं तपस्या से भ्रष्ट होकर बारम्बार गर्भ का क्लेश सहना पड़ता है। इसलिए काशी-सेवन अवश्य करना चाहिए; क्योंकि काशी--सेवन ही परम धामप्रद है।

भूमिष्ठमिव भात्येतदज्ञदृष्ट्याऽमृतादिवत् ।
मत्स्वरूपं ज्ञानदृशां भाति सत्यं वदे प्रिये ॥

मूर्खों की दृष्टि से यह काशी पृथ्वी पर ठहरी हुई की भाँति मालूम होती है; परन्तु ज्ञान-दृष्टि वालों को यह काशी अमृतादि की भाँति है। हे प्रिये ! मैं सत्य कहता हूँ, मेरा स्वरूप ज्ञान-दृष्टि वाले ही जान सकते हैं।

सत्सङ्गश्रवणाद्यैश्च कालो गच्छतु नः सदा ।
हर शम्भो महादेव सर्वज्ञ सुखदायक[3] ॥

सत्सङ्ग के श्रवण में हमारा समय निरन्तर व्यतीत हो और 'हे हर ! हे शम्भो ! हे महादेव ! हे सर्वज्ञ ! हे सदा सुखदायक !' यह मन्त्र सदैव मुख से निकलता रहे।

मोक्षार्थिनां मोक्षदनामधेया धर्मार्थिनां धर्मदचिन्तनाद्या ।
अर्थार्थिनामर्थदपादपद्मा कामार्थिनां कामदकल्पवल्ली ॥

विष्णु भगवान् कहते हैं कि काशी के तीन नाम हैं—मोक्ष देने के कारण मोक्षदा, धर्म देने के कारण धर्मदा, अर्थ चाहने वालों के लिए अर्थदा और कामार्थियों के लिए कामद कल्पवल्ली है।

---

१. का० ख० २६।१३२ ; २. वही—२६।१४०। ३. का० र०।

गृहं न काशीसदृशं सुखाय पिता न विश्वेशसमः क्वचिद्भवेत् ।
माता भवानीसदृशी न गर्भदा कुटुम्बमत्रत्यजनो जनार्दनः[१] ।।

सुख के लिए काशी के समान घर नहीं है, कहीं भी विश्वनाथ के समान कोई पिता नहीं है,[१] जन्मदात्री भवानी के समान माता नहीं है और काशीवासियों के लिए जनार्दन ही कुटुम्ब-धन हैं।

काशीखण्डस्य श्रवणात्तस्यात्सुष्ठु न संशयः ।
दत्वा दानानि सर्वाणि कृत्वा यज्ञाननेकशः[२] ।।

काशीखण्ड के श्रवण से समस्त दान तथा अनेक यज्ञ करने का फल प्राप्त होता है, इसमें कोई सन्देह नहीं है।

तदा बहुतिथे काले कस्यचित्तत्प्रजायते ।
अतो ज्ञानगृहं मेऽस्ति काशी विबुधदुर्लभा ।।
एकेन जन्मना तत्र मरणावसरेऽमलम् ।
ज्ञानमुत्पद्यते जन्तोः श्रुतिभिर्यन्निरूपितम् ।।

बहुत तिथियों के बीत जाने पर किसी-किसी को ऐसी बुद्धि प्राप्त होती है। इसलिए देवों के लिए दुर्लभ ज्ञान का घर काशी है।

किन्तु एक जन्म में ही मरण के अवसर पर काशी में निर्मल ज्ञान उत्पन्न होता है, ऐसा वेदों में कहा गया है।

सम्प्राप्य तारकं ज्ञानं न स भूयोऽभिजायते ।।
यो मामिह समभ्यर्च्य म्रियतेऽन्यत्र कुत्रचित् ।
जन्मान्तरेऽपि मां प्राप्य स विमुक्तो भविष्यति[३] ।।

विश्वनाथ जी कहते हैं कि काशी में जीव तारक-मन्त्र का उपदेश पा जाता है, वह पुनः जन्म नहीं लेता। जो भक्त इस काशी में मेरी सविधि पूजा करता रहा हो; किन्तु मरण समय में यदि वह कहीं अन्यत्र जाकर शरीर-त्याग करता है, तो ऐसा भी मनुष्य दूसरे जन्म में पुनः मुझे प्राप्त करके विमुक्त हो जाता है।

---

१. कल्पवल्ली; २. का० ख० १००।२०७ ; ३. का. ख. ६४।११७-११८।

काशी सर्वाऽपि विश्वेशरूपिणी नात्र संशयः ।
तद्भक्त्याऽनन्ययैव श्रुतमिह तु भवेत् प्राणिनां पूर्वपुण्यैः ।
नित्याः श्रुतिस्मृतिपुराणागमार्थाश्चिरन्तनाः[1] ॥

सम्पूर्ण काशी निःसन्देह भगवान् विश्वेश्वर का स्वरूप है। प्राणियों के पूर्व-पुण्य से ही काशी में श्रद्धा होती है। यहाँ (काशी में) श्रुति, स्मृति, पुराण एवं आगम का चिन्तन (कथा) नित्य होता रहता है।

प्राणप्रयाणावसरे ये काश्यां सङ्गता जनाः ।
ये वा काशीति भाषन्ते ते वा विष्णुपरायणाः[2] ॥

मृत्यु के समय में जो लोग काशी में रहते हैं या 'काशी' शब्द का उच्चारण करते हैं, उन लोगों को निःसन्देह विष्णुलोक की प्राप्ति होती है।

विश्वनाथेति विश्वस्मिन्प्रथितं विश्वसौख्यदम् ॥
अविमुक्तं समासाद्य येन विश्वेश्वरोऽर्चितः ।
न तस्यास्ति पुनर्जन्म कल्पकोटिशतेष्वपि[3] ॥

इस विश्व में काशी के सम्पूर्ण सुख देने वाले विश्वेश्वर विश्वनाथ जो प्रसिद्ध हैं। अविमुक्त (काशी) में आकर जिसने विश्वेश्वर की पूजा की है, उसका पुनः जन्म नहीं होता, वह करोड़ों कल्पों तक जन्म नहीं लेता है, अर्थात् आवागमन से मुक्त हो जाता है।

विना साङ्ख्येन योगेन काश्यां संस्थोऽमृतो भवेत् ।
कर्मनिर्मूलनवता विना ज्ञानेन कुम्भज[4] ॥

हे कुम्भज ! ज्ञान के विना भी पाप-कर्म का नाश चाहने वाला और सांख्य-योग के विना भी काशी में स्थित होकर अमृततत्त्व मोक्ष को प्राप्त हो जाता है।

तारकस्योपदेशेन काशीसंस्थोऽमृतो भवेत् ।
अनेकजन्मसंसिद्धैर्बद्धोऽपि प्राक्तनैर्गुणैः[5] ॥

अनेक जन्मों के प्राक्तन गुणों से बँधा हुआ जीव भी काशी में रहने से तथा तारक मन्त्र के उपदेश से मुक्त हो जाता है।

---

१. काशीमूलरहस्य; २. पद्मपुराण। ३. का. ख. ८६।११०-१११।
४. वही—३०।१२; ५. वही—३०।१४।

देहत्यागोऽत्र वै योगः काश्यां निर्वाणसौख्यकृत् ।
प्राप्योत्तरवहां काश्यामतिदुष्कृतवानपि[1] ॥

अगस्त्य ऋषि कहते हैं कि देहत्याग का योग काशी में मोक्ष को देने वाला है। अत्यन्त दुष्कर्म करने वाला व्यक्ति भी उत्तरवाहिनी भागीरथी गङ्गा में स्नान करने से मुक्त हो जाता है।

तावद् गर्जन्ति पापानि ब्रह्महत्यादिकान्यलम् ।
यावन्नाम न शृण्वन्ति काश्याः पापाचलाशनेः[2] ॥

ब्रह्महत्यादि पापगण तब तक गरजते हैं, जब तक पापरूपी पर्वत को नष्ट करने वाली वज्ररूपिणी काशी का नाम नहीं सुन पाते हैं।

अथ संक्षीणपापास्ते कालभैरवदर्शनात् ।
इहैव देहिनो भूत्वा म्रियन्ते ते ममाज्ञया ॥
तस्मान्न कामयेतात्र वाङ्मनःकर्मणाऽघ्‌मञ्[3] ॥

कालभैरव के दर्शन से पापों को दूर कर निष्पाप प्राणी यहीं काशी में ही मेरी आज्ञा के अनुसार मुक्त हो जाते हैं। इसलिए यहाँ (काशी में) वाणी, मन एवं कर्म से पाप करने की बात कभी भी नहीं सोचनी चाहिए।

सर्वेषामेव जन्तूनां काशीव सुगतिप्रदः ।
रुद्रः संहाररूपेण पालनेन चतुर्भुजः[4] ॥

काशी ही सभी जन्तुओं के लिये मुक्तिप्रद है। काशी में मैं संहाररूप से रुद्र हूँ और पालन करने वाला चतुर्भुज विष्णु भी मैं ही हूँ।

गङ्गातटं वेदनुतं मुक्तिदं हि तनुत्यजाम् ।
तत्रापि काश्याः परितो देवभूमिस्त्रियोजना ॥
शापस्ते न स्पृशेदत्र तत्रैव वस मा शुचः[5] ॥

गङ्गा का तट वेद में स्तुत है, मुक्ति देने वाला है। काशी के चारों ओर तीन योजन भूमि देवभूमि है। वहाँ तुम्हें शाप स्पर्श भी नहीं करेगा। शोक मत करो, वहीं काशी में निवास करो।

---

१. का० ख० ३०।१६; २. वही—३१।६५; ३. वही—६४।८५-८६।
४. वही—५६।७२; ५. का० रह०।

असो-वरणयोर्मध्ये पञ्चक्रोशमहत्तरम् ।
अमरा मृत्युमिच्छन्ति का कथा त्वितरे जनाः ॥

असी नदी और वरुणा के बीच में सर्वश्रेष्ठ पञ्चक्रोश है। इसमें देवतागण भी शरीर छोड़ना चाहते हैं और दूसरे लोगों की बात ही क्या है।

पुण्यवानितरो वाऽपि मम क्षेत्रस्य सेवया ।
मुक्तो भवति देवेशि ! नात्र कार्या विचारणा[1] ॥

हे अन्नपूर्णे ! मेरे इस काशी-क्षेत्र की सेवा से पुण्यवान् हो या पापी, दोनों ही मुक्त हो जाते हैं। इसमें सन्देह नहीं करना चाहिए।

ब्रह्महत्यापहं तीर्थं क्षेत्रमेतन्मया कृतम् ।
कपालमोचनं देवि ! देवानां प्रथितं भुवि[2] ॥

शङ्कर जो कहते है कि मैंने ब्रह्महत्या दूर करने वाले इस काशी-क्षेत्र का निर्माण किया है। हे देवि ! यहाँ का कपालमोचन-क्षेत्र भूमण्डल में प्रसिद्ध है।

भैरवा रुरुमुख्याश्च महाभयनिवारकाः ।
सम्पूज्याः सर्वदा काश्यां सर्वसम्पत्तिहेतवः[3] ॥

भैरवादि मुख्य देवताओं की पूजा के द्वारा महाभय का निवारण होता है। काशी में समस्त सम्पत्ति की प्राप्ति के लिए भैरवादि देवताओं की सर्वदा पूजा करनी चाहिए।

तत्रैव विकटा देवी सर्वदुःखौघमोचनी ।
पञ्चमुद्रं महापीठं तज्ज्ञेयं सर्वसिद्धिदम् ॥
तत्र जप्ता महामन्त्राः क्षिप्रं सिद्धयन्ति नान्यथा[4] ॥

काशी में ही समस्त दुःखविनाशिनी विकटा (संकटा) देवी हैं। वही सर्वसिद्धिप्रद पञ्चमहामुद्रा महापीठ है। वहाँ पर अपने इष्टदेव के महामन्त्रों का जप करने से सिद्धि प्राप्त होती है, अर्थात् संकटा जी में जप करने वाले व्यक्ति को धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष ये चारों पदार्थ प्राप्त होते हैं।

---

१. केदारमाहात्म्य—१२७; २. म० पु० १८३।१०१; ३. का० ख० ७२।१०२। ४. वही—९७।४०-४१।

काश्यां श्रीदेवदेवस्य विश्वनाथस्य पूजनम् ।
तस्य दर्शनमात्रेण तत्त्वज्ञानविधायकम् ।।
पापं क्षयमवाप्नोति सर्वथा नात्र संशयः[1] ।

काशी में देवाधिदेव विश्वनाथ जी का पूजन अवश्य करना चाहिए । विश्वनाथ जी के दर्शनमात्र से तत्त्वज्ञान होता है और समस्त पाप नष्ट हो जाते हैं । इसमें सन्देह नहीं है ।

यदीच्छेन्मानवो धीमान् न पुनर्जायते क्वचित् ।
मेरोः शक्तो गुणान् वक्तुं द्वीपानां च तथैव च[2] ।।

जो बुद्धिमान् मानव है, वह पुनः जन्म नहीं धारण करता । सुमेरु पर्वत और द्वीपों के गुणों का वर्णन तो हो सकता है; परन्तु काशी का नहीं ।

अव्यक्तलिङ्गैर्मुनिभिः सर्वसिद्धान्तवेदिभिः ।
इह सम्प्राप्यते मोक्षो दुर्लभो देवदानवैः[3] ।।

सम्पूर्ण वेदान्त-सिद्धान्तों के ज्ञाता अव्यक्त लिङ्ग मुनियों द्वारा यहाँ पर (काशी में) मुक्ति प्राप्त होती है, जो देव-दानव सभी को दुर्लभ है ।

शम्भुस्तत्किञ्चिदाचष्टे म्रियमाणस्य जन्मिनः ।
कर्णेऽक्षरं यदाकर्ण्य मृतोऽप्यमृततां व्रजेत्[4] ।।

काशी में मरने वाले जीव के कान में शङ्कर जी कुछ मन्त्र कहते हैं, जिसे सुनकर मरा हुआ प्राणी अमृतत्व को प्राप्त होता है ।

नियमेन तु विश्वेशे पुष्पं पत्रं फलं जलम् ।
यद्दत्तं सुमनोवृत्त्या महादानं तदत्र वै ।।
मुक्तिमण्डपिकायां च क्षणं यत्स्थिरमास्यते ।
स्नात्वा गङ्गाऽमृते शुद्धे तप एतदिहोत्तमम्[5] ।।

नियम से पत्र, पुष्प, फल और जल जो भी भक्तिपूर्वक दिया जाता है, वह महादान हो जाता है । पवित्र गङ्गाजल में स्नान करके मुक्तिमण्डप में जो क्षण भर स्थिरता से बैठ जाता है, यहाँ पर यही महातपस्या है ।

---

१. पद्मपुराण ; २. म. पु. १८२।२१; ३. वही—१८०।६० ।
४. का. ख. ३९।१९ ; ५. वही—३९।७-९ ।

चन्द्रार्द्धमौलिनः सर्वे ललाटाक्षा वृषध्वजाः ।
शिवे मम पुरे देवि जायन्ते नात्र संशयः[1] ॥

शिव जी पार्वती जी से कहते हैं कि सब चन्द्रार्धमौली हैं। सब के ललाट में आँख है। सब वृष ध्वज हैं। हे देवि ! कल्याणकारी लोग ही मेरे नगर (काशी) में पैदा होते हैं, इसमें कोई सन्देह नहीं है।

दैनन्दिनेऽथ प्रलये त्रिशूलकोटौ
समुत्क्षिप्यपुरीं हरः स्वाम् ।
बिभर्ति संवर्तमहास्थिभूषण-
स्ततो हि काशी कलिकालवर्जिता[2] ॥

दैनन्दिन प्रलय में उस समय की अस्थिमाला से विभूषित भगवान् शिव अपनी काशीपुरी को त्रिशूल के अग्रभाग पर उठाकर रक्षित करते हैं, इसीलिए वहां पर (काशी में) कलि और काल का वश नहीं चलता।

अमोघभोगदा चात्र स्वल्पधर्मकृतामपि ।
केवलं धर्महस्वत्वात् कलौ काशी गतिर्नृणाम्[3] ॥

(काशी में) देहत्याग करने वाले समस्त जीवों को मुक्ति देने वाली, अमोघ भोग देने वाली तथा थोड़ा भी धर्म करने वाले या धर्म-बुद्धि रखने वाले के लिए काशी ही कलियुग में एकमात्र शरण है।

अविमुक्ते कृतं कर्म यदल्पमपि मानवैः ।
श्रेयोरूपं तद्विपाको मोक्षं जन्मान्तरेष्वपि[4] ॥

मनुष्यों द्वारा अविमुक्त (क्षेत्र काशी) में किया हुआ थोड़ा भी शुभ कर्म कल्याणकारक होता है और उसका पका हुआ फल जन्मान्तर में मोक्ष ही होता है।

तेभ्यश्चाहं प्रयच्छामि भोगैश्वर्यमनुत्तमम् ।
आत्मनश्चैव सायुज्यमीप्सितं स्थानमेव च[5] ॥

विश्वनाथ जी कहते हैं कि मैं उनके (काशीवासियों के) लिए अनुत्तम भोग, ऐश्वर्य प्रदान करता हूँ तथा सायुज्य मुक्ति भी प्रदान करता हूँ; क्योंकि यह काशी क्षेत्र मेरा अत्यन्त प्रिय है।

---

१. म. पु. ; २. का० ख० ३०।११०; ३. काशीमूलरहस्य ।
४. का० ख० २।६३; ५. म० पु० ६१।१८० ।

उपपातकिनो ये च महापातकिनश्च ये।
तेऽपि काशीं समासाद्य भविष्यन्ति गतैनसः ॥
इदं मम प्रियं क्षेत्रं पञ्चक्रोशीपरीमितम्।
ममाज्ञा प्रभवेदत्र नान्याज्ञा प्रभवेदिह[1] ॥

जो लोग उपपातकी अथवा महापातकी हैं, वे सब भी काशी में प्रवेश करते ही निष्पाप हो जाते हैं। यह पाँच कोश परिमित स्थल मेरा परमप्रिय क्षेत्र है। यहाँ पर मेरी ही आज्ञा चलती है, किसी दूसरे की आज्ञा यहाँ बलवती नहीं हो सकती।

अविमुक्ते प्रविष्टानां विहारो नैव युज्यते।
मोक्षोऽप्यसंशयश्चात्र तस्मात्त्याज्या न काशिका[2] ॥

अविमुक्त-क्षेत्र (काशी) में आकर विहार करना उचित नहीं है। यहाँ (काशी में) निश्चित ही मोक्ष होता है। इसलिए काशी का त्याग नहीं करना चाहिए।

प्रयागे यत्फलं देवि माघे चोषसि मज्जनात्।
तत्फलं कोटिगुणितं वाराणस्यां क्षणे क्षणे ॥
अस्य क्षेत्रस्य महिमा कोऽपि वाचामगोचरः[3] ॥

शङ्कर जी कहते हैं कि हे देवि! प्रयाग में उषाःकाल में स्नान करने से जो फल होता है, उसका कोटि गुना फल काशी में पद-पद पर होता है। इस काशीक्षेत्र की विलक्षण महिमा वाणी से नहीं व्यक्त की जा सकती।

आनन्दकाननं हित्वा नान्यद्गच्छेत्तपोवनम्।
तपो योगश्च मोक्षश्च यतोऽत्रैव मदाश्रयात् ॥
कृपया सर्वजन्तूनां क्षेत्रमेतन्मया कृतम्।
अवश्यमेव सिद्ध्यन्ति क्षेत्रेऽस्मिन्सिद्धिकाङ्क्षिणः[4] ॥

आनन्दकाकन (काशी-क्षेत्र) का त्याग करके किसी अन्य तपोवन में नहीं जाना चाहिए; क्योंकि तप, योग एवं मोक्ष सभी काशी के ही आश्रित हैं। मैंने अत्यन्त कृपापूर्वक सभी जीवों के लिए इस काशी-क्षेत्र को बनाया है। इस काशी-क्षेत्र में सिद्धि चाहने वालों की आकांक्षा अवश्य ही पूर्ण होती है।

---

१. का० ख० २६।१००-१०१; २. वही—८६।११३।
३. वही—८६।१२३-१२४; ४. वही—८६।११४-११५।

तस्मात् काशीक्षितौ प्राप्तेरिदं नः सुमहत्फलम् ।
यत्र नास्ति महाक्षेत्रे भैरवीयातनापि हि ॥

जिस महाक्षेत्र में भैरवी यातना भी नहीं है, उस काशी को प्राप्त करना ही हम लोगों को महाफलदायक है।

काश्यां सदैव वस्तव्यं स्नातव्योत्तरवाहिनी ।
भवानी-शङ्करौ सेव्यौ प्राप्तये भुक्तिमुक्तिके ॥

सदा काशी में निवास, उत्तरवाहिनी गङ्गा में स्नान करना एवं भवानी और शङ्कर जी की सेवा करनी चाहिए; क्योंकि भुक्ति और मुक्ति की प्राप्ति काशी से ही होती है।

कदा काश्यां गमिष्यामि कदा द्रक्ष्यामि शङ्करम् ।
इति ब्रुवाणः सततं काशीवासफलं लभेत् ॥

किस समय काशी जायेंगे ? कब विश्वनाथ जी का दर्शन करेंगे ? इस प्रकार बोलने वाला भी काशीवास का फल प्राप्त करता है।

उभे एव हि निर्वाणवर्त्मनी किल कुम्भज ।
किं वा काश्यां तनुत्यागः किं वा योगोऽयमीदृशः[1] ॥

हे कुम्भज ! मुक्ति के तो दो ही मार्ग हैं, एक तो काशी में शरीर-त्याग और दूसरा योगाभ्यास।

चञ्चलेन्द्रियवृत्तित्वात् कलिकल्मषजृम्भणात् ।
अल्पायुषां तथा नृणां क्वेह योगमहोदयः ॥
अत एव हि जन्तूनां महोदयपदप्रदः ।
सदैव स दयावार्धिः काश्यां विश्वेश्वरः स्थितः[2] ॥

इन्द्रियवृत्तियों के चञ्चल होने से और कलिकाल में पापों के बढ़ने से तथा मनुष्यों की आयु थोड़ी होने से इस भोगभूमि में योगसिद्धि कैसे हो सकती है ? इसीलिए वे दयासागर भगवान् विश्वेश्वर जन्तुवों के मोक्षदाता होकर सदैव काशीपुरी में निवास करते हैं।

---

१. का० ख० ४१।१६७ ; २. वही—४१।१६८–१६९ ।

काश्यां सुखेन कैवल्यं यथा लभ्येत जन्तुभिः ।
योगयुक्त्याद्युपायैश्च न तथान्यत्र कुत्रचित्[१] ॥

जन्तुगण काशी में जैसे सुख से मोक्ष प्राप्त करते हैं, अन्यत्र कहीं भी योगादिक नाना उपायों से वैसी मुक्ति नहीं पा सकते ।

अनन्तो महिमा काश्याः कस्तं वर्णयितुं प्रभुः ।
विपत्तिमिच्छतो जन्तोर्यत्र कर्णेजपः शिवः[२] ॥

काशी की महिमा अनन्त है । (भला !) उसका वर्णन करने में कौन समर्थ हो सकता है ? यहाँ पर भगवान् शिव स्वयं मरण चाहने वाले जीव के कान में (तारक) मन्त्र दे देते हैं ।

यथा शिवस्तथा विष्णुर्यथा विष्णुस्तथा शिवः ।
अन्तरं शिवविष्ण्वोश्च मनागपि न विद्यते[३] ॥

जैसे शिव हैं, वैसे ही विष्णु हैं और जैसे विष्णु हैं, वैसे ही शिव हैं । इन दोनों (शिव एवं विष्णु) में थोड़ा भी अन्तर नहीं है ।

इति काशीप्रभावज्ञो जगच्चक्षुस्तमोनुदः ।
कृत्वा द्वादशधात्मानं काशीपुर्यां व्यवस्थितः[४] ॥

अन्धकार का नाश करने वाले जगच्चक्षु सूर्य काशी के प्रभाव को जानकर अपनी द्वादश मूर्त्तियाँ धारण कर काशीपुरी में ही स्थित हो गये ।

यः प्रत्येकादशीं प्राप्य शयनीं बोधिनीं तथा ।
कुर्याज्जागरणं रात्रौ मम मूर्त्तिसमीपतः[५] ॥

श्रीकाशी में बिन्दुमाधव (विष्णु जी) के मन्दिर में जो प्रत्येक एकादशी के दिन रात्रि में मेरी मूर्त्ति के समीप जागरण करता है, वह मुक्त हो जाता है ।

काश्यां विदेहकैवल्यं भवतीति सुनिश्चितम् ।
काश्यां विदेहकैवल्यं प्राप्तेरुत्तरकर्मणाम्[६] ॥

काशी में विदेह कैल्य की प्राप्ति होती है, यह सुनिश्चित है । मरणोत्तर कर्म होने के पश्चात् जीव को विदेह कैवल्य प्राप्त होता है ।

---

१. का० ख० ४१।१७० ; २. वही—३९।१८ ; ३. वही—२३।४१ ।
४. वही—४६।४४ ; ५. वही—६१।१४६ ; ६. छान्दोग्योपनिषद् ।

सर्वेषामूषराणां तु काशी परम ऊषरः ।
वप्तुर्बीजमिदं तस्मिन्नुप्तं नैव प्ररोहति[1] ॥

सभी ऊषरों में काशी परम ऊषर है, अर्थात् जैसे ऊषर में वीजाङ्कुर नहीं निकलते, वैसे ही काशी में कर्मरूपी वीजों के अंकुर नष्ट हो जाते हैं । अतः कर्मफल जीव को काशी में प्राप्त ही नहीं हो सकता ।

सुलभा यत्र नियतमानन्दवनचारिणः ।
अपि तैः श्रेयसी लक्ष्मीः किमन्येऽल्पमनोरथाः[2] ॥

जिस में आनन्दवन (काशी) में विहार करने वाले सुलभ होते हैं, वहाँ मोक्ष-लक्ष्मी भी सुलभ हैं, अन्य छोटे-मोटे तुच्छ मनोरथों की बात ही क्या है ?

वृथा गते हि मानुष्ये काशीप्राप्तिविवर्जनात् ।
यास्यामि काशीमायाहि मायां हित्वा त्वमप्यहो[3] ॥

यह मनुष्य-जन्म व्यर्थ ही होता है, यदि इस शरीर से काशी-प्राप्ति न हो । मैं काशी जा रहा हूँ, यदि तुम भी चाहते हो, तो माया-मोह छोड़कर काशी चलो ।

अजपा नाम गायत्री योगिनां मोक्षदायिनी ।
अस्याः सङ्कल्पमात्रेण नरः पापैः प्रमुच्यते[4] ॥

ये अजपा नाम की गायत्री योगियों को मोक्ष देने वाली है । इसके सङ्कल्प मात्र से ही मनुष्य पापों से मुक्त हो जाता है ।

हंस हंसेत्यतो मन्त्रं जीवो जपति सर्वदा ।
षट्शतानि दिवारात्रौ सहस्राण्येकविंशतिः ॥
एतत्संख्यान्वितं मन्त्रं जीवो जपति सर्वदा[5] ॥

'हंस हंस' इस (अजपा गायत्री) मन्त्र को सर्वदा दिन-रात जीव जपता रहता है । एक अहोरात्र में जीव इक्कीस सहस्र छः सौ बार इस मन्त्र का नित्य ही जप करता है ।

दत्तं जप्तं हुतं चेष्टं तपस्तप्तं कृतं च यत् ।
ध्यानमध्ययनं ज्ञानं सर्वं तत्राक्षयं भवेत्[6] ॥

काशी-क्षेत्र में दिया हुआ दान, जप, हवन, यज्ञ, तपस्या, ध्यान, अध्ययन, ज्ञान और जो भी कार्य किया गया हो, वह सब कुछ अक्षय होता है ।

१. का० ख० ७४।४०; २. वही—८६।४९; ३. वही—८६।५३ ।
४. वही—४१।१५८; ५. वही—४१।१५६–१५७; ६. कूर्मपु० १।३१।२९ ।

अन्यत्र यत्कृतं पापं तत्काश्यां परिणश्यति ।
नान्यत्पश्यामि जन्तूनां मुक्त्वा वाराणसीं पुरीम् ।
सर्वपापप्रशमनीं प्रायश्चित्तं कलौ युगे ।।

अन्य स्थानों में किये गये पाप काशी में नष्ट हो जाते हैं। काशीपुरी को छोड़ कर समस्त पापों का नाश करने वाला दूसरा कोई तीर्थ नहीं दिखाई पड़ता।

ब्रह्महा योऽभिगच्छेद्वै दैवाद्वाराणसीं पुरीम् ।
तस्य क्षेत्रस्य माहात्म्याद् ब्रह्महत्या निवर्तते[1] ।।

कार्तिकेय जी अगस्त्य मुनि से कहते हैं कि यदि दैववश कोई ब्रह्मघाती मनुष्य भी काशीपुरी में पहुँच जाता है, तो उस क्षेत्र के प्रभाव से वह ब्रह्महत्या से भी मुक्त हो जाता है।

मन्मना मम भक्तश्च मयि सर्वार्पितक्रियः ।
यथा मोक्षमिहाप्नोति न ह्यन्यत्र तथा क्वचित्[2] ।।

शङ्कर जी कहते हैं कि मुझमें मन लगाने वाला मेरा भक्त और अपने किये हुए समस्त कर्मों को मुझे अर्पण करने वाला इस काशी-क्षेत्र में जैसा मोक्ष प्राप्त करता है, वैसा अन्यत्र कहीं भी नहीं प्राप्त कर सकता।

स काशीवासपुण्यस्य भाजनं स्याच्छिवाज्ञया ।
एतच्छ्रवणतः पुंसां सर्वत्र विजयो भवेत् ।
सौभाग्यञ्चापि सर्वत्र प्राप्नुयान्निर्मलाशयः[3] ।।

काशीपति भगवान् विश्वनाथ की आज्ञा से वह (काशीवासी) व्यक्ति काशीवास के पुण्य का पात्र होता है। काशी के श्रवण मात्र से मनुष्यों को सर्वत्र विजय प्राप्त होती है, उनका आशय निर्मल होता है एवं उन्हें सर्वत्र सौभाग्य की प्राप्ति होती है।

सदाशिवसमो देवो नास्ति लोकत्रयेऽपि च ।
तथा शिवरहस्येन तुल्यमन्यन्न विद्यते ।।

सदाशिव भगवान् विश्वनाथ के समान देवता तीनों लोक में नहीं है, इसी प्रकार 'शिवरहस्य' के सदृश दूसरा कोई ग्रन्थ भी नहीं है।

---

१. का० ख० २५।६६; २. म० पु० १८०।६२; ३. का० ख० १००।१३१-१३२।

आभूतसम्प्लवं यावत् स्थाणुभूतः स्थितः प्रभुः ।
गुह्यानां परमं गुह्यमविमुक्तमिति स्मृतम्[1] ॥

भगवान् शङ्कर महाप्रलय में भी स्थाणु होकर स्थित रहते हैं। यह अविमुक्त (काशी) क्षेत्र गोपनीयों में भी अत्यन्त गोपनीय है।

मोक्षाय सर्वजन्तूनामस्मिन्नानन्दकानने ।
प्राप्नुवन्ति परं ज्ञानं यत्र कुत्रापि वै मृताः[2] ॥

इस आनन्दकानन (काशी-क्षेत्र) में समग्र जन्तुगण जहाँ कहीं भी शरीर-त्याग करने पर ज्ञान प्राप्त कर मोक्ष-पद प्राप्त करते हैं।

अतर्कितं समभ्येत्य यमदूताः सुदारुणाः ।
बद्ध्वा पाशैर्हनिष्यन्ति क्षिप्रं काशीं ततः श्रयेत् ॥
न पापेभ्यो भयं यत्र न भयं यत्र वै यमात् ।
न गर्भवासभीर्यत्र तां काशीं को न संश्रयेत्[3] ॥

शङ्कर जी विष्णु भगवान् से कहते हैं कि अत्यन्त दारुण यमदूतगण अतर्कित रूप से आकर पाशों में बाँधकर मारेंगे, यह सोचकर शीघ्र ही काशी का आश्रय लेना चाहिए।

जिस काशी में न पाप का भय है, न यमराज का भय है एवं न गर्भवास का ही भय है, ऐसी काशी का कौन आश्रय नहीं लेना चाहता ?

अद्य प्रातः परश्वो वा मरणं प्राप्यमेव च ।
यावत्कालविलम्बोऽस्ति तावत्काशीं समाश्रयेत्[4] ॥

शिव जी भगवान् विष्णु से कहते हैं कि आज, कल या परसों, मरना तो निश्चय ही है, जब तक काल-पाश का विलम्ब है, तब तक काशी का आश्रय ग्रहण कर लेना चाहिए; क्योंकि काशी के अतिरिक्त कहीं भी मुक्ति नहीं मिलती है।

त्रिविष्टपस्य द्रष्टारः स्रष्टारः स्युर्न संशयः ।
कृतकृत्या एत एवात्र त एवात्र महाधियः[5] ॥

त्रिविष्टप् (त्रिलोचन महादेव) का दर्शन करने वाले ही इस समस्त ब्रह्माण्ड के स्रष्टा होते हैं, अर्थात् उन्हें ब्रह्मा की संज्ञा मिलती है। वही मानव इस भूतल पर कृतकृत्य माना जाता है तथा वही परम बुद्धिमान् कहा गया है, जो त्रिविष्टप् का दर्शन करता है।

---

१. म० पु० १८२।४; २. शिवपुराण; ३. का० ख० २६।१४४-१४५।
४. वही—२६।१४६; ५. वही—७५।१४।

इत्यादिपापशीलोऽपि मुक्त्वैकं शिवनिन्दकम् ।
पापान्निष्कृतिमाप्नोति नत्वा लिङ्गं त्रिलोचनम्[1] ॥

इस प्रकार केवल शिव की निन्दा करने वालों को छोड़कर अत्यन्त पापी व्यक्ति भी काशी में त्रिलोचनेश्वर को प्रणाम कर सभी पापों से मुक्त हो जाता है ।

मात्रा पित्रा परित्यक्ता ये त्यक्ता निजबन्धुभिः ।
येषां क्वापि गतिर्नास्ति तेषां वाराणसी गतिः[2] ॥

शिव जी कहते हैं कि जो माता-पिता तथा निज बन्धुओं द्वारा त्यागे गये हैं, जिनकी कहीं गति नहीं है, उन सबकी वाराणसी-पुरी में गति होती है ।

जरया परिभूता ये ये व्याधिविकलीकृताः ।
येषां क्वापि गतिर्नास्ति तेषां वाराणसी गतिः[3] ॥

शङ्कर जी कहते हैं कि जो व्यक्ति वृद्धावस्था से पीड़ित हैं तथा व्याधियों से पीड़ित है एवं जिनकी कहीं गति नहीं है, उनकी वाराणसी में गति होती है ।

वदन्ति योगिनो देहं काशीरूपं विमुक्तिदम् ।

योगी लोग काशी का स्वरूप मुक्तिप्रद बतलाते हैं ।

आदौ काश्यां धर्ममार्गेण वासः पापत्यागः काशिमाहात्म्यदृष्टेः ।
देहं गेहं पुत्रमित्रादि यस्य सर्वं तुच्छं सोऽधिकारी महात्मा[4] ॥

सर्वप्रथम काशी में धर्मबुद्धिपूर्वक निवास करना चाहिए, पुनः काशी के माहात्म्य को जानकर पाप का त्याग करना चाहिए । जिसके लिए शरीर, घर एवं पुत्र-मित्रादि सब कुछ तुच्छ हो जाँय, वही महात्मा काशीवास का अधिकारी होता है ।

स्वस्वजात्यनुसारेण यो धर्मो यस्य कीर्तितः ।
तत्तद्धर्मपरैरेव सेव्या वाराणसी पुरी[5] ॥

अपनी-अपनी जाति के अनुसार जो-जो धर्म शास्त्रों में जिनके लिए कहे गये हैं, उन धर्मों में जो जाति तत्पर रहती है, उन्हीं मनुष्यों का वाराणसी (काशी) पुरी में निवास सफल होता है और वे व्यक्ति ही अपना जीवन सफल करते हैं ।

---

१. का० ख० ७५।३८ ; २. वही—३२।७४; ३. वही—३२।७५ ।
४. का० रह० २६।८७ ; ५. पद्मपु० वाराणसी-माहात्म्य ।

स्वर्लोकमभिगम्याथ काश्यां निर्वाणमाप्नुयात् ॥

स्वर्गलोक प्राप्त करके काशी में मोक्ष प्राप्त करने की इच्छा बनी रहती है, अतः काशीवास अवश्य करना चाहिए।

मोक्षं दद्यादन्यदेशेऽपि विष्णुर्वित्तं दद्यात्किं पुनः काशिकादौ[1] ॥

दूसरी जगह पर भी भगवान् विष्णु मोक्ष प्रदान करते हैं तथा धन देते हैं, ऐसी दशा में काशी आदि तीर्थों की क्या बात है ?

अर्थहीना यथा वाणी धर्महीना यथा तनुः ।
पतिहीना यथा नारी शिवहीना तथा क्रिया[2] ॥

अर्थविहीन वाणी, धर्मरहित शरीर एवं पतिविहीन नारी जैसे व्यर्थ होती है, उसी प्रकार शिवरहित समस्त क्रियाएँ व्यर्थ होती हैं। अर्थात् शिवपूजा एवं उपासना के विना सभी कर्म व्यर्थ हैं।

गङ्गाहीना यथा देशाः पुत्रहीना यथा गृहाः ।
दानहीना यथा सम्पच्छिवहीना तथा क्रिया ॥
मन्त्रिहीनं यथा राज्यं श्रुतिहीना यथा द्विजाः ।
योषाहीनं यथा सौख्यं शिवहीना तथा क्रिया[3] ॥

गङ्गा-विहीन देश, पुत्र-विहीन गृह तथा दानहीन सम्पत्ति जैसे व्यर्थ होती है, ठीक उसी प्रकार शिवहीन समस्त क्रियाएँ व्यर्थ होती हैं।

मन्त्रीरहित राज्य, वेदविहीन ब्राह्मण एवं स्त्रीरहित सुख जैसे व्यर्थ हैं, ठीक उसी प्रकार शिवविहीन समग्र क्रियाएँ व्यर्थ हैं।

दर्भहीना यथा सन्ध्या तिलहीनञ्च तर्पणम् ।
हविर्हीनो यथा होमः शिवहीना तथा क्रिया[4] ॥

कुशरहित सन्ध्या, तिलविहीन तर्पण एवं हविरहित होम जैसे व्यर्थ होते हैं, ठीक उसी प्रकार शिवहीन समस्त क्रियाएँ व्यर्थ होती हैं।

---

१. का० खं० २२।७५; २. का० खं० ८७।९० ।
३. वही—८७।९१-९२; ४. वही—८७।९३ ।

यः काशिकां प्राप्य जनो न मुञ्चति
श्रीमन्ममाऽऽज्ञापरिपालकः सः।
प्रसन्नरूपः खलु वै दिशामि
काश्यां स्थितिर्मरणं पापशून्यम्[१] ॥

जो सज्जन काशी प्राप्त करके भी मुक्त नहीं होते तथा मेरी आज्ञा का पालन करते हुये सर्वसम्पन्न होकर रहते हैं, ऐसे महापुरुषों को पापशून्य करके सदैव काशी में ही वास देता हूँ।

ततः काशीं पुनः प्राप्य कल्पान्ते मोक्षमाप्नुयात्[२] ।

इसके बाद पुनः काशी प्राप्त कर कल्पान्तर में मोक्ष को प्राप्त हो जाता है।

काशी धन्यतमा विमुक्तनगरी सालङ्कृता गङ्गया
तत्रेयं मणिकर्णिका सुखकरी मुक्तिर्हि तत्किङ्करी।
स्वर्लोकस्तुलितः सहैव विबुधैः काश्यां सह ब्रह्मणा
काशी क्षोणितले स्थिता गुरुतरा स्वर्गो लघुः खे गतः[३] ॥

श्रीगङ्गा जी के द्वारा शोभायमान भगवान् शिव की मुक्तिप्रदायिनी यह काशी नगरी अत्यन्त धन्य है। इस काशी में मणिकर्णिका स्थान अत्युत्तम है; क्योंकि सुखकारी मुक्ति उसकी दासी हो रही है। ब्रह्मा जी ने काशी तथा स्वर्गलोक की तुलना की, तो स्वर्ग हल्का पड़ा, इसीलिये ऊपर चला गया और श्री काशी जी भारी (गुरु) पड़ीं, इसलिये पृथ्वी पर रहीं। कहने का भाव यह है कि श्री काशी जी मुक्ति प्रदान करती हैं; परन्तु स्वर्ग में गया हुआ जीव सुख भोगकर (पुण्य की समाप्ति पर) पुनः मृत्युलोक में वापस आ जाता है। इसीलिये काशी को भारी कहा गया है।

न नाकलोके सुखमस्ति तादृशं
कुतस्तु पातालतलेऽतिसुन्दरे।
वार्तापि मर्त्ये सुखसंश्रया क्व वा
काश्यां हि यादृक् तनुमात्रधारिणी[४] ॥

काशी में शरीरधारी जीवमात्र को जो अपूर्व सुख प्राप्त होता है, वह सुख न अत्यन्त रमणीय स्वर्गलोक में है, न पाताल में ही है। रहा मृत्युलोक, उसमें तो सुखसम्बन्धी बात ही कहाँ है ?

---

१. का० रह० २४।४-५; २. का० ख० ११।१६०; ३. आदि शङ्कराचार्य जी।
४. का० ख० ४४।३८।

निर्विशन्ति सदा काश्यां फलान्यानन्दवन्त्यपि ।
सदैवानन्दभूः काशी सदैवानन्ददः शिवः[1] ॥

काशी आनन्ददायक फल देने वाली है । सदा काशी आनन्द की मोक्ष-भूमि है । काशी सदैव आनन्द प्रदान करने वाली तथा शिवमय है ।

काशीक्षेत्रं शरीरं त्रिभुवनजननी व्यापिनी ज्ञानगङ्गा ।
भक्तिः श्रद्धा गयेयं निजगुरुचरणध्यानयोगः प्रयागः[2] ॥

काशी-क्षेत्र शरीर है । ज्ञानस्वरूप सर्वत्र व्यापिनी त्रिभुवनजननी गङ्गा हैं । भक्ति और श्रद्धा गया है तथा अपने गुरुचरण का ध्यान-योग प्रयाग है ।

भूतग्रामोऽखिलोऽप्यत्र मुक्तिक्षेत्रे कृतालयः ।
कालेन निधनं यातो यात्येव परमां गतिम्[3] ॥

सम्पूर्ण जीवमात्र यदि इस मुक्तिक्षेत्र (काशी) में अपना निवास बनाते हैं तथा समयानुसार मृत्यु को प्राप्त करते हैं, तो वे परम गति को प्राप्त करते हैं ।

काशी निर्विघ्नजननी काशी मोक्षस्य सत्खनिः ।

यह काशी निर्विघ्न की जननी है और मोक्ष की खान है ।

हिताय सर्वजन्तूनां मुमुक्षूणां विशेषतः ।

काशी में सभी जन्तुओं के हित के लिए, विशेषकर मुमुक्षुवों के लिए विश्वनाथ जी मोक्ष-क्षेत्र खोले हुए हैं ।

कृत्वा कर्माण्यकामानि कल्याणानीतराणि च ।
तानि क्षणात् समुत्क्षिप्य काशीसंस्थोऽमृतो भवेत्[4] ॥

श्री कार्तिकेय जी कहते हैं कि निष्काम कर्म द्वारा एवं अन्य पुण्य-कर्मों द्वारा काशीवासी तत्काल अमृतस्वरूप हो जाता है ।

सूच्यग्रमात्रमपि नास्ति समास्पदेऽस्मिन्
स्थानं सुरेश्वरि ! मृतस्य यत्र न मोक्षः[5] ॥

शङ्कर जी कहते हैं कि हे देवेश्वरि ! काशी में सूच्यग्रभाग मात्र भी ऐसी भूमि नहीं है, जहाँ मोक्ष न मिलता हो; अपितु काशी की सम्पूर्ण भूमि मोक्ष को देने वाली है ।

---

१. का० ख० ५२।२१; २. काशीवैभव; ३. का० ख० ८५।१२१ ।
४. काशीदर्शन; ५. वही ।

दानं यज्ञं पूजनं कुर्वतां यत्प्राप्यं काशी लीलया तत्प्रदद्यात् ।
सत्यादौ यद्दुर्लभं स्वात्मरूपं तिष्ये काशी सम्प्रदद्यादपाये[1] ।।

दान, यज्ञ तथा पूजन करने वालों को जो पुण्य प्राप्त होता है, वह काशी में अनायास ही प्राप्त हो जाता है। सतयुग आदि में जो स्वात्मरूप दुर्लभ ज्ञान था, वह काशी जीवों को मरते समय पुष्य नक्षत्र में सम्प्रदान करती है।

अयमेव हि वै धर्मः काशीसेवनसम्भवः ।
रुषितादपि रुद्रान्मां रक्षिष्यति न संशयः ।।
अवाप्य काशीं दुष्प्रापां को जहाति सचेतनः ।
रत्नं करस्थमुत्सृज्य कः काचं सञ्जिघृक्षति ।।
वाराणसीं समुत्सृज्य यस्त्वन्यत्र यियासति ।
हत्वा निधानं पादेन सोऽर्थमिच्छति भिक्षया[2] ।।

यह काशीसेवनजनित धर्म ही मुझे भगवान् शङ्कर के कोपानल से बचावेगा। इसमें कुछ सन्देह नहीं है।

कौन सचेतन (बुद्धिमान्) मनुष्य परमदुर्लभ काशीधाम को प्राप्त कर पुनः उसे छोड़ सकता है ? (भला) ऐसा कौन होगा, जो हाथ में रखे हुए रत्न को त्याग कर काँच का संचय करना चाहेगा ?

जो कोई वाराणसी (काशी) को त्याग कर अन्यत्र किसी स्थान पर जाना चाहता है, वह तो मानो अमूल्य निधि को लात मात कर भिक्षा से अतिसंचय की इच्छा करता है।

पुत्रमित्रकलत्राणि क्षेत्राणि च धनानि च ।
प्रतिजन्मेह लभ्यन्ते काश्येका नैव लभ्यते ।।
येन लब्धा पुरी काशी त्रैलोक्योद्धरणक्षमा ।
त्रैलोक्यैश्वर्यदुष्प्रापं तेन लब्धं महासुखम्[3] ।।

इस संसार में पुत्र, मित्र, कलत्र, क्षेत्र एवं धनादिक तो प्रत्येक जन्म में प्राप्त हो सकते हैं; परन्तु एक काशी ही अनेक जन्मों में भी नहीं प्राप्त होती।

जिस भाग्यवान् जन ने त्रैलोक्य का उद्धार करने में समर्थ काशीपुरी को प्राप्त कर लिया, उसने त्रैलोक्य के ऐश्वर्य में दुर्लभ महासुख ही प्राप्त कर लिया।

---

१ का० रह० २।३९; २ का० ख० ४६।३७-३९; ३. वही—४६।४०-४१।

या गङ्गादिसमस्ततीर्थशरणं या देवतानां दैवतम् ।
सा काशी मम शङ्करस्य वसतिः प्रार्थ्या न कैः सद्गुणैः[१] ॥

जो गङ्गादि समस्त तीर्थों का आश्रय है, देवताओं की देवता है, वही काशी भगवान् शङ्कर की निवास-भूमि है। वह काशी किन सद्गुणों से अभिलाषयोग्य नहीं है।

क्व काशिका विश्वपदप्रकाशिका
क्व कार्यमन्यत्परितोऽतिदुःखम् ।
तत्पण्डितोऽन्यत्र कुतः प्रयाति
किं याति कूष्माण्डफलं ह्यजास्ये ॥
काशीं प्रकाशीकृतपुण्यराशिं
हा शीघ्रनाशी विसृजेन्नरः किम् ।
नूनं स्वनूनं सुकृतं तदीयं
मदीयमेवं विवृणोति चेतः[२] ॥

कहाँ विश्वपद को प्रकाशित करने वाली काशी और कहाँ अति दुःखों से घिरे हुए अन्य प्रकार के कार्य ? तब पण्डितजन काशी को त्याग कर अन्यत्र क्यों जायेंगे ? क्या कौंहड़े का फल कभी बकरे के मुख में प्रविष्ट हो सकता है ?

अति नश्वर मनुष्य परम-पुण्य-प्रकाशिका इस काशिका का परित्याग क्यों करता है ? मेरे चित्त में यही विचार आता है कि अवश्य ही उसके पुण्य का क्षय हो गया है।

या काशी जनताघसङ्घशमनी संदर्शनान्मज्जनात्[३] ।

जो काशी मात्र स्नान और दर्शन से जनता के पाप-समूहों को नष्ट कर देती है, वह काशी क्यों न वास करने योग्य हो, क्यों न दर्शनीय हो ?

कैलाशादधिका काशी सर्वदैव प्रकाशिका ।
कैलाशे शङ्करोऽप्येकः काश्यां सर्वेऽपि शङ्कराः[४] ॥

काशी कैलाश (पर्वत) से अधिक महत्त्वपूर्ण है; क्योंकि अँधेरी रात में कैलाश दिखाई नहीं पड़ता तथा कैलाश के शङ्कर भी एक ही हैं; किन्तु काशी सर्वदा प्रकाश करती रहती है एवं काशी में जितने शिवलिङ्ग हैं, सब भगवान् शङ्कर के स्वरूप हैं। अस्तु काशी के कंकण भी शङ्कर माने जाते हैं।

---

१. का० रह० २।१२३; २. का० ख० ५।१५-१६। ३. काशीमूलरहस्य; ४. वही।

विश्वेशानुगृहीतानां विच्छिन्नाखिलकर्मणाम् ।
भवेत्काशीं प्रति मतिर्नेतरेषां कदाचन ॥

जो विश्वेश्वर के अनुग्रह-पात्र हैं, जिनके पापकर्म नष्ट हो गये हैं, उन्हीं की काशीवास की बुद्धि होती है, दूसरों की कभी नहीं होती है।

काशीनाथं समाश्रित्य कुतः कालभयं नृणाम् ।
क्रुद्धोऽपि जीवहृत्कालस्तच्च काश्यां सुमङ्गलम् ॥

काशीनाथ को प्राप्त कर लोगों को काल का भय नहीं रहता। क्रुद्ध होने पर भी काल जीव (प्राण) का हरण ही करता है और वह भी काशी में मङ्गल-कारक ही होता है।

अन्यत्र योगाज्ज्ञानाद्वा संन्यासादथवान्यतः ।
वाराणस्याः परं स्थानं न भूतो न भविष्यति ॥

काशी से अन्यत्र योग से, ज्ञान से, संन्यास से अथवा अन्य उपायों से मुक्ति प्राप्त होती है। वाराणसी (काशी) से बढ़कर मुक्ति देने वाला न कोई स्थान है, न होगा, न हुआ है।

सर्वतीर्थमयी गौरी सर्वदेवमयी शिवा ।
सर्वधर्ममयी नित्या पूज्या काश्यां विशेषतः[1] ॥

काशीपति विश्वनाथ जी अन्नपूर्णा जी से कहते हैं कि हे शिवा! (भवानी!) यह काशी सर्वतीर्थमयी है, अर्थात् सभी तीर्थों से पूर्ण है, सभी देवों से पूर्ण है। यह काशी नित्य तथा सर्वधर्मयुक्त है। अतः काशी विशेष रूप से पूज्य है।

विश्वनाथो ह्यहं नाथः काशिका मुक्तिकाशिका ।
सुधातरङ्गा स्वर्गङ्गा त्रय्येषा किन्न यच्छति ॥

पञ्चक्रोश्या परिमिता तनुरेषा पुरी मम ।
अविच्छिन्नप्रमार्णाधिर्भक्तनिर्वाणकारणम्[2] ॥

मैं विश्वनाथ ही नाथ हूँ, काशी मुक्तिकाशिका है, स्वर्गङ्गा अमृत का तरङ्ग है, ये तीनों क्या नहीं दे सकते? अविच्छिन्न सम्पत्तियों से युक्त, पञ्चक्रोशी-पर्यन्त मेरी शरीररूपा यह पुरी भक्तों को मोक्ष प्रदान करने वाली है।

---

१. कल्पवल्ली; २. का० ख० ५५।४३-४४।

एकत्र चतुरो मासान् मासौ वा निवसेत् पुनः ।
अविमुक्ते प्रविष्टानां विहारस्तु न विद्यते[1] ॥

वे (चातुर्मास में) एक स्थान में केवल चार मास या दो मास तक निवास कर सकते हैं; किन्तु अविमुक्त (काशी) महाक्षेत्र में निवास करने वाले संन्यासियों के लिए यह विहार का विधान नहीं है, वे काशी में सदैव निवास कर सकते हैं ।

संसारभारखिन्नानां यातायातकृतां सदा ।
एकैव मे पुरी काशी ध्रुवं विश्रामभूमिका[2] ॥

जो सदा संसार के यातायात से खिन्न हैं, उनके लिए हमारी 'काशी' पुरीं ही एक विश्राम-भूमि है और यह मोक्ष प्रदान करती है ।

करणानीह चात्मानमपुनर्भवभाविताः ।
तं वै प्राप्य महात्मानमीश्वरं निर्भयाः स्थिताः[3] ॥

मोक्षार्थी महात्मा परमात्मा शिव को प्राप्त करके काशी में निर्भय होकर निवास करते हैं ।

योगक्षेत्रं तपःक्षेत्रं सिद्धगन्धर्वसेवितम् ।
सरितः सागराः शैला नाविमुक्तसमा भुवि[4] ॥

यह काशी योग तथा तप का क्षेत्र है । भूमण्डल में नदी, सागर तथा शैल (पर्वत) आदि कुछ भा काशी के सदृश नहीं है ।

एष क्षेत्रस्य विस्तारः प्रोक्तो देवेन धीमता ।
लब्धं योगं च मोक्षं च काङ्क्षतो ज्ञानमुत्तमम्[5] ॥

काशी का यह विस्तार देवेश ने वर्णन किया । यहाँ पर योग और मोक्ष के साथ उत्तम ज्ञान प्राप्त होता है ।

अन्यत्र दत्त्वा सर्वस्वं सुकृतं यत्समीरितम् ।
सहस्रभोजनात्काश्यां तद्भूयादयुताधिकम्[6] ॥

अन्यत्र सर्वस्व दान कर देने से जो पुण्य कहा गया है, वह काशी में सहस्र (ब्राह्मण) भोजन करा देने से ही दश सहस्र गुना से भी अधिक फलप्रद होता है ।

---

१. म० पु० १८४।३३ । २. का० ख० ५५।४५ ; ३. म० पु० १८४।३५ ।
४. वही—१८४।५४; ५. वही—१८४।५२ ; ६. का० ख० २६।८९ ।

अविमुक्तं समासाद्य यो लिङ्गं स्थापयेत्सुधीः ।
कल्पकोटिशतैर्वापि नास्ति तस्य पुनर्भवः ।।
ग्रहनक्षत्रताराणां कालेन पतनं ध्रुवम् ।
अविमुक्ते मृतानां तु पतनं नैव विद्यते[1] ।।

ब्राह्मण स्कन्द जी से कहते हैं कि जो बुद्धिमान् विद्वान् अविमुक्त क्षेत्र (काशी) को प्राप्त कर शिवलिङ्ग की स्थापना करते हैं, उनका पुनर्जन्म सौ-सौ कल्प-कोटि के बाद भी नहीं होता ।

आकाशस्थ (स्वर्गस्थ) ग्रह, नक्षत्र तथा ताराओं का समयानुसार पतन निश्चित होता है, अर्थात् काल इन्हें कवलित करता है; किन्तु अविमुक्त,क्षेत्र (काशी) में मरने वाले का पतन कभी भी नहीं होता ।

अहं ममाभिमानोत्थैर्दुःखैः पापच्यते जनः ।
अभेददृष्टिः सर्वत्र ज्ञानदाऽज्ञाननाशिनी ।।
वैराग्यादिमहामुख्यैः साधनैः सम्प्रवर्तते ।।

अहं तथा 'यह मेरा है' इस प्रकार के अभिमान से उत्पन्न दुःखों से लोग युक्त हो जाते हैं। सभी जगह अभेदबुद्धि ज्ञानदायिनी तथा अज्ञाननाशिनी है और ऐसी बुद्धि वैराग्य आदि महामुख्य साधनों से प्राप्त होती है ।

यल्लिङ्गं दृष्टवन्तौ हि नारायणपितामहौ ।
तदेव लोके वेदे च काशीति परिगीयते[2] ।।

जिस शिवलिङ्ग का नारायण और ब्रह्मा ने दर्शन किया, वही लोक एवं वेद में 'काशी' नाम से कहा जाता है ।

तेन सा महती पुण्या पुरी रुद्र ! भविष्यति ।
पुण्या चोदङ्मुखी गङ्गा प्राची चैव सरस्वती ।।
उदङ्मुखी योजने द्वे गच्छते जाह्नवी नदी[3] ।।

हे रुद्र ! इसी से वह काशी बहुत बड़ी पुण्या पुरी होगी, जहाँ उत्तरमुख (उत्तरवाहिनी) गङ्गा तथा पूर्ववाहिनी सरस्वती हैं एवं जहाँ दो योजन तक उत्तर मुख करके बहने वाली जाह्नवी (गङ्गा) नदी है ।

---

१. का० ख० ६४।९५–९६; २. पद्मपुराण; ३. ब्रह्मपुराण ।

सर्वक्षेत्रेषु भूपृष्ठे काशीक्षेत्रं च मे वपुः ।
त्रिशूलकण्टकाग्रे मे सदा तिष्ठति निर्भयम्[1] ॥

शङ्कर जी पार्वती जी से कहते हैं कि भूमण्डल के समस्त क्षेत्रों में काशी-क्षेत्र हमारा शरीर है। मेरे त्रिशूल के कण्टक के अग्रभाग पर यह काशी निर्भय होकर स्थित है।

"जन्मान्तरकृतान् सर्वान् दोषान् वारयतीति तेन वारणा भवतीति। सर्वानिन्द्रियकृतान् पापान् नाशयतीति तेन नासी भवतीति। वरणायां नास्यां च मध्ये प्रतिष्ठिता 'वाराणसी' इति[2] ।

जन्मान्तर में किये गये सभी दोषों को नष्ट करने से 'वारणा' कही जाती है तथा सभी इन्द्रिय-दोषों को नष्ट करने से 'नासी' कही जाती है। इन दोनों नदियों के मध्य में यह 'वाराणसी' नगरी प्रतिष्ठित है।

["काश्यां मरणान्मुक्तिः" यह वचन इस काशी के लिए ही है। जैसे अंशुमाली भगवान् भास्कर को देखने में वितस्ति मात्र का मण्डल सारे जगत् को प्रकाशित कर रहा है, ठीक उसी भाँति यह भौतिक काशी-मण्डल सारे जगत् को काशी से व्याप्त कर प्रकाशित करता है, इसमें रंचमात्र भी अतिशयोक्ति नहीं समझनी चाहिए।]

यैर्दृष्टा यैः श्रुता काशी यैः स्मृता कीर्तिता तथा।
त एव वन्द्याः पूज्याश्च कृतार्था मुक्तिभागिनः[3] ॥

काशी को जिन्होंने देखा, सुना, स्मरण किया तथा काशी का कीर्तन ("हर-हर महादेव शम्भो काशी विश्वनाथ गङ्गे") किया, वे ही वन्दनीय एवं पूज्य हैं और वे ही मुक्ति के भागी भी हैं।

ये च योगपरिभ्रष्टास्तपोदानविवर्जिताः ।
येषां क्वापि गतिर्नास्ति तेषां वाराणसी गतिः[4] ॥

जो व्यक्ति योग से भ्रष्ट हैं, तप और दान से रहित हैं तथा जिनको कहीं गति नहीं है, उनकी वाराणसी में ही गति है।

---

१. काशी-केदारमाहात्म्य, पृ० ५६६ ; २. स्कन्दपुराण।
३. का० रह० २६।८६; ४. का० ख० ३२।८०।

अहं विचार्याखिलशास्त्रजालं सुखस्य मोक्षस्य निधानमेकम् ।
प्रसन्न एवं खलु वै दिशामि काश्यां स्थितिर्मरणं पापशून्यम् ॥

श्री विष्णु भगवान् कहते हैं कि मैंने सम्पूर्ण शास्त्रों का विचार कर लिया है, जिससे यह अर्थ निकला है कि सुख और मोक्ष का एक ही उपाय है कि प्रसन्नचित्त द्वारा काशीवास करते हुए सम्पूर्ण पापों से शून्य मरण-काल की स्थिति प्राप्त हो जाती है।

पितॄन्सन्तर्प्य विधिवत्तीर्थे श्रीकुण्डसंज्ञिते ।
दत्वा दानानि विधिवन्न लक्ष्म्या परिमुच्यते ॥

काशीस्थ लक्ष्मीकुण्ड (लक्ष्मी-तीर्थ) में विधिपूर्वक पितरों का तर्पण और विविध दान करने से मनुष्य सदैव लक्ष्मीवान् बना रहता है, अर्थात् सदा धनी होता है।

तत्परं परमज्योतिः काशीति प्रथितं श्रुतौ ।
तस्मात्काशी ब्रह्मरूपाऽजडा पृथ्व्या न सङ्गता[1] ॥

वेदों में परमज्योति परात्पर काशी प्रख्यात है, अतः काशी ब्रह्मरूपिणी है और चेतन है, इसका भूतल से कोई सम्बन्ध नहीं है।

तदेव काशिकेत्येतत्प्रोच्यते क्षेत्रमुत्तमम् ।
परं निर्वाणसंख्यानं सर्वोपरि विराजितम् ॥
अस्यानन्दवनं नाम पुराकारि पिनाकिना ।
क्षेत्रस्यानन्दहेतुत्वादविमुक्तमनन्तरम्[2] ॥

इस काशी-क्षेत्र को अन्य क्षेत्रों की अपेक्षा अत्युत्तम कहा गया है तथा यह क्षेत्र पर-निर्वाण (सद्योमुक्ति) प्रदान करने वाला है। भगवान् शङ्कर ने इसको पूर्व में आनन्दवन नाम से अभिहित किया था; क्योंकि यह क्षेत्र आनन्द का हेतु है और शीघ्र ही मुक्ति को प्रदान करने वाला है।

काशीविश्वेशयोर्भक्त्या तन्नामजपकारकाः ।
निर्लिप्ताः कर्मभिर्नित्यं कैवल्यपदभागिनः[3] ॥

जो प्राणी काशी-नगरी तथा भगवान् विश्वनाथ की भक्ति के सहित भूतभावन शिव का जप करता है एवं कर्मों से निर्लिप्त होकर काशीवास करता है, वह अवश्य ही कैवल्य-पद को प्राप्त कर लेता है।

---

१. ब्रह्मवैवर्तपुराण; २. रुद्रसंहिता—२।१।६; ३. शतरुद्रसंहिता—४३।३३।

वाराणसीति काशीति रुद्रावास इति स्फुटम् ।
मुखाद्विनिर्गतं येषां तेषां न प्रभवेद्यमः[1] ॥

"वाराणसी, काशी, रुद्रावास" इस प्रकार जिनके मुख से स्पष्ट रूप से उच्चारण होता है, उनके ऊपर यम का कोई प्रभाव नहीं पड़ता है ।

काश्यां प्रदीपप्रभया प्रकाशितः
पापान्धकारः खलु नाशमेति ।
विश्वेशदेहोद्भवया सुविद्यया
महात्मनां पुण्यकृतां कृतात्मनाम्[2] ॥

दीपक के प्रकाश से जिस प्रकार अन्धकार नष्ट हो जाता है, उसी प्रकार काशी में रहने वाले पुण्यवान् आत्मसंयमी महात्माओं का श्रीविश्वनाथ की कृपा से प्राप्त हुई विद्या के द्वारा पापरूपी अन्धकार नष्ट हो जाता है ।

ददामि० यो वरं देवदुर्लभं योगिनामपि ।
दत्तो मोक्षस्तु भवतां पुनरावृत्तिवर्जितः ॥

शङ्कर जो कहते हैं कि जो काशी देवताओं और योगियों के लिए दुर्लभ है, उसमें मैं वह वरदान देता हूँ और मोक्ष देता हूँ, जिससे पुनर्जन्म नहीं होता है ।

देहत्यागोऽत्र वै योगः काश्यां निर्वाणसौख्यकृत् ।
प्राप्योत्तरवहां काश्यामतिदुष्कृतवानपि[3] ॥

ब्रह्मर्षि अगस्त्य जी कहते हैं कि देहत्याग का योग काशी में मोक्ष को देने वाला है । अन्यत्र दुष्कर्म करने वाला व्यक्ति भी उत्तरवाहिनी भागीरथी गङ्गा में स्नान कर मुक्त हो जाता है ।

श्रुतिस्मृतिविहीना ये शौचाचारविवर्जिताः ।
येषां क्वापि गतिर्नास्ति तेषां वाराणसी गतिः[4] ॥

जो लोग श्रुति-स्मृति द्वारा विहित आचार-विचार से विहीन हैं एवं जिनकी कहीं गति नहीं है, उनकी वाराणसी ही गति है, अर्थात् उनका उद्धार काशी में होता है ।

---

१. का० ख० ५५।३७; २. का० रह० ११।६१; ३. का० ख० ३०।१६ ।
४. वही— ३२।७९ ।

काश्यां स्थितानां जन्तूनामविचारितकर्मणाम् ।
न सुखं न परा शान्तिस्तस्मात्काश्यां विचारकृत्[१] ॥

काशी में रहकर अविवेकपूर्ण कार्य करने वाले व्यक्ति को श्रेष्ठ सुख और शान्ति नहीं प्राप्त होती है, इसलिए काशी में विचारपूर्वक ही कार्य करना चाहिए।

भवन्ति काश्यां सफलानि तानि मोक्षावसानानि सुसाधनानि ।
सदा सदानन्दमये ममालये मया सहायेन सुसाधितानि[२] ॥

भगवान् शङ्कर जी कहते हैं कि सदा सदानन्दमय मेरे घर (काशी) में किये गये मोक्षावसान वे सभी साधन, दान, तप, जप आदि सफल होते हैं।

शान्तैर्दान्तैस्तपस्तप्तं यत्किञ्चिद् धर्मसंज्ञितम् ।
सर्वं च तदवाप्नोति अविमुक्ते जितेन्द्रियः[३] ॥

अपनी इन्द्रियों को वश में रखकर शान्त चित्त से की गयी तपस्या से एवं विहित कर्मों के आचरण से जो फल मिलते हैं, वे सब अविमुक्त (काशी) क्षेत्र में जितेन्द्रिय को प्राप्त हो जाते हैं।

अमरा ह्यक्षयाश्चैव क्रीडन्ति भवसन्निधौ ।
क्षेत्रतीर्थोपनिषदमविमुक्तं न संशयः[४] ॥

ऐसे लोग अमर और अविनश्वर रूप में शिव के समीप क्रीड़ा करते हैं। यह अविमुक्त (काशी) क्षेत्र अन्य स्थानों और तीर्थों का संवित्स्वरूप प्रकाश है, इसमें सन्देह नहीं है।

देहाभिमानिनां सौख्यमृषीणामपि दुर्लभम् ।
अत्रानन्दवने ज्ञानमाच्छादयति दुर्मतिम्[५] ॥

देहाभिमानियों को जो सुख है, वह ऋषियों के लिए भी दुर्लभ है, ऐसा समझने वाला यदि इस आनन्दवन (वाराणसी-क्षेत्र) में आकर निवास करता है, तो उसे यथार्थ ज्ञान होता है, जिससे उसकी दुर्बुद्धि नष्ट हो जाती है।

---

१. का० रह० ८।६३ ; २. वही—८।६२ ; ३. म० पु० १८५।५६ ।
४. वही—१८५।५८ ; ५. का० रह० ८।५८ ।

तत्त्वं तु परमं ज्ञातं यज्ज्ञात्वाऽमृतमश्नुते ।
स्वस्ति तेऽस्तु गमिष्यामो भूर्लोकं शङ्करालयम् ॥
यत्रासौ सर्वभूतात्मा स्थाणुभूतः स्थितः प्रभुः ।
सर्वलोकहितार्थाय तपस्युग्रे व्यवस्थितः[1] ॥

हमने उस परम तत्त्व को जान लिया, जिसे जानकर अमरत्व (मोक्ष) की प्राप्ति होती है। आपका कल्याण हो, अब हम लोग पृथ्वीलोक में शिव जी के उस निवास स्थान पर जा रहे हैं, जहाँ सभी जोवों के आत्मस्वरूप सामर्थ्यशाली शिव स्थाणुरूप में स्थित हैं।

स्थानं गुह्यं श्मशानानां सर्वेषामेतदुच्यते ।
न हि योगादृते मोक्षः प्राप्यते भुवि मानवैः ॥
अविमुक्ते निवसतां योगो मोक्षश्च सिद्धयति ।
एक एव प्रभावोऽस्ति क्षेत्रस्य परमेश्वरि ॥
अनेन जन्मनैवेह प्राप्यते गतिरुत्तमा[2] ॥

समग्र श्मशानों में यह अविमुक्त गुह्य स्थान कहा गया है। मनुष्य संसार में योग के बिना मोक्ष को नहीं प्राप्त कर सकते; किन्तु अविमुक्त (काशी) क्षेत्र में निवास करने वालों के लिए योग और मोक्ष, दोनों ही सिद्ध हो जाते हैं। हे परमेश्वरि! इस अविमुक्त-क्षेत्र का एक हो प्रभाव है कि इसी जन्म में और यहीं उत्तम गति को प्राप्त किया जा सकता है।

तपोबलादीश्वरयोगनिर्मितं न तत्समं ब्रह्मदिवौकसालयम् ।
मनोरमं कामसमं ह्यनामयमतीत्य तेजांसि तपांसि योगवत्[3] ॥

यह काशी शिव जी के तपोबल एवं उनकी योग-महिमा से निर्मित है, अतः इसके समान ब्रह्मलोक तथा स्वर्गलोक भी नहीं हैं। यह (काशी) मनोरम, अभिलाषा को पूर्ण करने वालो, रोगरहित, तेज और तपस्या से परे तथा योगयुक्त है।

अधिष्ठितस्तु तत्स्थाने देवदेवो विराजते ।
तपांसि यानि तप्यन्ते व्रतानि नियमांश्च ये ॥
सर्वतीर्थाभिषेकं तु सर्वदानफलानि च ।
सर्वयज्ञेषु यत्पुण्यमविमुक्ते तदाप्नुयात्[4] ॥

इस अविमुक्त (काशी) क्षेत्र में देवाधिदेव शङ्कर सदा विराजमान रहते हैं।

---

१. म० पु० १८५।५-६; २. वही—१८५।१५-१६; ३. वही—१८५।५२।
४. वही—१८५।५३-५४।

सभी प्रकार के तप, व्रत, नियम, सम्पूर्ण तीर्थों में स्नान, सभी प्रकार के दान एवं सभी प्रकार के यज्ञों के अनुष्ठान से जो पुण्य प्राप्त होता है, वह अविमुक्त (काशी) क्षेत्र में निवास करने मात्र से ही प्राप्त हो जाता है।

सर्वे वर्णा आश्रमाश्च बालयौवनवार्द्धकाः।
अस्यां पुर्यां मृताश्चेत्स्युर्मुक्ता एव न संशयः॥

इस काशीपुरी में शरीरत्याग करने वाला चाहे वह किसी भी वर्णाश्रम का हो तथा किसी भी अवस्था (बाल, युवा, वृद्ध) का हो, मुक्त हो जाता है। इसमें किसी भी प्रकार का संशय नहीं है।

काश्यां पापं ये प्रकुर्वन्ति नित्यं नानाशास्त्रैर्वेदसङ्घैर्निषिद्धम्।
तेऽपि ब्रह्म प्राप्नुवन्त्येव शीघ्रं ज्ञात्वा देवा विश्वनाथं तमूचुः[1]॥

अनेक प्रकार के वेदशास्त्र से निषिद्ध पापों को जो काशी में करते हैं, वे भी यदि काशी में शरीरत्याग करते हैं, तो वे परब्रह्म परमात्मा, ईश्वर को प्राप्त करते हैं, उनको देवता लोग विश्वनाथ ही कहते हैं।

काश्यां यथा पापकृतां महाभयं काश्यां तथा पुण्यकृतां महत्सुखम्।
अतः सुखार्थं प्रयतेत धर्मतो जीवज्जनो याति मृतः परं पदम्[2]॥

काशी में पाप करने वालों को जिस प्रकार महाभय प्राप्त होता है, वैसे ही पुण्य करने वालों को महासुख भी प्राप्त होता है। इसलिए धर्मपूर्वक जीवन-यापन करते हुए सुखस्वरूप परमात्मा की प्राप्ति के लिए पुण्य करने वाला व्यक्ति मरने के बाद परमपद (मोक्ष) को प्राप्त करता है।

नारायणपरः काश्यां महादेवपरोऽथवा।
भूत्वा सदाचारपरस्तिष्ठेत्काश्यां न चान्यथा[3]॥

भगवान् नारायण अथवा देवाधिदेव महादेव का भक्त होकर सदाचार करते हुए काशी में निवास करना चाहिए, अन्यथा नहीं।

हरिभक्तः शिवः साक्षाद्धरिः शिवपरायणः।
विचारतो न भेदोऽस्ति भक्त्या भेदः प्रकल्पितः[4]॥

भगवान् शिव नारायण के भक्त हैं, साक्षात् नारायण सदाशिव के भक्त हैं, विचारतः दोनों में कोई भेद नहीं है, मात्र भक्ति से कल्पित ही भेद है।

---

१. का० रह० १७।२८; २. वही—१६।६५; ३. वही—१९।७९।
४. वही—१९।८५।

धर्मार्थकाममोक्षाख्यं पुरुषार्थचतुष्टयम् ।
अखण्डं हि यथा काश्यां न तथाऽन्यत्र कुत्रचित्[1] ।।

पराशर जी ब्रह्मर्षि सूत जी को सम्बोधित करते हुए कहते हैं कि धर्म, अर्थ, काम एवं मोक्ष, ये चारों पुरुषार्थ काशी में जैसे अखण्ड हैं, वैसे दूसरी जगह कहीं भी नहीं हैं।

अन्येषामपि पापानां महापापजुषामपि ।
नाशयित्री पराकाशी विश्वेशसमधिष्ठिता ।।
महापातकतो मुक्तिः काश्यामेव शतक्रतो ! ।
महासंसारतो मुक्तिः काश्यामेव न चान्यतः ।।
निर्वाणनगरी काशी काशी सर्वाघसङ्घहृत् ।
विश्वेशितुः प्रिया काशी द्यौः काशीसदृशी न हि[2] ।।

भगवान् विश्वेश्वर से समधिष्ठित यह काशी सभी पापों एवं महापापियों की मोक्ष-नगरी है। हे शतक्रतो ! (इन्द्र !) समग्र महापापों से मुक्ति काशी में ही होती है एवं संसार-सागर से मुक्ति भी यहीं होती है, अन्यत्र कहीं भी नहीं। निर्वाण-नगरी यह काशी भगवान् विश्वेश्वर (विश्वनाथ) को अत्यन्त प्रिय है, इसके समान स्वर्ग लोक भी नहीं है।

ब्रह्महत्याभयं यस्य यस्य संसारतो भयम् ।
जातु चित्तेन न त्याज्या काशिका मुक्तिकाशिका[3] ।।

जिसको ब्रह्महत्या का भय हो तथा जिसे संसार से भय हो, उसे कभी भी मुक्तिप्रकाशिका काशिका को चित्त से नहीं भूलना चाहिए।

वाराणसी तु भुवनत्रयसारभूता
रम्या पुरी मम सदा गिरिराजपुत्रि ! ।
अत्रागता विविधदुष्कृतकारिणोऽपि
पापक्षयाद्विरजसः प्रतिभान्ति मर्त्याः[4] ।।

हे पार्वति ! यह वाराणसी तीनों लोकों की सारभूत है। यहां आने पर पापी मनुष्य भी पापक्षय हो जाने से निष्पाप होकर सुशोभित होते हैं।

---

१. का० ख० ३।८५ ; २. वही—८१।८-१० ; ३. वही—८१।११ ।
४. सनत्कुमार-सं० ४२।७६ ।

कलौ न काशीवसतिः स्थिराभवेत् पापात्मनां दण्डपाणिप्रभावात् ।
ममाज्ञया दण्डनाथः शुभात्मा ह्युद्वासयिष्यत्यथ पापकर्तॄन्[1] ॥

दण्डपाणि कालभैरव जी के प्रभाव से काशी-क्षेत्र में कलियुगी घोर पापियों को स्थिर निवास नहीं मिलता है। भगवान् ने कहा है कि मेरी आज्ञा के अनुसार शुभात्मा दण्डनाथ समग्र पापियों को काशी-क्षेत्र से निश्चय ही बाहर कर देंगे।

निस्तीर्णास्ते सर्वधर्मैः कृतार्थाः
काशीं प्राप्य स्वानुभूतिं लभन्ते ।
कुर्वन्नित्थं पुण्यसारं समन्ताद्
भूयः काश्यां पापकृद् दुःखभाक् स्यात्[2] ॥

काशी को प्राप्त करके कृतार्थ होकर वे लोग विधि-निषेध से परे होकर स्वानुभूति को प्राप्त करते हैं, जो नित्य काशी में पुण्य करते हैं। पाप-कर्मों को करने वाले दुःख को प्राप्त करते हैं।

ब्रूहि मह्यं यथातत्त्वं यत्र नित्यं भवः स्थितः ।
माहात्म्यं सर्वभूतानां परमात्मा महेश्वरः ॥
घोररूपं समास्थाय दुष्करं देवदानवैः ।
आभूतसम्प्लवं यावत् स्थाणुभूतो महेश्वरः[3] ॥

जहाँ काशी में भगवान् विश्वनाथ जी नित्य विराजमान हैं, जो परमात्मा महेश्वर कहे जाते हैं, उनका तथा समस्त प्राणियों के माहात्म्य और घोररूप शिव का आश्रयण कर जो देव और दानवों के लिए भी दुष्कर हैं, वे स्थाणुभूत महेश्वर प्रलयपर्यन्त यहाँ (काशी-क्षेत्र में) निवास करते हैं।

शिवभक्तः काशिवासी ह्यर्जुनेन समोऽपि हि ।
यस्य स्वरूपं सर्वात्मा काश्यामुपदिशत्यलम्[4] ॥

काशी में निवास करने वाला शिव का वैसा भक्त हो जाता है, जैसे भगवान् श्रीकृष्ण के परमभक्त अर्जुन हैं। उस भक्त को भगवान् शिव काशी-क्षेत्र में अपने स्वरूप का दर्शन देते हैं।

---

१. का० रह० १८।६; २. वही—१८।९ ; ३. म० पु० १८१।३-४।
४. का० रह० १९।७९, ८३।

धार्मिकाणां धनैः पुत्रैः कलत्रैः किं प्रयोजनम् ।
धर्मसङ्ग्रहशीलाश्च यतस्ते काशिसंश्रयाः[1] ॥

काशी में निवास करने वाले धर्मसंग्रह में लगे जो धार्मिक लोग हैं, उनको धन, पुत्र, स्त्री आदि की क्या आवश्यकता है; क्योंकि धर्म ही सबका मूल है।

न देहो भविता तत्र दृष्टं शास्त्रे पुरातने ।
मोक्षो ह्यसंशयस्तत्र पञ्चत्वं तु गतस्य वै[2] ॥

प्राचीन शास्त्रों में निर्णय है कि जो काशी में शरीर छोड़ता है, निश्चय ही उसको मुक्ति हो जाती है।

यथा गयायां तृप्ताः स्युः पिण्डदाने पितामहाः ।
धर्मतीर्थे तथैव स्युर्न न्यूनं नैव चाधिकम्[3] ॥

जिस प्रकार गया जी में पिण्डदान करने से पितामहगण अर्थात् पितृगण तृप्त होते हैं, उसी प्रकार धर्मेश्वर तीर्थ में पिण्डदान करने से पितरगण तृप्ति को प्राप्त होते हैं, न तो उससे कम और न अधिक ही।

उपासते महात्मानं जपन्ति शतरुद्रियम् ।
स्तुवन्ति सततं देवं त्र्यम्बकं कृत्तिवाससम् ॥
ध्यायन्ति हृदये देवं स्थाणुं सर्वान्तरं शिवम्[4] ॥

काशी में निवास करने वाले वेदपारग ब्राह्मण महात्माओं की उपासना और शतरुद्रीय सूक्त का पाठ तथा कृत्तिवासेश्वर त्र्यम्बकदेव की स्तुति करते हैं और सर्वान्तर्यामी शिव स्थाणु देव का हृदय से ध्यान करते हैं।

विनाऽतिपुण्यसम्भारैः कः काशीं प्राप्तुमीहते ।
काशीप्राप्तिरयं योगः काशीप्राप्तिरिदं तपः ॥
काशीप्राप्तिरिदं दानं काशीप्राप्तिः शिवैकता[5] ॥

स्कन्द जी अगस्त्य मुनि से कहते हैं कि अत्यधिक पुण्यसमूहों के बिना कौन काशी को प्राप्त करने में समर्थ हो सकता है? काशी की प्राप्ति ही योग है, काशी की प्राप्ति ही तप है, काशी की प्राप्ति ही दान है और काशी की प्राप्ति ही शिव जी की एकता तथा विश्वनाथ जी की प्राप्ति है।

---

१. का० रह० ९।३७ ; २. म. पु. १८४।३४; ३. का० ख० ८१।३३ ।
४. पद्मपु० ३९।२१; ५. का० ख० ४२।५४ ।

कोटिजन्मकृतपुण्यभारभृत् काशिकां समनुविश्य निर्मलः।
जायते विगतभारजीवनः शान्तिमाप्य परशान्तिभाजनम्[1] ॥

करोड़ों जन्मों के किये हुए पुण्य-भार को धारण करने वाला काशी में प्रवेश करके निर्मल हो जाता है और उसके भार से मुक्त-जीवन बन जाता है तथा शान्ति प्राप्त करता है, तत्पश्चात् परमशान्ति प्राप्त करता है।

क्षेममूर्त्तिरियं काशी क्षेममूर्त्तिर्भवान्भव।
क्षेममूर्त्तिस्त्रिपथगा नान्यत्क्षेमत्रयं क्वचित्[2] ॥

काशी कल्याणकारी क्षेममूर्त्ति है तथा भगवान् शङ्कर जी भी कल्याणमूर्त्ति हैं और भगवती गङ्गा जी भी कल्याण-मूर्त्ति हैं। ये तीनों कल्याण-मूर्त्ति अन्यत्र कहीं नहीं हैं।

ते गर्भवासे तिष्ठन्ति पुनस्ते गर्भवासिनः।
ये न गर्भवनच्छेत्रीं सेवन्ते वरणासिम्[3] ॥

वे गर्भवास में रहते हैं, जिन्होंने गर्भरूपी वन का छेदन करने वाली काशीपुरी वरणा और असी के बीच का दर्शन और सेवन नहीं किया, उन्हीं को पुनः जन्म भी लेना पड़ता है।

मातुराज्ञामथ प्राप्य जनन्या सह पक्षिराट्।
क्षणाद्वाराणसीं प्राप मोक्षनिक्षेपभूमिकाम्[4] ॥

माता जी की आज्ञा पाकर पक्षिराज गरुड़ माता जी के साथ मोक्ष-निक्षेप-भूमि काशीपुरी आये।

विश्वेशो जनको ह्युमा च जननी गङ्गा च मातृस्वसा।
ढुण्ढी-भैरव-दण्डपाणिसदृशा ज्येष्ठा मम भ्रातरः[5] ॥

काशी में विश्वेश्वर जी पिता हैं, अन्नपूर्णा जी माता हैं तथा ढुण्ढी, भैरव, दण्डपाणि ज्येष्ठ भ्राता के समान हैं।

कदाचिदपि केषाञ्चित्काश्यां मोक्षान्तरायकः।
तव पादाम्बुजद्वन्द्वे निर्द्वन्द्वा भक्तिरस्तु नः ॥
आकलेवरपातश्च काशीवासोऽस्तु नोऽनिशम्[6] ॥

जैगीषव्य ऋषि विश्वनाथ जी से कहते हैं कि कभी भी किसी को काशी में मोक्षप्राप्ति में बाधा नहीं होती है। अतः हे शिव ! आपके दोनों चरणकमलों में मेरी अटूट दृढ़ भक्ति हो तथा जब तक यह शरीर न छूट जाय, तब तक काशी में ही निरन्तर निवास हो।

---

१. का० रह० ६।६६; २. का० ख० ६४।३९; ३. वही—५०।१३५।
४. वही—५०।१३७; ५. काशीमूलरहस्य; ६. का. ख. ६४।५९-६०।

देवेषु च यथा शम्भुस्तीर्थमुख्येषु काशिका ।
व्रतेष्वेकादशी मुख्या पुराणेषु तथा त्विदम्[1] ॥

जैसे देवों में शम्भु विश्वनाथ जी हैं, तीर्थों में काशी है, व्रतों में एकादशी है, उसी प्रकार पुराणों में सर्वश्रेष्ठ स्कन्दपुराण है ।

तस्मात्प्रयत्नतः काश्यां ध्रुव ! श्रेयः समाश्रयेत् ।
काशीश्रेयःफलं पुंसामक्षयायोपजायते[2] ॥

हे ध्रुव ! इसलिए प्रयत्न करके काशी में रहकर अच्छा कर्म करना चाहिए । काशीवास के साथ सदाचरण करने से सभी पाप नष्ट हो जाते हैं ।

स्नानं सन्ध्या जपो होमः स्वाध्यायो देवतार्चनम् ।
वैश्वदेवं तथाऽऽतिथ्यं नवमं पितृतर्पणम्[3] ॥

काशी में स्नान, सन्ध्या, जप, होम, स्वाध्याय, देवतार्चन, वैश्वदेव, अतिथि-सेवा तथा नवाँ पितृतर्पण गृहस्थों को अवश्य करना चाहिए ।

तस्मादेतैर्विघ्नरूपैर्नृशंसैः संसेव्यन्ते काशिसौख्यप्रदानैः ।
काश्यां यदानन्दमयं महत्सुखं क्षुद्रं कथं कामयेत्काशिवासी[4] ॥

इसलिए विघ्नरूप क्रूर लोगों से सेवित होकर काशी में सुख प्रदान करते हुए निवास करते हैं । काशी में जब महासुख मिलता है, तो क्षुद्र सुखों को कौन चाहेगा ?

शृण्वन्तु लोकाः परमार्तियुक्ता रहस्यमन्त्रं परमादरेण ।
कलौ विनष्टव्रतधैर्यवीर्या गच्छन्तु काशीं परमार्तिनाशिनीम्[5] ॥

परम दुःख से युक्त लोग रहस्यमय इस तत्त्व को परम आदर से सुनते हैं कि कलियुग में जिनका व्रत, धैर्य एवं वीर्य नष्ट हो गया है, वे अपने कल्याण के लिए बड़े से बड़े दुःख को नष्ट करने वाली काशी में निवास करें ।

काश्यां येषां नाम गृह्णन्ति लोका बीजं तेषां जायते मोक्षमार्गे ।
काशीं ये वै संस्मरन्त्यन्यदेशे तानप्यात्मा शङ्करस्तारयेच्च[6] ॥

काशी में लोग जिनका नाम लेते हैं, यह समझना चाहिए कि उन लोगों के मोक्ष का बीज जम गया है । जो अन्य देश में रहकर भी काशी का स्मरण करते हैं, उन्हें भी भगवान् शङ्कर तार देते हैं, अर्थात् वे भी मुक्त हो जाते हैं ।

---

१. का० रह० २६।८०; २. का० ख० २१।१२५; ३. वही—४०।७७-७८ ।
४. का० रह० ६।६२; ५. वही—५।४८; ६. वही—३।२२ ।

काश्यां ये वै शीघ्रमायुर्व्ययेन सिद्धिं प्राप्तास्ते तु तीर्णा भवाब्धेः ।
देशः कालो लोकजात्युक्तधर्मास्तिव्ये दुष्टा नाशमायान्ति सर्वे[1] ॥

जो लोग काशी में शीघ्र ही आयु पूर्ण कर लेते हैं, वे भवाब्धि (भवसागर) को पार कर गये हैं । देश, काल, लोक, जाति के लिए कहे गये कर्म यदि अविहित हों, तो वे नष्ट हो जाते हैं ।

इसलिए समस्त सुरसमूह, महर्षिगणादि काशी, विश्वनाथ जी की ही उपासना करते हैं—

सर्वे सुरनिकायाश्च सर्व एव महर्षयः ।
योगिनः सर्व एवात्र काशीनाथमुपासते[2] ॥

समस्त देवगण, महर्षिगण तथा योगीजन काशी में काशीनाथ (विश्वनाथ जी) की उपासना करते हैं ।

विद्यानां सदनं काशी काशी लक्ष्म्याः परालयः ।
मुक्तिक्षेत्रमिदं काशी काशी सर्वा त्रयीमयी[3] ॥

समस्त विद्याओं एवं लक्ष्मी का स्थान मुक्तिप्रद क्षेत्र यह काशी ही है । अधिक क्या कहा जाय, यह काशी वेदत्रयीमयी है ।

सर्वलिङ्गमयी काशी सर्वतीर्थकजन्मभूः[4] ॥

काशी समस्त शिवलिङ्गमयी है तथा सभी तीर्थों की जन्मभूमि है । काशी सभी तीर्थों की जननी है ।

श्रुतिस्मृतिपुराणानां रहस्यं यस्त्वचीकरत् ।
सर्वपापप्रशमनं सर्वशान्तिकरं परम्[5] ॥

श्रुति, स्मृति तथा पुराणों में जो काशी का रहस्य बताया गया है, वह रहस्य काशी में ही है । यह सभी पापों का नाश करने वाली और परमशान्तिप्रद है ।

धर्मार्थकाममोक्षाणां विनिश्चयकृतो ध्रुवम् ।

इस काशी में धर्म, अर्थ, काम तथा मोक्ष इन चारों पुरुषार्थों की निश्चित ही प्राप्ति होती है ।

---

१. का० रह० ३।२३ ; २. का० ख० ९६।१२० ; ३. वही—९६।१२१ ।
४. वही—९७।२६९; ५. वही—९५।४ ।

तच्च ज्ञानं भवेत्पुंसां सम्यक्काशीनिषेवणात् ।
काशीनिषेवणेन स्याद् विश्वेशकरुणोदयः[1] ॥

काशी के सेवन से तत्त्वज्ञान प्राप्त होता है। काशी के ही सेवन से भगवान् विश्वनाथ जी को दया आती है, वे कृपा करके मोक्ष प्रदान करते हैं।

जरामरणसंत्यक्तः सर्वरोगविवर्जितः ।

यहाँ (काशी में) मरने वाला जरा, मरण तथा समस्त रोगों से रहित होता है।

महापापानि पापानि ज्ञाताज्ञातानि भूरिशः ।
उपपापानि पापानि मनोवाक्कायजान्यपि ॥
विलयं यान्त्यशेषाणि निःसन्देहं ममाऽऽज्ञया[2] ॥

ज्ञात, अज्ञात रूप में किये गये पाप, महापाप, उपपाप तथा मन, वाणी एवं शरीर-कृत सभी पाप मेरी आज्ञा और कृपा से नष्ट हो जाते हैं।

तीर्थानि सर्वाणि पुरीश्च सर्वास्तथा शिवस्याऽऽयतनानि षष्टिः ।
नद्यो नदाः सरसः सागराश्च देवाः समेता मुनयश्च सर्वे ॥
वसन्ति काश्यां स्वविमुक्तिकामाः कामारिसम्प्राप्तमहत्प्रभावाः ।
दृष्ट्वा हि काशीं रमते मनो न तीर्थेषु चान्येषु सदैव तेषाम् ॥

सभी तीर्थ, पुरी तथा जितने महादेव जी के प्रसिद्ध स्थान हैं, नदी, नद, तालाब, सागर, देव सहित सब मुनि अपनी-अपनी मुक्ति की कामना से कामारि श्रीविश्वनाथ जी के प्रताप से काशीवास कर रहे हैं। काशी के देखने मात्र से यदि काशी में मन रम जाता है, तो उसके लिए अन्य कोई तीर्थ सेवन करने योग्य नहीं है। काशीवास करने वाले व्यक्ति को स्वतः मुक्ति प्राप्त होती है।

समस्तदेवशरणं सर्वतीर्थाश्रयं शुभम् ।
अविमुक्तमहाक्षेत्रं सेव्यं धीरैर्जितेन्द्रियैः ॥
काश्यां पश्यन्ति सततं शङ्करं धर्मवत्सलम् ॥

सभी देवताओं के शरण तथा सभी तीर्थों के शुभ आश्रय अविमुक्त महाक्षेत्र (काशी) का जितेन्द्रिय होकर बुद्धिपूर्वक सेवन करना चाहिए। निरन्तर काशीवास करने वाले धर्मवत्सल श्रीविश्वनाथ जी का दर्शन करते हैं तथा विश्वनाथ जी जीवों को दर्शन देकर मुक्त कर देते हैं।

---

१. का० ख० ९६।७३; २. वही—९७।२९०–२९१।

ब्रह्मादयस्तु जानन्ति येऽपि सिद्धा मुमुक्षवः ।
अतः प्रियतमं क्षेत्रं तस्मादत्र रतिर्मम[1] ॥

भगवान् विश्वनाथ जी स्वयं कहते हैं कि हे भवानि ! सिद्ध, मुमुक्षु तथा ब्रह्मादि देवता मेरे इस काशी-क्षेत्र की महिमा को जानते हैं। इसी के कारण यह काशी हमें अतिप्रिय है और हमारी इसमें रति है, प्रेम है।

देहभङ्गं समासाद्य धीमन्तः सङ्गवर्जिताः ।
गता एव परं मोक्षं प्रसादान्मम सुव्रते[2] ॥

हे सुव्रते ! हे देवि ! मेरी प्रसन्नता से अभक्त जनों के सङ्ग से रहित बुद्धिमान् लोग इस क्षेत्र (काशी-पुरी) में पार्थिव शरीर को त्याग कर परम-पद (मोक्ष) को प्राप्त हुए हैं।

काश्यां हि काशते काशी काशी सर्वप्रकाशिका ।
सा काशी विदिता येन तेन प्राप्ता हि काशिका ॥

काशी में काशी प्रकाशित होती है, काशी सब कुछ प्रकाशित करने वाली है, काशी सर्वफलप्रदा है, इस काशी को जिसने समझ लिया, उसे काशी प्राप्त हो गई।

इसीलिए भगवान् शङ्कर पार्वती जी से कहते हैं कि—

स्वर्गभूमिस्तु सा ज्ञेया मोक्षभूमिस्तु मध्यतः ।
काश्याश्चतुर्दिशं देवि ! योजनं स्वर्गभूमिका ॥
मृतास्तत्र तु गच्छन्ति स्वर्गं सुकृतिनां पदम् ॥

ऊपर स्वर्गभूमि है, मध्य में मोक्ष-भूमि है और काशी को चारों ओर हे देवि ! एक योजन पर्यन्त स्वर्गभूमि है। यहाँ मरने वाले पुण्यात्मा स्वर्ग पहुँचते हैं।

ऋषियों ने यहाँ तक कहा है कि—

यत्सुखं काशिवासेऽत्र न तद्ब्रह्माण्डमण्डले ।
अस्ति चेद्धि कथं सर्वे काशीवासाभिलाषुकाः[3] ॥

काशीवास करने में जो सुख है, वह ब्रह्माण्ड में भी कहीं पर नहीं है, अतएव सभी लोग काशीवास के लिए उत्सुक रहते हैं।

काशीस्थैः पतितैस्तुल्या न वयं स्वर्गिणः क्वचित् ।
काश्यां पाताद्भयं नास्ति स्वर्गे पाताद्भयं महत् ॥

स्वर्गवासी कहते हैं कि हम सब काशी के पतितों के बराबर भी नहीं हैं; क्योंकि काशी में पतन का भय नहीं है, स्वर्ग में तो पतन का महान् भय है।

---

१. म० पु० १८०।५३ ; २. वही—१८०।७२ ; ३. का० ख० ३।८२ ।

स्वर्गवासियों का यह कथन भी सम्यक् प्रकार से सत्य है; क्योंकि—

वायुभक्षश्च सततं वाराणस्यां स्थितो नरः ।
यदि पापो यदि शठो यदि वा धार्मिको नरः ।।
वाराणस्यां समासाद्य पुनाति स कुलत्रयम् ।।

कोई आदमी सतत (निरन्तर) वायुभक्षण करके यदि वाराणसी में निवास करता है, तो वह कितना हो महान् पापी अथवा महान् अधार्मिक क्यों न हो, वह समस्त पापों से मुक्त होकर अपने तीन कुल (पीढ़ो) को पवित्र कर देता है।

ऐसी काशी में अवश्य निवास करना चाहिए। भूतभावन भगवान् शङ्कर की काशी में—

प्रेमपात्रं द्वयं देवि ! नितरां नेतरन्मम ।
त्वं वा तपोधने गौरि ! काशी वाऽऽनन्दभूमिका[1] ।।

हे देवि ! मेरे अत्यन्त प्रेमपात्र दो ही हैं, हे तपोधने गौरि ! एक तुम और दूसरी आनन्द देने वाली काशी।

विना काशीं न मे स्थानं विना काशीं न मे रतिः ।
विना काशीं न निर्वाणं सत्यं सत्यं वदाम्यहम्[2] ।।

काशी को छोड़कर मेरा दूसरा स्थान नहीं है और काशी को छोड़कर मेरा कहीं अनुराग नहीं है तथा काशी के बिना कहीं मोक्ष नहीं है। यह मैं परम सत्य कह रहा हूँ।

भगवान् शिव तो यहाँ तक कहते हैं कि हे देवि—

यदि पुण्यं किञ्चिदपि काश्यां लब्धं तु यैर्जनैः ।
भुक्त्वा क्रमेण सद्भोगानन्ते शिवपदं व्रजेत् ।।
शृणु देवि प्रवक्ष्यामि रहस्यं काशिधर्मजम् ।।

हे देवि ! यदि किसी ने काशी में थोड़ा भी पुण्य प्राप्त किया है, तो क्रमशः अच्छे भोगों को प्राप्त कर अन्त में शिव-पद को प्राप्त करता है। हे देवि ! मैंने यह काशी का रहस्य कहा है।

ऐसी काशी जो परम योग्य है, भगवान् शिव के अतिरिक्त अज्ञेय है, उस काशी के प्रति भगवान् सदाशिव का अनुराग क्यों न हो। जो काशी—

१. कूर्मपुराण ; २. वही।

सूर्यस्यापि भवेत् सूर्यः अग्नेरग्निः प्रभोः प्रभुः ।
श्रियः श्रीश्च भवेदग्र्या कीर्तिः कीर्त्याः क्षमा क्षमा ॥

काशी सूर्य का भी सूर्य है, अग्नि का भी अग्नि है, प्रभु का भी प्रभु है, लक्ष्मी की भी लक्ष्मी है, कीर्ति की भी कीर्ति है और क्षमा की भी क्षमा है ।

ऐसी काशी के प्रति भगवान् सदाशिव विश्वनाथ का अनुरक्त होना स्वाभाविक ही है, जिस काशी के रहस्य को—

काशीरहस्यं ऋषिभिर्गीतं तच्च पृथक्-पृथक् ।
तथापि तद्रहस्यन्तु को जानाति शिवादृते ॥

ऋषियों ने तो पृथक्-पृथक् कहा है; लेकिन भगवान् शिव के अतिरिक्त काशी के रहस्य को कौन जानता है ?

इसीलिए सुर-मुनि सभी लोग काशी-पुरी को प्राप्त करने के लिए व्यग्र रहते हैं ।

रमते च गणैः सार्धमविमुक्ते स्थितः प्रभुः ।
दृष्ट्वैतान् भीतकृपणान् पापदुष्कृतकारिणः ॥
अनुकम्पया तु देवस्य प्रयान्ति परमां गतिम् ।
भक्तानुकम्पो भगवाँस्तिर्यग्योनिगतानपि ॥
नयत्वेव वरं स्थानं यत्र यान्ति च याज्ञिकाः ।
भार्गवाङ्गिरसः सिद्धा ऋषयश्च महाव्रताः ॥
अविमुक्ताग्निना दग्धा अग्नौ तूलमिवाहितम् ।
सा गतिर्विहिता पुंसामविमुक्तनिवासिनाम् ॥
तिर्यग्योनिगताः सत्त्वा येऽविमुक्ते कृतालयाः ।
कालेन निधनं प्राप्तास्ते यान्ति परमां गतिम्[1] ॥

इस अविमुक्त (काशी) क्षेत्र में भगवान् विश्वनाथ जी अपने गणों के साथ क्रीड़ा करते हैं । इनको देखकर भयभीत दुष्कर्मी भी भगवान् विश्वनाथ की कृपा से परमगति को प्राप्त करता है ।

भक्तों के ऊपर कृपा करने वाले विश्वनाथ जो तिर्यग् योनि में गये हुए लोगों को भी, जहाँ याज्ञिकगण जाते हैं, वहाँ ले जाते हैं ।

१. म० पु० १८४।१३–१७ ।

शुक्राचार्य, भार्गव, अङ्गिरादि महाव्रती, सिद्ध, महर्षिगण अविमुक्त अग्नि में दग्ध होकर ही परमपद को प्राप्ति किये हैं। जिस प्रकार अग्नि में रूई जल जाती है, उसी प्रकार अविमुक्त काशी में निवास करने वाले व्यक्ति के समस्त पाप भस्मसात् हो जाते हैं। उस व्यक्ति को भी परम गति प्राप्त होती है। वह सर्वदा जीवन्मुक्त हो जाता है।

तिर्यग् योनि को प्राप्त हुआ पुरुष भी यदि इस अविमुक्त (काशी) क्षेत्र में निवास करता है और समयानुसार प्राणत्याग करता है, तो वह परम-गति अर्थात् मोक्ष को प्राप्त करता है।

श्रीकाशीमणिकर्णिकासुरनदीविश्वेश्वरा दुर्लभाः।
पुंसां पूर्वतपःप्रभावनिचयात् प्राप्स्यन्ति तान् नान्यथा[1] ॥

श्री काशी में मणिकर्णिका, गङ्गा और विश्वनाथ जी दुर्लभ हैं, पुरुषों के पूर्वजन्मों के तप के प्रभाव के कारण ये उन्हें प्राप्त होते हैं, अन्यथा नहीं।

ध्यायतां चात्र नियतं योगिनां शान्तचेतसाम्।
जायते योगसिद्धिः सा षण्मासेन न संशयः[2] ॥

काशी में जो लोग शान्तचित्त से नियमपूर्वक विश्वनाथ जी का ध्यान करते हैं, उनको छः मास में निःसन्देह योगसिद्धि की प्राप्ति होती है।

ततो नैव चरेत्पापं कायेन मनसा गिरा।
एतद्रहस्यं वेदानां पुराणानां द्विजोत्तमाः ॥
मृतानां वै पुनर्जन्म न भूयो भवसागरः[3] ॥

काशीवासी को शरीर, मन, वाणी आदि किसी भी माध्यम से पाप नहीं करना चाहिए। हे द्विजोत्तमगण! यही वेदों एवं पुराणों का रहस्य है। यहाँ (काशी में) मरने वालों का पुनः जन्म नहीं होता और वे पुनः भवसागर में भी नहीं फँसते।

संसारभारखिन्नानां यातायातकृतां सदा।
एकैव मे पुरी काशी ध्रुवं विश्रामभूमिका[4] ॥

जो सदा संसार के यातायात से खिन्न हैं, उनके लिए हमारी काशीपुरी ही एकमात्र विश्राम-भूमि है।

---

१. काशीमूलरहस्य, ब्रह्मकाण्ड, १३।१०२; २. पद्मपुराण, अ० ३३।
३. शिवपुराण; ४. का० ख० ५५।४५।

विना काशीं न रमते यतोऽन्यत्र त्रिलोचनः ।
शम्भोः शक्तिरियं काशी काचित्सर्वैरगोचरा ॥
शम्भुरेव हि जानीयादेतस्याः परमं सुखम्[१] ॥

त्रिलोचन भगवान् शङ्कर काशी से अन्यत्र कहीं भी नहीं रमण करते हैं। शङ्कर की कोई विचित्र शक्ति ही यह काशी है, जिसको लोग नहीं जानते। भगवान् शङ्कर ही इस काशी के परम सुख को जानते हैं ।

काशीं सङ्काङ्क्षमाणानां पुरुषार्थचतुष्टयम् ।
पुरः किङ्करवत्तिष्ठेन्ममानुग्रहतो द्विजाः[२] ॥

विश्वनाथ जी कहते हैं कि हे द्विजगण ! जो भक्त काशी-प्राप्ति की आकांक्षा करते हैं, धर्म, अर्थ, काम एवं मोक्ष चारों पुरुषार्थ सेवक (किङ्कर) की तरह उनके सामने खड़े रहते हैं; क्योंकि काशीवासी लोग मुझसे अनुगृहीत होते हैं ।

आनन्दकानने ह्यत्र ज्वलद्दावानलोऽस्म्यहम् ।
कर्मबीजानि जन्तूनां ज्वालये न प्ररोहये ॥
वस्तव्यं सततं काश्यां यष्टव्योऽहं प्रयत्नतः ।
जेतव्यौ कलिकालौ च रन्तव्या मुक्तिरङ्गना[३] ॥

भगवान् शिव कहते हैं कि इस आनन्दकानन (काशी) में मैं धधकते हुए दावानल (वनाग्नि) के समान हूँ, अतः जीवों के कर्मबीजों को भस्मसात् करता रहता हूँ, उन्हें उगने ही नहीं देता हूँ । अतः भक्तों को काशी में निरन्तर ही निवास करना चाहिए तथा मेरी उपासना प्रयत्नपूर्वक करनी चाहिए। इसी से कलि और काल को जीतकर मुक्तिरूपा स्त्री के साथ विहार किया जा सकता है ।

पापक्षयकरा चापि चतुर्वर्गफलप्रदा ।
यस्या दर्शनाद् ध्यानाद् वन्दनात्पूजनादपि ॥

काशी पाप का क्षय (नाश) करती है, धर्म, अर्थ, काम एवं मोक्ष को प्रदान करती है। काशी में दर्शन, ध्यान, वन्दन एवं पूजनादि करने वाला व्यक्ति मुक्त हो जाता है, अर्थात् मोक्ष प्राप्त करता है ।

'महाश्मशानेऽप्यानन्दवने वासः'[४] ।

महाश्मशान (काशी) का निवास आनन्दवन का निवास है ।

१. का० ख० ४५।२७–२८; २. वही—६४।५१ ; ३. वही—६४।५२–५३ ।
४. तारकोपदेश ।

गङ्गातीरमनुत्तमं हि सकलं तत्रापि काश्युत्तमा
तस्यां सा मणिकर्णिकोत्तमतमा यत्रेश्वरो मुक्तिदः।
देवानामपि दुर्लभं स्थलमिदं पापौघनाशक्षमं
पूर्वोपार्जितपुण्यपुञ्जगमकं पुण्यैर्जनैः प्राप्यते[1] ॥

आदिशङ्कराचार्य भगवान् कहते हैं कि गङ्गा का तीर (किनारा) अत्युत्तम है, काशी उससे भी उत्तम है और काशी में भी मणिकर्णिका तीर्थ अत्युत्तम है; क्योंकि यहाँ मुक्ति के लिए तारक-मन्त्र प्रदान करने वाले भगवान् शिव जी विराजमान हैं और सम्पूर्ण पापों का नाश करने वाली यह मणिकर्णिका देवताओं को भी दुर्लभ है।

भूमिष्ठापि न याऽत्र भूस्त्रिदिवतोऽप्युच्चैरधःस्थापि या
या बद्धा भुवि मुक्तिदा स्युरमृतं यस्यां मृता जन्तवः।
या नित्यं त्रिजगत्पवित्रतटिनीतीरे सुरैः सेव्यते
सा काशी त्रिपुरारिराजनगरी पायादपायाज्जगत्[2] ॥

जो भूतल में विराजमान रहने पर भी स्वयं भूमि नहीं है, जो अधोभाग में स्थित होने पर भी स्वर्ग के ऊपर है, जो स्वयं भूमण्डल में बद्ध होने पर भी मुक्ति का दान करती है, फिर जिसमें मृत होने वाले प्राणिमात्र अमृत-पद के अधिकारी हो जाते हैं एवं जिसे त्रैलोक्यपावनी गङ्गा के तट पर देवगण सदैव सेवते रहते हैं, वही त्रिपुरान्तक की राजधानी श्री काशी अज्ञानरूप विपत्ति से जगत् की रक्षा करे।

नामेच्छयेति मिषमात्रमधयत्ताम्।
संसारतारणतरीमसृजत् पुरीं सः॥

स्वेच्छा से भगवान् विश्वेश्वर (विश्वनाथ जी) ने संसार-सागर को पार करने के लिए नौका के रूप में इस काशी का निर्माण किया।

यथा प्रियतमा देवि! मम त्वं सर्वसुन्दरी।
तथा प्रियतमं चैतन्मे सदानन्दकाननम्॥

हे सुन्दरी पार्वति! जिस प्रकार तुम मुझे प्यारी हो, उसी प्रकार यह आनन्दकानन (काशी) भी मुझे अति प्यारा है।

त्रिनेत्रधारी भूतेश, काशीस्थ मुक्तिदाता भगवान् शिव जी यहाँ तक कहते हैं कि मैं योगियों के हृदय में अथवा कैलाश में या मन्दिर में निवास से सन्तुष्ट नहीं होता; क्योंकि हमारी आसक्ति तो सर्वदा काशी में ही रहती है—

१. आदिशङ्कराचार्य; २. का० ख० १।२।

न योगिनां हृदाकाशे न कैलाशे न मन्दिरे।
तथा वासरतिर्मेऽस्ति यथा काश्यां रतिर्मम[1] ॥

मैं योगियों के हृदय में या कैलाश में अथवा मन्दिर में निवास से उतना सन्तुष्ट नहीं होता, जितना मैं काशीवास से सन्तुष्ट होता हूँ। इसीलिए काशी में रहकर प्राणियों को मुक्ति प्रदान करता हूँ।

वैष्णवानां यथा शम्भुः पुराणानामिदं तथा।
क्षेत्राणां चैव सर्वेषां यथा काशी ह्यनुत्तमा[2] ॥

जैसे भगवान् विष्णु के भक्तों में भगवान् शङ्कर जी अग्रगण्य हैं, वैसे ही पुराणों में काशी-माहात्म्य अग्रगण्य है और जितने भी मुक्तिप्रद क्षेत्र हैं, उन सबसे उत्तम काशी-क्षेत्र है।

पुरोहितेन सहितस्तोषयामास शङ्करम्।
अविमुक्ते महाक्षेत्रे तोषितस्तेन शङ्करः[3] ॥

जिस किसी ने पुरोहित को आगे करके भगवान् शङ्कर की आराधना तथा अविमुक्त महाक्षेत्र (काशी) में तपस्या की है, उसकी तपस्या एवं आराधना से भगवान् परम प्रसन्न होते हैं।

एकेन जन्मना काश्यां निर्वाणं समवाप्यते।
अतः परं कः सुगम उपायः साधनैर्विना ॥

मनुष्य काशी में एक जन्म में ही निर्वाण (मोक्ष) प्राप्त कर लेता है। किसी भी साधन के बिना मोक्षप्राप्ति के लिए काशी से बढ़कर सरल उपाय और दूसरा क्या हो सकता है?

ब्रह्मणः परमं स्थानं ब्रह्मणाध्यासितं च यत्।
ब्रह्मणा सेवितं नित्यं ब्रह्मणा चैव रक्षितम् ॥
ब्रह्मा तु तत्र भगवाँस्त्रिसन्ध्यं चेश्वरे स्थितः।
पुण्यात् पुण्यतमं क्षेत्रं पुण्यकृद्भिर्निषेवितम्[4] ॥

ब्रह्मा का परम स्थान ब्रह्म से अधिष्ठित है। ब्रह्म से सेवित तथा ब्रह्म से रक्षित यह स्थल काशी ही है। भगवान् ब्रह्मा तीनों काल ईश्वर भगवान् शङ्कर की पुरी में विराजमान हैं, अतः पवित्र से पवित्रतम यह (काशी) क्षेत्र पुण्यात्माओं से सेवित है।

---

१. कूर्मपुराण; २. श्रीमद्भागवत द्वादशस्कन्ध; ३. विष्णुपुराण; ४. मत्स्यपुराण।

संसारभयनिर्मुक्ताः सर्वपापविवर्जिताः ।
सुखेन मोक्षमायान्ति यथा सुकृतिनस्तथा ॥
ज्ञात्वा कलियुगं घोरमप्रकाश्यं कृतं मया[1] ॥

शङ्कर जी कहते हैं कि संसार के भय से मुक्त, सभी पापों से रहित पुण्यात्मा के पास सुखपूर्वक मोक्ष आता है। इसीलिए घोर कलियुग को जानकर इस काशी को मैंने गुप्त रखा है।

परं गुह्यतमं क्षेत्रं मम वाराणसी पुरी ।
सर्वेषामेव भूतानां संसारार्णवतारिणी[2] ॥

युधिष्ठिर ने नारद जी से पूछा कि वाराणसी का विस्तृत माहात्म्य कहें। नारद जी ने कहा कि ईश्वर ने देवी पार्वती जी से इस विषय पर जो कहा उसे सुनो—

हे पार्वती ! मेरी वाराणसी-पुरी अत्यन्त गुप्त क्षेत्र है। यह (काशी) संसार के समस्त जीवों को संसार-सागर से पार करती है।

उत्तमं सर्वतीर्थानां स्थानानामुत्तमं च यत् ।
ज्ञानानामुत्तमं ज्ञानमविमुक्तं परं मम[3] ॥

समस्त तीर्थों तथा समस्त स्थानों के ज्ञानों में जो उत्तमोत्तम है, वह मेरा अविमुक्त काशी-क्षेत्र है।

स्थानान्तरपवित्राणि तीर्थान्यायतनानि च ।
श्मशानसंस्थितान्येव दिव्यभूमिगतानि च[4] ॥

अन्य स्थानों, तीर्थों तथा मन्दिरों से भी पवित्र एवं स्वर्ग तथा भूमि में सबसे उत्तम क्षेत्र श्मशान (काशी) क्षेत्र ही है।

योजनानां शतस्थोऽपि विमुक्तं संस्मरेद्यदि ।
बहुपातकपूर्णोऽपि पदं गच्छत्यनामयम्[5] ॥

यदि एक सौ योजन पर स्थित रहकर भी श्री काशी जी का स्मरण करे, तो बहुत पाप-कर्म से पूर्ण होने पर भी वह प्राणी पापों से रहित हो जाता है।

लक्ष्मीक्षेत्रं महापीठं साधकस्यैव सिद्धिदम् ।
साधकस्तत्र मन्त्राणां नरः सिद्धिमवाप्नुयात् ॥

साधकों का परम सिद्धिप्रद लक्ष्मी-क्षेत्र नामक महापीठ है, जो मनुष्य वहाँ पर मन्त्रों का साधन करता है, वह अनायास ही सिद्धि को प्राप्त कर लेता है।

---

१. लिङ्गपुराण ; २. पद्मपु० स्वर्गखण्ड—३३।९ ; ३. वही—३३।११ ।
४. वही—३३।१२ ; ५. ना० पु० ६।३७ ।

कदा वाराणस्याममरतटिनीरोधसि वसन्
वसानः कौपीनं शिरसि निदधानोऽञ्जलिपुटम् ।
अये गौरीनाथ त्रिपुरहर शम्भो त्रिनयन !
प्रसीदेत्याक्रोशन् निमिषमिव नेष्यामि दिवसान्[1] ॥

कब वह समय आयेगा जब मैं भगवान् शङ्कर की नगरी (काशी) में गङ्गा के किनारे वास करता हुआ कौपीन धारण करके शिर के ऊपर हाथ जोड़कर 'हे गौरीनाथ ! हे त्रिपुरहर ! हे शम्भो ! हे त्रिनयन ! हे शिव ! हमारे ऊपर प्रसन्न हों' इस प्रकार शङ्कर जी को नमस्कार करता हुआ तथा स्मरण करता हुआ नमिष की तरह काल व्यतीत करूँगा ।

किं पुनर्निर्ममा धीरास्सत्त्वस्था दम्भवर्जिताः ।
कृतिनश्च निरारम्भास्सर्वे ते मयि भाविताः ॥
जन्मान्तरसहस्रेषु जन्तुर्यो न समायुतात् ।
तदिहैव परं मोक्षं मरणादधिगच्छति[2] ॥

जब पूर्वोक्त साधारण मनुष्यों को मुक्ति मात्र काशीवास से होती है, तब फिर ममतारहित, धैर्यवान्, सात्त्विक, दम्भ एवं अहङ्कार से रहित तथा पुण्यकर्म करने वाले, अनिष्ट कर्मों से रहित पुरुषों को मुक्ति क्यों नहीं होगी, अर्थात् अवश्य ही होगी। सहस्रों जन्मों से मुक्त न हुए प्राणी भी इस काशी-क्षेत्र में मरने मात्र से परम मोक्ष को प्राप्त कर लेते हैं ।

गङ्गातीर्थे च गमनं यात्रा वाराणसीं प्रति ।
दर्शनं तत्र लिङ्गानां स्थापितानां सुरेश्वरैः ॥
मुक्तेश्च प्रापकं ह्येतच्चतुष्टयमुदाहृतम् ।
शिवार्चनं रुद्रजप उपोष्यं च दिनत्रयम् ॥
वाराणस्यां च मरणं मुक्तिरेषा चतुर्विधा[3] ॥

गङ्गातीर्थ पर जाना, वाराणसी (पञ्चक्रोशी) की यात्रा करना एवं इन्द्र द्वारा स्थापित भगवान् शिवलिङ्ग का दर्शन करना कल्याण को देने वाले हैं। काशी में मुक्ति को प्राप्त कराने वाले चार साधन कहे गये हैं, जो इस प्रकार हैं—१. भगवान् शिव की पूजा, २. रुद्रजप अथवा रुद्राभिषेक, ३. काशीवास करते हुए तीन दिन (कृष्णपक्ष की अष्टमी, सोमवार एवं चतुर्दशी) का विशेष व्रत (उपवास) एवं ४. काशी में शरीर का परित्याग ।

---

१. रामायण ; २. शिवपुराण ; ३. वायवीय-सं० ४०।२८-२९ ।

अकुर्वन् काकुषं कर्म समक्रोष्टारमकाञ्चनः ।
पञ्चाक्षरपरो नित्यं निषेवेत विभोः पुरीम्[1] ॥

आत्मकल्याणेच्छुक प्राणियों को अकरणोय अशुभ कर्मों को न करते हुए, मिट्टी तथा स्वर्ग सभी में समदृष्टि रखते हुए एवं 'ॐ नमः शिवाय' इस पञ्चाक्षर मन्त्र का जप करते हुए इस काशीपुरी में निवास तथा भगवान् शिव की पूजा एवं उपासना अवश्य करनी चाहिए ।

तदानन्त्याय जायेत मुने लोकद्वयेऽपि हि ।
विशालाक्षीमहापीठे दत्तं जप्तं हुतं स्तुतम्[2] ॥

स्कन्द जी ने अगस्त्य मुनि से कहा कि हे मुनिवर ! काशी-क्षेत्र के विशालाक्षी महापीठ में जो कुछ दान, जप, हवन और स्तवन किया जाता है, वह दोनों लोकों में अनन्त हो जाता है ।

विशालाक्षीसमर्चातो रूपसम्पत्तियुक्पतिः ।
प्राप्यतेऽत्र कुमारीभिर्गुणशीलाद्यलङ्कृतः ॥
गुर्विणीभिः सुतनयो वन्ध्याभिर्गर्भसम्भवः[3] ॥

विशालाक्षी का पूजन करने से कुमारियों को गुण और शील इत्यादि से विभूषित रूपसम्पत्तिमान् पति प्राप्त होता है और गुर्विणियों को उत्तम पुत्ररत्न एवं वन्ध्याओं को भी गर्भ सम्भव होता है ।

मुने विश्वभुजा गौरी विशालाक्षीपुरःस्थिता ।
संहरन्ती महाविघ्नं क्षेत्रभक्तिजुषां सदा[4] ॥

हे ऋषिवर ! विशालाक्षी के सम्मुख ही विश्वभुजा गौरी स्थित हैं, जो क्षेत्र के भक्तिमान् लोगों के बड़े से बड़े विघ्नों का सदेव संहार करती रहती हैं ।

तं स्तम्भं समलङ्कृत्य नरस्तत्पदमाप्नुयात् ।
तत्रैव तीर्थं परम कपालेशसमीपतः ॥
कपालमोचनं नाम तत्र स्नातोऽश्वमेधभाक्[5] ॥

काशी के महाश्मशान-स्तम्भ को विभूषित करने से मनुष्य रुद्रपद का भागी होता है । वहीं पर कपालेश्वर के समीप में ही बहुत बड़ा कपालमोचन नामक तीर्थ है, जिसमें स्नान करने से अश्वमेध यज्ञ का फल प्राप्त होता है ।

---

१. पद्मपुराण ; २. का० ख० ७०।१३ ; ३. वही—७०।१४-१५ ।
४. वही—७०।२२ ; ५. वही—९७।६५-६६ ।

तीर्थानि सन्ति भूयांसि काश्यामत्र पदे पदे ।
न पञ्चनदतीर्थस्य कोटयंशेन समान्यपि ।।
प्रयागे माघमासे तु सम्यक् स्नातस्य यत्फलम् ।
तत्फलं स्याद्दिनैकेन काश्यां पञ्चनदे ध्रुवम्[1] ।।

यद्यपि काशी में पद-पद पर बहुत से तीर्थ स्थित हैं, परन्तु वे पञ्चनदतीर्थ के कोटि अंश के समान भी नहीं हैं।

प्रयागराज में माघ मास भर स्नान करने से जो फल प्राप्त होता है, काशी के पञ्चनदतीर्थ में केवल एक ही दिन स्नान कर लेने से भी निश्चित ही वही फल प्राप्त हो जाता है।

तत्र यो भोजयेद्विप्रान् यतिनोऽथ तपस्विनः ।
सिक्थे सिक्थे लभेत्सोऽथ वाजपेयफलं स्फुटम्[2] ।।

यदि कोई वहां पर (काशी में) ब्राह्मण, संन्यासी अथवा तपस्वियों को भोजन कराता है, या अन्नदान करता है, तो उसे अन्न की प्रत्येक कणिका में समस्त वाजपेय यज्ञ का फल प्राप्त हो जाता है।

परार्द्धद्वयनाशेऽपि काशीस्थो यो न नश्यति ।
तस्मात्सर्वप्रयत्नेन काश्यां श्रेयः समाचरेत्[3] ।।

ब्रह्मा के सौ वर्ष बीत जाने पर भी काशीवासी जीव का विनाश नहीं होता, अतएव काशी में अतिशय प्रयत्न द्वारा उत्तम धर्माचरण करना चाहिए।

नारायणाः शतं पञ्च शतं च जलशायिनः ।
त्रिंशत्कमठरूपाणि मत्स्यरूपाणि विंशतिः ।।
गोपालाश्च शतं साष्टं बुद्धाः सन्ति सहस्रशः ।
त्रिंशत्परशुरामाश्च रामा एकोत्तरं शतम् ।।
विष्णुरूपोऽस्म्यहं चैको मुक्तिमण्डपमध्यतः[4] ।।

भगवान् विष्णु कहते हैं कि काशी-क्षेत्र में मेरी पांच सौ मूर्त्तियां नारायणरूप की, एक सौ जलशायीरूप की, तीस कच्छपरूप की, बीस मत्स्यरूप की, एक सौ आठ गोपालरूप की, सहस्रशः बौद्धरूप की, तीस परशुरामरूप की और एक सौ एक रामरूप की हैं तथा मुक्तिमण्डप के मध्य में मैं विष्णुरूप से अकेला ही हूँ, अर्थात् जब भगवान् विष्णु को ही यह काशी-क्षेत्र इतना अधिक प्रिय है, तो अन्य सामान्य लोगों के विषय में तो कुछ कहना ही नहीं है।

---

१. का० ख० ५९।११८-११९ ; २. वही—८१।३८; ३. वही—३।८१ ।
४. वही—६१।२०७-२०९ ।

न सा गतिः कुरुक्षेत्रे गङ्गाद्वारे च पुष्करे ।
या गतिर्विहिता पुंसामविमुक्तनिवासिनाम्[1] ॥

जो गति इस अविमुक्त (काशी) क्षेत्र में प्राप्त होती है, वह न तो कुरुक्षेत्र में, न ही हरिद्वार में तथा न ही पुष्कर में प्राप्त होती है ।

यः प्रधानतया काश्यां मध्ये तिष्ठति शङ्करः ।
स्वपुरीजनसौख्यार्थमतोऽसौ मध्यमेश्वरः[2] ॥

भगवान् शङ्कर अपने भक्तों को सुख देने के लिए तथा उनकी रक्षा के लिए प्रधानरूप से काशी नगरी के मध्य में विराजमान रहते हैं, अतएव उन्हें मध्यमेश्वर कहा जाता है ।

"यत्फलं तीर्थराजस्य स्नानेन परिकीर्त्यते ।
सहस्रगुणितं तत्स्याद्धर्मान्धुस्नानमात्रतः[3] ॥

तीर्थराज प्रयाग में स्नान करने से जो फल प्राप्त होता है, काशी के धर्मकूप में स्नान करने मात्र से उससे सहस्रगुणा अधिक फल प्राप्त होता है ।

रथ्यान्तरे मूत्रपुरीषमध्ये चाण्डालवेश्मन्यथवा श्मशाने ।
कृतप्रयत्नोऽप्यकृतप्रयत्नो देहावसाने लभतेऽत्र मोक्षम्[4] ॥

इस काशीपुरी की गलियों में, मूत्र-पुरीष से दूषित स्थानों में, चाण्डाल के गृह में या श्मशान-भूमि में, कहीं भी विधि से या अविधि से मरने पर जीव मोक्ष-पद को प्राप्त करता है ।

नीरोग उपविष्टो वा रुग्णो वा विलुण्ठनो भुवि ।
मूर्च्छितो वा त्यजेत् प्राणान् मोक्षभ्रान्तिर्न सर्वथा[5] ॥

काशी-क्षेत्र में कोई भी प्राणी नीरोग, उपविष्ट (बैठा), रोगी, खाट पर करवट बदलता या मूर्च्छित, किसी भी अवस्था में प्राणत्याग करता है, तो वह मुक्त हो जाता है, इसमें कोई संशय नहीं है ।

विश्वेश्वरस्य देवस्य काशीनाम्ना महापुरी ।
यत्र पापी मृतः सद्यः परं मोक्षं प्रयाति हि[6] ॥

भगवान् शङ्कर की महापुरी का नाम 'काशी' है, जहाँ पापी भी प्राणत्याग करके तत्काल मोक्ष-प्राप्ति करता है ।

---

१. लिङ्गपुराण ; २. उमा-सं० ७७।८; ३. का० ख० ८१।२५ ।
४. सनत्कुमारसंहिता । ५. पञ्चदशी; ६. गर्गसंहिता ।

अपि पातकिनो ये च कालेन निधनं गताः ।
तेऽपि स्वर्गादिहागत्य काश्यां मोक्षमवाप्नुयुः ।।

यदि महापापी भी कालवशात् काशी में प्राणत्याग करता है, तो वह मुक्त हो जाता है। इसीलिए यहाँ (काशी में) देवता भी स्वर्ग से आकर मोक्ष को प्राप्त करते हैं।

जले स्थलेऽन्तरिक्षे वा यत्र कुत्रापि वा मृताः ।
तारकं ज्ञानमासाद्य चैतन्यपदगामिनः[1] ।।

काशी-क्षेत्र में पृथ्वी, जल, आकाश या किसी भी जगह प्राणत्याग करने वाले प्राणी भगवान् शिव जी के तारक-मन्त्रोपदेश को प्राप्त कर मोक्ष-पद के भागी होते हैं।

कीटाः पतङ्गा मशकाश्च वृक्षाः जले स्थले ये विचरन्ति जीवाः ।
मण्डूकमत्स्याः कृमयोऽपि काश्यां त्यक्त्वा शरीरं शिवमाप्नुवन्ति[2] ।।

कीट, पतंग, मशक, वृक्ष, जल एवं स्थल में विचरण करने वाले समस्त प्राणी, मेढ़क, मछली तथा कृमि आदि समस्त जीव काशी-क्षेत्र में शरीर-त्याग करके शिव-सायुज्य की प्राप्ति करते हैं।

अन्तकाले मनुष्याणां भिद्यमानेषु मर्मसु ।
वातेनातुद्यमानानां स्मृतिर्नैवोपजायते ।।
तत्रोत्क्रमणकाले तु साक्षाद्विश्वेश्वरः स्वयम् ।
व्याचष्टे तारकं ब्रह्म येनासौ तन्मयो भवेत्[3] ।।

अन्तकाल में जबकि मनुष्यों के मर्मस्थान फटने लगते हैं और वायु से शरीर छटपटाने लगता है, तो उस समय स्मरण-शक्ति नहीं रह जाती; परन्तु काशी में प्राण निकलने के समय साक्षात् विश्वेश्वर स्वयं तारक-ब्रह्म का उपदेश करते हैं, जिससे मनुष्य ब्रह्ममय हो जाता है।

निष्प्रत्यूहेन योगेन नानाजन्मार्जितेन च ।
यत्फलं लभ्यतेऽन्यत्र तत्काश्यां त्यजतस्तनुम्[4] ।।

अन्यत्र अनेक जन्मों में अर्जित निर्विघ्न योग के द्वारा जो फल प्राप्त किया जाता है, काशी में वह फल केवल शरीर के त्याग-मात्र से मिल जाता है।

१. शिवरहस्य ; २. काशीखण्ड ; ३. वही—२५।७२-७३ ।
४. वही—२६।१३३ ।

काशीयं सर्वजन्तूनां मुक्तिदात्री तनुत्यजाम् ।
अमोघभोगदा चात्र स्वल्पधर्मंकृतामपि[1] ॥

यह काशी मरने वाले समग्र जन्तुवों को मोक्ष देने वाली है। यहाँ पर थोड़ा-सा भी धर्म करने वाले को यह अमोघ भोग प्रदान करती है।

भूमौ जलेऽन्तरिक्षे वा यत्र क्वापि मृतो द्विजः ।
ब्रह्मैकत्वं च प्राप्नोति काशीशक्तिरुपाहिता[2] ॥

हे ब्राह्मण ! काशी में यदि कोई भूमि पर या जल में या अन्तरिक्ष में या जहाँ कहीं भी शरीर-त्याग करता है, तो वह ब्रह्म के साथ एकत्व की प्राप्ति करता है; क्योंकि काशी की शक्ति ही ऐसी है।

तत्र साक्षान्महादेवो देहान्ते स्वयमीश्वरः ।
व्याचष्टे तारकं ब्रह्म तथैवैकं विमुक्तिदम्[3] ॥

वाराणसी में देहान्त होने पर साक्षात् विश्वनाथ जी मुक्तिप्रद तारक-ब्रह्म का उपदेश देते हैं।

प्राणेषूत्क्रममाणेषु जन्तोरत्र सदाशिवः ।
व्याचष्टे तारकमिति श्रुतिराह सनातनी[4] ॥

यहाँ पर (काशी में) जन्तुवों के प्राण निकलने के समय सदाशिव जी तारक मन्त्र का उपदेश करते हैं, जिससे प्राणी शीघ्र ही मोक्ष प्राप्त करता है, ऐसा सनातनी श्रुति ने कहा है।

काश्यां वसन्ति ये धीरा आपश्चत्वविनिश्चयाः ।
जीवन्मुक्तास्तु ते ज्ञेया वन्द्याः पूज्यास्त एव हि ॥

जो बुद्धिमान् धीरजन काशी में मरणपर्यन्त निश्चय करके निवास करते हैं, उनको तो जीवन्मुक्त ही समझना चाहिए और वे लोग सर्वथा वन्दनीय और पूजनीय होते हैं।

अविमुक्तं महाक्षेत्रं सर्वदा जननी यथा ।
पुत्रस्य जननी लोके सर्वदा हितकारिणी ॥
हितकृत्सर्वजन्तूनां काशीहाऽमुत्र सिद्धिदा[5] ॥

यह अविमुक्त महाक्षेत्र सदा माता के समान है। लोक में जिस प्रकार माता

१. काशी-केदारमा० १८।१५१ ;
२. पद्मपु० तीर्थसुधानिधि, पृ० ४५ ।
३. कूर्मपुराण—१।३१।६० ;
४. काशी-केदारमा० २८।७४-७५ ।
५. का० खं० ११।२१-२२ ।

पुत्र के लिए सदैव हितकारी है, उसी प्रकार सम्पूर्ण जीवों की हितकारी यह काशी प्राणियों को इहलोक तथा परलोक में सिद्धि प्रदान करती है, अर्थात् मोक्ष प्रदान करती है।

तिर्यग्योनिगताः सत्त्वा येऽविमुक्तकृतालयाः।
कालेन निधनं प्राप्तास्तेऽपि यान्ति परां गतिम्[1]॥

कोई तिर्यक् आदि किसी भी योनि को क्यों न प्राप्त हुआ हो, वह काशी में मृत्यु प्राप्त होने पर उत्तम गति अथवा मोक्ष को प्राप्त करता है।

ब्रह्महत्यां नरः कृत्वा पश्चात् संयतमानसः।
प्राणांस्त्यजति यः काश्यां स मुक्तो नात्र संशयः[2]॥

यदि कोई मनुष्य ब्रह्महत्या कर देता है; किन्तु पुनः इस ब्रह्महत्या को निषिद्ध समझता हुआ अत्यन्त संयत-चित्त वाला होकर काशी में प्राणत्याग करता है, तो वह मुक्त हो जाता है, इसमें कोई सन्देह नहीं है।

स्त्रियः पतिव्रता याश्च मम भक्तिसमाहिताः।
अविमुक्ते मृता विप्रा! यान्ति ताः परमां गतिम्[3]॥

मेरी (भगवान् शिव की) भक्ति में निरन्तर लगी हुई पतिव्रता स्त्रियाँ भी यदि अविमुक्त (काशी) में प्राणत्याग करती हैं, तो वे भी परमगति (मोक्ष) को प्राप्त करती हैं।

कृत्वाऽपि काश्यां पापानि काश्यामेव म्रियेत चेत्।
भूत्वा रुद्रपिशाचोऽपि पुनर्मुक्तिमवाप्स्यति[4]॥

यदि काशी में पाप करके कोई मनुष्य पुनः काशी में ही मर जाता है, तो वह रुद्रपिशाच होकर तदनन्तर मुक्ति को प्राप्त होता है।

सर्वे वर्णा आश्रमाश्च बालयौवनवार्द्धकाः।
अस्यां पुर्यां मृताश्चेत्स्युर्मुक्ता एव न संशयः[5]॥

समग्र वर्ण, समस्त आश्रम, बालक, युवा, वृद्ध सभी प्राणी श्रीकाशी जी में शरीर को त्याग कर मुक्त होते हैं, इसमें कोई संशय नहीं है।

यदि पुण्यं किञ्चिदपि काश्यां लब्धं तु यैर्जनैः।
ते तत्पुण्यमवष्टभ्य न यान्ति जननं भुवि॥

जिन लोगों ने काशी में रहकर थोड़ा-बहुत भी पुण्य अर्जित किया है, वे उसी पुण्य के प्रताप से पुनः जन्म को नहीं प्राप्त करते हैं।

---

१. का० ख० ६४।९३; २. वही—६४।९७; ३. वही—६४।९८।
४. वही—२६।१४१; ५. शिवपुराण।

यत्तत्परतरं तत्त्वमविमुक्तमिति स्मृतम् ।
एकेन जन्मना देवि वाराणस्यां तदाप्नुयात्[1] ॥

जहाँ पर सर्वश्रेष्ठ तत्त्व 'अविमुक्त' नामक कहा गया है, उस वाराणसी में हे देवि ! मनुष्य एक ही जन्म में मुक्ति को प्राप्त करता है ।

सम्राड्विराण्मया लोका जायन्ते ह्यपुनर्भवाः ।
महर्जनस्तपश्चैव सत्यलोकस्तथैव च[2] ॥

सम्राट्, विराट् आदि मानवसमूह एवं महः, जनः, तपः एवं सत्यलोक में निवास करने वाले प्राणी अविमुक्त (काशी) क्षेत्र में आकर पुनर्जन्म से छुटकारा पा जाते हैं ।

यत्र योगश्च मोक्षश्च प्राप्यते दुर्लभो नरैः ।
अविमुक्तं समासाद्य नान्यद् गच्छेत् तपोवनम्[3] ॥

मानव मात्र जहाँ दुर्लभ योग एवं मोक्ष को प्राप्त करते हैं, उस अविमुक्त (काशी) क्षेत्र में पहुँचकर किसी अन्य तपोवन में जाने की आवश्यकता नहीं है ।

प्रसङ्गतोऽपि यन्नेत्रपथमानन्दकाननम् ।
यातं तेऽत्र न जायन्ते नेक्षेरन् पितृकाननम्[4] ॥

अकस्मात् किसी अन्य प्रयोजन के प्रसङ्ग में भी यदि यह आनन्दकानन (काशी-क्षेत्र) किसी मनुष्य के दर्शन-पथ में आ जाता है, तो पुनः वह पितृवन नहीं देखता, अर्थात् वह पितरों में नहीं जाता, जन्म-मरण से मुक्त हो जाता है ।

सर्वमक्षयमेतस्मिन्नविमुक्ते न संशयः ।
कालेनोपरता यान्ति भवेत्सायुज्यमक्षयम्[5] ॥

काशी में किये गये सम्पूर्ण कृत्य अक्षय होते हैं, इसमें संशय नहीं है । यहाँ समय से शरीर का त्याग कर जीवमात्र शिवसायुज्य मुक्ति को प्राप्त करते हैं ।

अविमुक्ते महादेवमर्चयन्ति स्तुवन्ति वै ।
सर्वपापविनिर्मुक्तास्ते तिष्ठन्त्यजरामराः[6] ॥

जो लोग अविमुक्त (काशी) क्षेत्र में महादेव की पूजा तथा स्तुति निश्चित रूप से करते हैं, वे सम्पूर्ण पापों से मुक्त होकर अजर-अमर रूप से काशी में निवास करते हैं ।

---

१. कू० पु० १।९२; २. म० पु० १८४।२३; ३. वही—१८४।३७ ।
४. का० ख० ६४।३५; ५. म० पु० १८४।७०; ६. वही—१८५।५९ ।

तस्मिन् प्राणान् परित्यज्य गच्छन्ति परमां गतिम् ।
सदा यजति रुद्रेण सदा दानं प्रयच्छति[1] ॥

जो लोग काशी-क्षेत्र में सदा यज्ञ के द्वारा रुद्र की आराधना करते हैं एवं सदैव दान करते रहते हैं, वे काशी-क्षेत्र में प्राणत्याग करने पर परमपद (मोक्ष) को प्राप्त करते हैं।

एतत्स्मृतं प्रियतमं मम देवि नित्यं क्षेत्रं विचित्रतरुगुल्मलतासुपुण्यम् ।
अस्मिन् मृतास्तनुभृतः पदमाप्नुवन्ति मूर्खागमेन रहिताऽपि न संशयोऽत्र[2] ॥

हे देवि ! गुल्म, लता एवं पुष्पों से युक्त वृक्ष के समान यह विचित्र काशी-क्षेत्र मुझे अत्यन्त प्रिय है। इस काशी-क्षेत्र में शरीरत्याग करने वाले प्राणिमात्र शिव-पद को प्राप्त करते हैं, इसमें किसी प्रकार का संशय नहीं है।

भक्तानामप्यभक्तानां पुण्यपापात्मनामपि ।
मुक्तिं दास्यामि सर्वेषां भक्तानामेव सा बहिः[3] ॥

भक्त हो या अभक्त एवं पुण्यात्मा हो या पापात्मा, काशी में सभी को मुक्ति प्राप्त होती है, काशी के बाहर वह मुक्ति केवल भक्तों (ज्ञानियों) को ही प्राप्त होती है।

येन प्राप्तः पुनर्मुक्त्यै कीदृशः सदनुग्रहः ।
तस्माच्च शिवभक्तानां महिमा केन वर्ण्यते ॥

भगवान् शिव का वह कैसा अनुग्रह है, जिससे पुनर्जन्म से मुक्ति मिलती है ? इसलिए शिवभक्तों की महिमा का वर्णन कौन कर सकता है ? अर्थात् शिव की कौन कहे, शिव-भक्तों तक की महिमा अवर्णनीय है।

पापक्षयकराश्चापि चतुर्वर्गफलप्रदाः ।
यासां च दर्शनाद् ध्यानाद् वन्दनात्पूजनादपि ॥

जो व्यक्ति काशी का दर्शन, ध्यान, वन्दन तथा पूजन आदि करते हैं, उन व्यक्तियों के पापों को 'काशी' नष्ट करती है तथा चतुर्वर्ग फल, अर्थात् धर्म, अर्थ, काम एवं मोक्ष प्रदान करती है।

प्राणप्रयाणसमये प्राप्य ज्ञानं महेश्वरात् ।
मुच्यन्ते जन्तवः सर्वे बद्धाः स्वाभाव्यविद्यया ॥

प्राण त्यागने की वेला में भगवान् शिव से ज्ञान प्राप्त कर स्वाभाविक अविद्या से जो बद्ध हैं, वे समस्त प्राणी मुक्त हो जाते हैं।

---

१. म० पु० १८३।१६ ; २. वही—१८०।७९ ; ३. काशीदर्शन ।

माभूदत्र प्रजानामतितरमसहा भैरवो यातना मे।
गेहेऽन्तर्भूप्रदेशे विघटितवपुषां तारकस्योपदेशात्[1] ॥

हमारे इस (काशी) क्षेत्र में प्राणियों को, चाहे वे घर में मृत्यु को प्राप्त हों या बाहर, तारकोपदेश के पश्चात् उन्हें किसी प्रकार की भी भैरवी यातना नहीं होनी चाहिए।

ब्रह्मज्ञानं न विन्दन्ति योगैरेकेन जन्मना।
जन्मनैकेन मुच्यन्ते काश्यामन्तकृतो जनाः[2] ॥

बहुत से योग-साधनों को करने के पश्चात् भी एक ही जन्म में तत्त्वज्ञान प्राप्त नहीं होता; परन्तु काशी में शरीरत्याग करने वाले मनुष्य एक ही जन्म में मोक्ष प्राप्त कर लेते हैं।

न मुक्तिरस्तीह तथा समाधिना
स्थिरेन्द्रियत्वोज्झिततत्समाधिना ।
क्रतुक्रियाभिर्न न वेदविद्यया
यथा हि काश्यां परिहाय विग्रहम्[3] ॥

काशी में शरीरत्याग करने से जैसी मुक्ति अनायास ही प्राप्त होती है, वैसी मुक्ति इन्द्रियों की चञ्चलता से नष्ट समाधि वाले योगाभ्यास या यज्ञानुष्ठान या वेदविद्या से भी अन्यत्र कहीं पर नहीं प्राप्त हो सकती।

अविमुक्ते तनुं त्यक्त्वा गच्छन्ति परमां गतिम्।
अष्टौ मासान् विहारस्य यतीनां संयतात्मनाम्[4] ॥

अविमुक्त (काशी) क्षेत्र में शरीर का परित्याग करने से परमगति की प्राप्ति हो जाती है। संयत आत्मा वाले यतियों (संन्यासियों) के लिए आठ महीनों का विहार (काशीवास) विहित है।

कृमिकीटपतङ्गा वा ब्राह्मणो वा बहुश्रुतः।
मृतश्चतुर्विधो जन्तुस्त्रिनेत्रत्वमुपैति हि[5] ॥

कृमि--कीट--पतंग या बहुत श्रेष्ठ विद्वान् ब्राह्मण, सभी चतुर्विध प्राणी काशी में शरीरत्याग करके त्रिनेत्रधारी विश्वनाथ शङ्करस्वरूप हो जाते हैं।

---

१. काशीमूलरहस्य; २. का० ख० ३२।१२०; ३. वही—४४।३७।
४. म० पु० १८४।३२; ५. उप-आत्मपुराण।

बहुजन्मसमभ्यासाद्योगो मुच्येत वा न वा ।
मृतमात्रो विमुच्येत काश्यामेकेन जन्मना[१] ।।

योगीजन अनेक जन्म में योगाभ्यास करने पर भी मोक्ष प्राप्त करें या न प्राप्त करें; परन्तु काशी में मात्र प्राणत्याग करने वाले तो एक ही जन्म में मुक्ति प्राप्त कर लेते हैं।

सप्तजन्मकृतात्पापान्मुच्यते नात्र संशयः ।
काश्यां मृतस्तु सालोक्य साक्षात्प्राप्नोति सत्तमः[२] ।।

काशी में सात जन्मों के किये हुए पापों से निःसन्देह मुक्ति प्राप्त होती है। काशी में मात्र प्राणत्याग करने वाले व्यक्ति भी साक्षात् सालोक्य मुक्ति प्राप्त करते हैं।

इदं प्रणवविज्ञानं स्थितं वर्गचतुष्टये ।
सर्वोत्कृष्टनिदानं च काश्यां सन्मुक्तिकारणम्[३] ।।

यह प्रणव-विज्ञान चारों वर्णों में स्थित मनुष्यों के लिए सर्वश्रेष्ठ निदान का कारण है एवं मात्र काशीवास करने वाले मनुष्यों की मुक्ति का हेतु है।

एनमेव हि देवेशि ! सर्वमन्त्रशिरोमणिम् ।
काश्यामहं प्रदास्यामि जीवानां मुक्तिहेतवे[४] ।।

श्रीविश्वनाथ जी पार्वती जी से कहते हैं कि हे देवेशि ! यह प्रणव (ॐ) सर्वश्रेष्ठ मन्त्र है, जिसे मैं काशी में जीवों को मुक्ति-प्राप्ति हेतु प्रदान किया करता हूँ।

एतद्रहस्यं परमं लब्ध्वा सूतान्मुनीश्वराः ।
काश्यामेव समासीना मुक्ताः शिवपदं ययुः[५] ।।

सूत जी ने शौनकादि ऋषियों को सम्बोधित करते हुए कहा कि हे ऋषियों ! जो व्यक्ति इस (काशी के) परम रहस्य को जान लेता है, वह काशी में वास करते हुए अन्त में मुक्त होकर शिवपद को प्राप्त करता है। शौनकादि ऋषियों ने इस परम रहस्य को जानकर काशी में निवास किया और अन्त में शिवपद को प्राप्त किया।

---

१. का० ख० ३२।१२२ ; २. पद्मपुराण; ३. कै० सं० २३।३२।
४. वही—२३।१० ; ५. वही—१९।५८।

ज्येष्ठतीर्थे नरः काश्यां दत्त्वा दानानि शक्तितः।
ज्येष्ठान् स्वर्गानवाप्नोति नरो मोक्षं च गच्छति[1]॥

काशी के ज्येष्ठतीर्थ पर शक्ति के अनुसार दान करने से मनुष्य उत्तम स्वर्गादि भोगों को भोगकर अन्त में मोक्ष को प्राप्त करता है।

ज्येष्ठेश्वरोऽर्च्यः प्रथमं काश्यां श्रेयोर्ऽथिभिर्नरैः।
ज्येष्ठागौरी ततोऽभ्यर्च्या सर्वज्येष्ठमभीप्सुभिः॥

कल्याण चाहने वाले लोगों को सर्वप्रथम काशी में ज्येष्ठेश्वर भगवान् की अर्चना, तदनन्तर ज्येष्ठा-गौरी की पूजा करने से सब में ज्येष्ठत्व पद की प्राप्ति होती है।

षडङ्गसेवनादस्माद्वाराणस्यां नरोत्तम!।
न जातु जायते जन्तुर्जननीजठरे पुनः॥

हे नरश्रेष्ठ! इस षडङ्ग महायोग का वाराणसी-क्षेत्र में जो व्यक्ति उत्तम सेवन करता है, वह पुनः माँ के गर्भ में नहीं जाता, अर्थात् वह जन्म-मरण के क्लेशों से मुक्ति प्राप्त कर मोक्ष प्राप्त करता है।

येनैकजन्मना मुक्तिर्युष्मत्करतले स्थिता।
अनेकजन्मसंसारबन्धनिर्मोक्षकारिणी[2]॥

काशीवासियों के लिए मुक्ति करतलामलकवत् होती है, अर्थात् उन्हें एक ही जन्म में मुक्ति प्राप्त हो जाती है एवं यह काशी अनेक जन्मों को देने वाले संसाररूपी बन्धन का नाश करने वाली है।

अविमुक्ते तव क्षेत्रे सर्वेषां मुक्तिसिद्धये।
अहं सन्निहितस्तत्र पाषाणप्रतिमादिषु[3]॥

भगवान् विष्णु का शिव जी के प्रति कथन है कि मैं आपके अविमुक्त (काशी) क्षेत्र में समग्र प्राणियों की मुक्तिसिद्धि (मुक्ति की प्राप्ति) के लिए पाषाण-प्रतिमादि की सन्निधि में सदैव रहता हूँ।

क्षेत्रेऽस्मिन् योऽर्चयेद्भक्त्या मन्त्रेणानेन मां शिव।
ब्रह्महत्यादिपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः[4]॥

हे देवेश शिव! आपके काशी-क्षेत्र में षडक्षर मन्त्र से जो व्यक्ति मेरा (विष्णु का) पूजन करेगा, उस व्यक्ति को मैं ब्रह्महत्यादि पापों से रहित कर दूँगा।

---

१. का० ख० ६३।१९; २. वायवीय-सं० ३।५२; ३. रामतापनीयोपनिषद्; ४. वही।

पुरागतो भक्तकृपाकरोऽसौ कैलाशतश्शैलसुतागणाढ्यः।
विहर्तुकामः किल काशिकां वै स्वशैलतो निर्जरचक्रवर्ती[1]॥

प्राचीनकाल में भक्तों के ऊपर कृपा करने वाले निर्जर-चक्रवर्ती भगवान् शिव अपने निवास स्थान कैलाश-पर्वत से भगवती पार्वती एवं समस्त गणों के साथ विहार करने की इच्छा से काशी आये थे।

यः प्रधानतया काश्यां मध्ये तिष्ठति शङ्करः।
स्वपुरीजनसौख्यार्थमतोऽसौ मध्यमेश्वरः[2]॥

भगवान् शङ्कर अपने भक्तों को सुख देने लिए तथा उन भक्तों की रक्षा करने के लिए प्रधानरूप से काशीनगरी के मध्य में विराजमान रहते हैं, इसीलिए उन्हें मध्यमेश्वर कहा जाता है।

विषयासक्तचित्तोऽपि त्यक्तधर्मरुचिर्नरः।
इह क्षेत्रे मृतो यो वै संसारं न पुनर्वसेत्॥

विषयों में आसक्तचित्त वाला हो अथवा अपने शास्त्रविहित धर्म (कर्म) का परित्याग करने वाला हो, फिर भी इस काशी-क्षेत्र में शरीरत्याग करने वाला पुनः संसारी नहीं होता, अर्थात् जन्म-मरण के बन्धन से मुक्त हो जाता है।

वाराणस्यां मुनिः पूर्वं स्थितो भोगपराङ्मुखः।
विहाय च फलं सर्वं शुभाशुभस्य कर्मणः[3]॥

सम्पूर्ण भोगों से विरत होकर तथा कर्मों के द्वारा होने वाले सम्पूर्ण पुण्य-पापरूपी फलों का त्याग कर मुनि लोग प्राचीनकाल से ही इस काशी में निवास करते रहे हैं। अतः काशी का गौरव अत्यन्त महान् है, ऐसा समझकर काशीवास अवश्य करना चाहिए।

कुत्रचिच्च शुभं वर्धेत कुत्रचित्पपासंक्षयः।
सर्वेषां कर्मणां नाशो नास्ति काशीपुरीं विना[4]॥

किन्हीं तीर्थों के सेवन से पुण्यों की वृद्धि होती है, तो कहीं पर पापों का नाश होता है; किन्तु काशीपुरी का सेवन किये विना सम्पूर्ण कर्मों का नाश नहीं होता, अर्थात् काशीवास सम्पूर्ण शुभाशुभ कर्मों को नष्ट कर मुक्ति प्रदान करा देता है।

---

१. रुद्र-सं० ५।४२।१३; २. उमा-सं० ७७।८; ३. धर्म-सं० २।१७।
४. ज्ञान-सं० ५१।७२।

काशिका सकलतीर्थसेविता काशिका सकलदेवपूजिता ।
काशिका सकलशास्त्ररूपिता काशिका परमपदप्रकाशिका ।।

यह काशी समस्त तीर्थों से सेवित है तथा यह काशी समस्त देवों से पूजित है एवं यह काशी समस्त शास्त्रों में वर्णित है और यह काशी परमपद (मोक्ष) की प्रकाशिका है।

काशीति यद्विदुर्वेदास्तत्र मुक्तिः प्रतिष्ठिता ।
काश्यन्तं परमं क्षेत्रं विशेषफलसाधनम् ।।

वेद जिसे 'काशी' मानता है, उसी काशी में मुक्ति प्रतिष्ठित है। काशीपर्यन्त परम क्षेत्र विशेष फलदायक माना गया है।

तत्र जागरणं कृत्वा चतुर्दश्यामुपोषिताः ।
प्राप्नुवन्ति परं ज्ञानं यत्र कुत्रापि वै मृताः[1] ।।

ओङ्कारेश्वर में रात्रि में जागरण करते हुए चतुर्दशी को उपवास करने वाले नर-नारी जहाँ कहीं भी शरीरत्याग करने पर परम ज्ञान, अर्थात् मोक्ष को प्राप्त करते हैं, अर्थात् काशी से अन्यत्र स्थानों पर भी शरीरत्याग करने से उन्हें मोक्ष की प्राप्ति अवश्य ही होती है।

क्षेत्रे ऋणत्रयात् काशी मोचयेत् सर्वदेहिनः ।
आधारभूता जीवानामाद्या प्रकृतिरव्यया[2] ।।

यह काशी समस्त प्राणियों को तीनों ऋणों (पितृऋण, देवऋण एवं ऋषिऋण) से मुक्ति प्रदान कराती है। यह (काशी) जीवों की आधारभूत आद्या नाशहीन प्रकृति है।

यावज्जीवं वसेद्यस्तु क्षेत्रमाहात्म्यविन्नरः ।
जन्ममृत्युभयं हित्वा स याति परमां गतिम् ।।

काशी-क्षेत्र के माहात्म्य को जानकर जो व्यक्ति जीवनपर्यन्त काशी में निवास करता है, वह जन्म-मृत्युरूपी भय को त्याग कर परमगति (मोक्ष) को प्राप्त करता है।

क्व काशिकायां सुखदा प्रवृत्तिः क्व पापराशौ विषये प्रवृत्तिः ।
क्व विश्वनाथानुगतिः परप्रदा क्व दीनमर्त्योपसृतिः सुदुःसहा ।।

काशी में निवास का सुख प्रदान करने वाली प्रवृत्ति कहाँ ? पापसमूह रूप सांसारिक प्रवृत्ति कहाँ ? मोक्ष देने वाली श्रीविश्वनाथ जी की सेवा कहाँ ? एवं असहनीय दुःख देने वाली मरणशील प्राणियों की संगति कहाँ ? अर्थात् काशीवास का फल सर्वोत्तम सुख देने वाला है।

१. का० ख० ७४।९९; २. काशीमूलरहस्य।

काशीप्रदक्षिणा येन कृता त्रैलोक्यपावनी ।
सप्तद्वीपा साब्धिशैला भूःपरिक्रामिताऽमुना[1] ॥

जिसने त्रैलोक्यपावनी (तीनों लोकों को पवित्र करने वाली) काशी की परिक्रमा कर ली, मानो उसने सात द्वीपों वाली पृथिवी को समुद्र, पर्वत आदि के सहित परिक्रमा कर ली ।

अविमुक्तं महत्क्षेत्रं पञ्चक्रोशपरीमितम् ।
ज्योतिर्लिङ्गं तदेकं हि ज्ञेयं विश्वेश्वराभिधम् ॥
एकदेशस्थितमपि यथा मार्तण्डमण्डलम् ।
दृश्यते सर्वगं सर्वैः काश्यां विश्वेश्वरस्तथा[2] ॥

पञ्चक्रोश परिमाण जो अविमुक्त नामक महाक्षेत्र है, उसे एक ही विश्वेश्वर-संज्ञक ज्योतिर्लिङ्ग जानना चाहिए। जिस तरह सूर्यदेव एकदेश में स्थित रहने पर भी सब किसी को सर्वव्यापी दिखलाई पड़ते हैं, उसी तरह काशी में विश्वनाथ जी सर्वत्र ही स्थित हैं ।

देहभङ्गं समासाद्य धीमन्तः सङ्गवर्जिताः ।
गता एव परं मोक्षं प्रसादान्मम सुव्रते[3] ॥

हे सुव्रते ! सर्वसङ्ग का परित्याग कर जो बुद्धिमान् लोग वाराणसी क्षेत्र में मृत्युलाभ करते हैं, उन्हें मेरे (भगवान् शिव के) प्रसाद से परम मोक्ष की प्राप्ति होती है ।

प्रातः स्नात्वा महातीर्थे भस्मोद्धूलितविग्रहौ ।
त्रिपुण्ड्रविलसद्भालौ रुद्राक्षानेककण्ठितौ ॥

जो लोग महातीर्थ (मणिकर्णिकाघाट) में प्रातःकाल स्नान करके, शरीर में भस्म तथा मस्तक पर त्रिपुण्ड्र लगाकर अनेक रुद्राक्षों की माला को कण्ठ में धारण किये रहते हैं, वे ही काशी में शिव-योगी रूप से विराजमान हैं। ऐसे ही व्यक्ति काशी में जीवन्मुक्त माने जाते हैं ।

शैलानामुत्तमं शैलं तडागानां तथोत्तमम् ।
पुण्यकृद्भवभक्तैश्च ह्यविमुक्तं तु सेव्यते[4] ॥

यह अविमुक्त (काशी) क्षेत्र समग्र शैलों की अपेक्षा उत्तम है तथा समस्त सरोवरों की अपेक्षा श्रेष्ठ है। इस अविमुक्त (काशी) क्षेत्र के सेवन का लाभ पुण्यवान् भक्तों को ही हो पाता है ।

---

१. ना० पु० षष्ठाध्याय; २. का० ख० २६।१११-१३२ ।
३. म० पु० १८०।७२, ४. म० पु० १८४।२७ ।

आयुः कर्म च वित्तं च विद्या निधनमेव च ।
पञ्चैतान्यपि सृज्यन्ते गर्भस्थस्यैव देहिनः ॥

प्रत्येक प्राणी की गर्भावस्था में स्थिति होते ही उसकी आयु, कर्म, धन, विद्या एवं मृत्यु इन पाँचों का निर्धारण ब्रह्मदेव के द्वारा कर दिया जाता है।

तत्सन्निधौ प्रीतिकेशस्तत्र प्रीतिर्मम प्रिये ।
तत्रोपवासादेकस्मात्फलमब्दशताधिकम्[1] ॥

उनके (ईशानेश्वर के) पास में ही मेरे (विश्वनाथ जी के) प्रीतिवर्धक प्रीतिकेश्वर विराजमान हैं। हे देवि ! वहाँ पर निराहार रहकर त्रिकाल स्नान, त्रिकाल सन्ध्या कर एक उपवास करने पर भी सैकड़ों वर्ष व्रत करने का उत्तम फल प्राप्त होता है।

एकं जागरणं कृत्वा प्रीतिकेश उपोषितः ।
गणत्वपदवी तस्य निश्चिता मम पर्वणि[2] ॥

जो कोई मनुष्य शिवरात्रि पर्व पर प्रीतिकेश्वर के समीप एक रात्रि भी जागरण करता है, वह अवश्य ही मेरी (भगवान् शिव का) गण हो जाता है।

माघकृष्णचतुर्दश्यामुपोष्य निशि जागृयात् ।
कृत्तिवासेशमभ्यर्च्य यः स यायात्परां गतिम्[3] ॥

माघकृष्ण चतुर्दशी (सम्भवतः फाल्गुनकृष्ण चतुर्दशी = महाशिवरात्रि) को उपवास और रात्रि में जागरण करके कृत्तिवासेश्वर की पूजा करने से परमगति (मोक्ष) की प्राप्ति होती है।

एकेन जन्मना काश्यां निर्वाणं समवाप्यते ।
अतः परं कः सुगम उपायः साधनैर्विना ॥

काशी में (मात्र निवास करने से) एक ही जन्म में अन्य साधनों के विना भी मोक्ष प्राप्त होता है। इससे सरल एवं उत्तम उपाय और क्या है ? अर्थात् मोक्ष-प्राप्ति के लिए काशीवास से उत्तम कोई उपाय नहीं है।

योजनं विद्धि तत्क्षेत्रं मृत्युकालेऽमृतप्रदम् ।
चतुष्क्रोशं चतुर्दिक्षु क्षेत्रमेतत्प्रकीर्तितम् ॥

योजनपरिमित चारों दिशाओं में चार-चार कोश में फैला हुआ वह काशी-क्षेत्र मृत्युकाल में मोक्ष देने वाला है। अर्थात् शङ्कर जी उस मोक्ष-क्षेत्र में मृत्युकाल सभी प्राणियों को मुक्ति प्रदान करते हैं।

---

१. का० ख० ९७।२१८; २. वही—९७।२१९; ३. वही—९८।४४।

परमन्यादृशी काशी स्वयं विश्वेशनिर्मितिः ॥

परम आनन्द को प्रदान करने वाली काशी स्वयं विश्वनाथ जी के द्वारा निर्मित है।

अहो वाराणसी धन्या यत्र सन्निहितः शिवः ।
सर्वेषां यत्र पापानां प्रवेशो नैव विद्यते ॥
न पापेभ्यो भयं तत्र न भयं तत्र वै यमात् ।
न गर्भवासजं दुःखं तत्क्षेत्रं को न सेवते ॥

अहो ! अत्यन्त आश्चर्य का विषय है कि जिस धन्य काशी-क्षेत्र में भगवान् शङ्कर अत्यन्त समीप हैं, जहाँ जन्म-जन्मान्तर के पापों का प्रवेश तक नहीं है, अर्थात् काशीवासियों को किसी प्रकार के पाप का भय नहीं है तथा जहाँ मृत्यु के समय यमराज से भी भय नहीं है एवं गर्भवास से होने वाले दुःख का भी भय नहीं है, ऐसे परमपवित्र काशी-क्षेत्र का सेवन कौन नहीं करना चाहेगा ?

धर्मादर्थोऽर्थतः कामः कामात्सर्वसुखोदयः ।
स्वर्गोऽपि सुलभो धर्मात् काश्येका दुर्लभा परम्[1] ॥

धर्म से अर्थ, अर्थ से काम एवं काम से समस्त सुखों का उदय होता है। (अधिक क्या कहा जाय) धर्म से स्वर्ग भी सुलभ है; परन्तु केवल एक काशी ही दुर्लभ है।

क्षेत्रस्य परमं तत्त्वमेतदेव प्रिये ! ध्रुवम् ।
संसाररोगग्रस्तानामिदमेव महौषधम्[2] ॥

भगवान् शङ्कर जी पार्वती जी से कहते हैं कि हे प्रिये ! इस काशी-क्षेत्र का परम रहस्य निश्चित रूप से यही है कि संसाररूपी रोग से ग्रसित जीवों के लिए यही (काशी) महान् औषधि है।

देवदानवगन्धर्वयक्षरक्षोमहोरगाः ।
अविमुक्तमुपासन्ते तन्निष्ठास्तत्परायणाः[3] ॥

देवता, दानव, गन्धर्व, यक्ष, राक्षस एवं महासर्प भी निष्ठा से तत्परतापूर्वक इस अविमुक्त (काशी-क्षेत्र) की उपासना करते रहते हैं।

ज्ञात्वा क्षेत्रस्य माहात्म्यं यो वसेत् कृतनिश्चयः ।
तं तारयति विश्वेशो जीवन्तमथवा मृतम्[4] ॥

जो व्यक्ति क्षेत्र (काशी) की महिमा को समझकर दृढ़-संकल्प होकर यहाँ पर निवास करता है, भगवान् विश्वेश्वर उसे जीवित रहते ही अथवा मृत होने पर तार देते हैं।

---

१. का० ख० २५।३३; २. वही—७३।६६।
३. म० पु० १८४।४६ ; ४. का० ख० ३।६४।

अविमुक्तरहस्यज्ञा मुच्यन्ते ज्ञानिनो नराः ।
अज्ञानिनोऽपि तिर्यञ्चो मुच्यन्ते गतकिल्बिषाः[1] ।।

ज्ञानी मनुष्य अविमुक्त (काशी) क्षेत्र के रहस्य को जान लेने पर जैसे मुक्त होते हैं, तिर्यग्-योनि वाले अज्ञानी जीव लोग भी काशी के माहात्म्य को विना जाने ही यहाँ पर शरीरत्याग करने से निष्पाप होकर वैसी ही मुक्ति को प्राप्त कर लेते हैं ।

यत्र विश्वेश्वरः साक्षात्तारापतिविभूषणः ।
तारयेत्तारकद्रोण्या दुस्तराद् भवसागरात् ।।
विश्वेशानुगृहीतानां विच्छिन्नाखिलकर्मणाम् ।
भवेत्काशीं प्रति मतिर्नेतरेषां कदाचन[2] ।।

जहाँ पर साक्षात् चन्द्रभूषण भगवान् विश्वनाथ तारकमन्त्ररूप तरणी (नौका) के द्वारा इस दुस्तर संसार-सागर से पार उतार देते हैं, उस काशी के प्रति उन्हीं लोगों की बुद्धि हो सकती है, जिन पर विश्वनाथ जी की पूर्ण दया हो और जो अपने समस्त कर्मबन्धनों को काट चुके हों, नहीं तो दूसरों की बुद्धि उस पर कभी नहीं हो सकती ।

काशीं प्रति मनो येषां निःशेषक्षालितैनसाम् ।
त एव मानवा लोके सत्यं नृपशवो परे[3] ।।

जो लोग अपने समस्त पापों को धो डालते हैं, उन्हीं का मन काशी की ओर झुकता है और वे ही लोग इस संसार में यथार्थ मनुष्य कहे जा सकते हैं, अन्य लोग तो सचमुच मनुष्यरूप पशु ही होते हैं ।

यदल्पमपि वै काश्यां कृतं कर्म शुभावहम् ।
तस्य मोक्षः परीपाको निश्चितं मदनुग्रहात् ।।

यदि थोड़ा भी शुभावह कर्म काशी में कर लिया जाता है, तो मेरी (शिव की) कृपा से उसका परिणाम मोक्ष ही उस नींव को प्राप्त होता है ।

जाने सत्त्वमया जाताः क्षेत्रस्यास्य निषेवणात् ।
नीरजस्का वितमसः संसारार्णवपारगाः[4] ।।

कार्त्तिकेय जी अगस्त्य ऋषि से कहते हैं कि काशी-क्षेत्र का सेवन करने से, काशी में विधिपूर्वक निवास करने से मनुष्य सत्त्वमय हो जाता है, अर्थात् रजोगुण तथा तमोगुण से मुक्त होकर वह संसाररूपी सागर से पार हो जाता है ।

१. का० ख० ३।६५ ; २. वही—५०।१२९-१३० ।
३. वही—५०।१३१ ; ४. वही—६४।४२ ।

काशीवासिजनो देवि मम गर्भे वसेत्सदा ।
अतस्तं मोचयाम्यन्ते प्रतिज्ञेयं यतो मम[1] ।।

भगवान् विश्वनाथ जी भवानी जी से कहते हैं कि हे देवि ! काशीवासी सदा मेरे गर्भ में निवास करते हैं । अतः अन्त में मैं उन्हें मुक्त कर देता हूँ, यही हमारी प्रतिज्ञा है ।

येषां क्वापि गतिर्नास्ति तेषां वाराणसी पुरी ।
पञ्चक्रोशी महापुण्या हत्याकोटिविनाशिनी[2] ।।

जिनको कहीं गति नहीं है, उनके लिए एकमात्र वाराणसी ही गति है । यहाँ पर पञ्चक्रोशी की यात्रा करने से महान् पुण्य का लाभ होता है, जिससे करोड़ों हत्या के पाप जैसा भी महान् पाप नष्ट होता है ।

आविरासीत्स्वयं तत्र ज्येष्ठेश्वरसमीपतः ।
सर्वसिद्धिप्रदा गौरी ज्येष्ठा श्रेष्ठा समन्ततः ।।
ज्येष्ठे मासि सिताष्टम्यां तत्र कार्यो महोत्सवः ।
रात्रौ जागरणं कार्यं सर्वसम्पत्समृद्धये[3] ।।

वहीं ज्येष्ठेश्वर के समीप ही सभी प्रकार से श्रेष्ठ तथा समस्त सिद्धियों को प्रदान करने वाली ज्येष्ठा-गौरी स्वयं प्रकट हुईं । ज्येष्ठ मास की शुक्ला अष्टमी को वहाँ पर महोत्सव और रात्रि में जागरण सम्पत्ति की समस्त समृद्धियों (की प्राप्ति) के लिए करना चाहिए ।

ये वसन्ति सततं ममाश्रये शुद्धभावनिरतास्तपोमयाः ।
ब्रह्मरूपममलं हि काशिकां चाशयेत्सुखकरं न चान्यथा ।।

जो लोग निरन्तर श्रीविश्वनाथ के आश्रय से इस काशी-क्षेत्र में रहते हैं और शुद्धभाव से तप करते हैं, वे अमल (पवित्र) ब्रह्मरूप को प्राप्त करते हैं और परलोक में सब प्रकार के सुखों का लाभ उन्हें होता है, इसमें कोई संशय नहीं करना चाहिए ।

एकरात्रं स्थिता ये तु पुण्यसम्भारसन्ततिः ।
तेषां प्रवर्धते नित्यं माससंवत्सरक्रमैः ।।

यदि कोई मनुष्य काशी में एक रात्रि भी निवास करता है, तो उसे बहुत पुण्य प्राप्त होता है, वह पुण्य मास, वर्ष के क्रम से बराबर वृद्धि को प्राप्त होता है । काशी में एक रात्रि निवास करने का विधान है कि निर्जल व्रत रहकर त्रिकाल

१. का० ख० ३२।१३२; २. रु० सं० २२।२७ । ३. का० ख० ६३।१३-१४ ।

गङ्गास्नान, त्रिकाल सन्ध्या एवं यथाशक्ति दान और शिव की पूजा करते हुए काशी-माहात्म्य का श्रवण करने से तथा रात्रि में जागरण करके शङ्कर जी का पूजन करने वाले नर-नारी को उपर्युक्त समग्र फल प्राप्त होते हैं।

वापीजलं तु तत्रस्थं देवदेवस्य सन्निधौ।
दर्शनात् स्पर्शनात् स्नानात् कृतार्थो मानवो भुवि ॥

काशी-क्षेत्र में श्रीविश्वनाथ के समीप स्थित वापी (बावली) का जलपान करने से भी समस्त प्राणी तर जाते हैं, उनके सभी पापों का नाश हो जाता है।

मणिकर्ण्यां नरः स्नात्वा मणिकर्णीशमर्चयेत्।
ततो वाप्यां नरः स्नात्वा विश्वेशं पूजयेत्तु यः॥
सर्वपापविनिर्मुक्तो ब्रह्मभूयाय कल्पते ॥

जो मनुष्य मणिकर्णिका में स्नान एवं मणिकर्णिकेश्वर का पूजन कर ज्ञानवापी में स्नान करके विश्वेश्वर की पूजा करता है, वह ब्रह्मस्वरूप हो जाता है।

एक एव प्रभावोऽस्ति क्षेत्रस्य परमेश्वरि।
एकेन जन्मना देवि मोक्षं प्राप्नोत्यनुत्तमम् ॥

हे परमेश्वरि! इस काशी-क्षेत्र का यही एकमात्र प्रभाव है कि एक जन्म में ही मनुष्य को सर्वश्रेष्ठ मोक्ष की प्राप्ति हो जाती है।

दुर्लभं तु कलौ देवैस्तज्जलं ह्यमृतोपमम्।
तारणं सर्वजन्तूनां पानात्पापस्य नाशनम् ॥

काशी-क्षेत्रीय वापीजल भी कलियुग में देव-दुर्लभ है। यह जल भी प्राणिमात्र को तार देता है, इसके पान से समग्र पाप नष्ट हो जाते हैं।

मुमुक्षोः प्राणिमात्रस्य पापाद् भीरोः शिवात्मनः।
जाते साधनवैकल्ये काशी पूर्णं प्रकल्पयेत्[1] ॥

जो मुमुक्षु हैं, पाप से डरते हैं तथा शिवभक्त हैं, वे साधन से विकल होने पर भी काशी द्वारा साधनों की पूर्ति प्राप्त करते हैं।

त्वादृशो न हि लोकेऽस्मिन् विद्यते पुण्यकृत्तमः।
यत्त्वया भगवान्पूर्वं दृष्टो विश्वेश्वरः शिवः[2] ॥

आप जैसा इस लोक में कोई पुण्यात्मा नहीं है; क्योंकि आपने विश्वेश्वर शिव (विश्वनाथ जी) का दर्शन किया है।

---

१. शिवरहस्य; २. पद्मपु० ३५।२६।

पूजयित्वा महादेवं काशीनाथं जगद्गुरुम् ।
चतुर्विधाश्च ये जीवा ये च वेदादयः परे ।।
ते सर्वे मुक्तिमायान्ति काश्यां स्थावरजङ्गमाः ।।

जो लोग जगद्गुरु काशीनाथ महादेव जी की पूजा करते हैं, वे चार प्रकार के जीव तथा चार प्रकार के वेद, समस्त स्थावर-जंगम काशी को प्राप्त कर मुक्ति प्राप्त करते हैं।

विघ्नैश्चालोड्यमानोऽपि योऽविमुक्तं न मुञ्चति ।
स मुञ्चति जरां मृत्युं जन्म चैतदशाश्वतम् ।।
अविमुक्तप्रसादात्तु शिवसायुज्यमाप्नुयात्[1] ।।

विघ्नों के द्वारा पीड़ित होने पर भी जो इस अविमुक्त (काशी) क्षेत्र का त्याग नहीं करते हैं, वे अशाश्वत जरा, मृत्यु और जन्म को त्याग देते हैं तथा इस अविमुक्तक्षेत्र को अनुकम्पा से शिव-सायुज्य मुक्ति को प्राप्त कर लेते हैं।

सगणो हि भवो देवो भक्तानामनुकम्पया ।
अविमुक्तं परं क्षेत्रमविमुक्ते परा गतिः[2] ।।

काशीपति भगवान् विश्वनाथ जी अपने गणों के साथ अपने भक्तों के ऊपर कृपा करने के लिए यहाँ निवास करते हैं। इसलिए इस अविमुक्त (काशी) क्षेत्र में परमगति प्राप्त होती है।

इममेव हि देवेशि ! सर्वमन्त्रशिरोमणिम् ।
काश्यामहं प्रदास्यामि जीवानां मुक्तिहेतवे[3] ।।

विश्वनाथ जी कहते हैं कि हे देवेशि ! यह तारक-मन्त्र ही सब मन्त्रों का शिरोमणि है। इसे ही मैं काशी में मुक्ति हेतु प्रदान किया करता हूँ।

जल्पन् जल्पन् प्रकृतिविकृतौ प्राणिनां कर्णमूले ।
वीथ्यां वीथ्यामटति जटिलः कोऽपि काशीनिवासी[4] ।।

मृत्युकाल में प्राणियों के कर्णमूल (कान) में भगवान् शिव तारक-मन्त्र का उपदेश देते हैं और गली-गली में काशी-निवासी शिव (विश्वनाथ जी) भ्रमण करते रहते हैं। यदि भगवान् विश्वनाथ जी स्वयं काशी की गलियों की यात्रा करते रहते हैं, तो मनुष्यों को तो काशी की यात्रा प्रयत्नपूर्वक अवश्य ही करनी चाहिए।

---

१. म० पु० १८२।२७; २. वही–१८२।१९; ३. शिवपु० उत्तरार्द्ध–३।९१ ।
४. पद्मपुराण।

अहो वैश्वेश्वरे क्षेत्रे मरणादपि नो भयम् ।
यत्र सर्वे प्रतीक्षन्ते मृत्युं प्रियमिवातिथिम् ।।

अहो ! विश्वनाथ की नगरी में मरने का कोई डर ही नहीं है; क्योंकि वहाँ पर तो सभी लोग मृत्यु का अपने प्यारे पाहुन (अतिथि) की तरह इन्तजार करते रहते हैं।

आदावनाराध्य भवन्तमत्र यो मां भजिष्यत्यपि भक्तियुक्तः ।
समीहितं तस्य न सेत्स्यति ध्रुवं परात्परान्मेऽम्बुजचक्रपाणे[1] ।।

हे चक्रपाणे! जो कोई मेरा अनन्य भक्त होने पर भी प्रथमतः तुम्हारी आराधना किये बिना मेरा पूजन करेगा, उसके मनोरथ की सिद्धि कभी भी मुझसे नहीं हो सकेगी। अतएव शङ्कर तथा विष्णु दोनों का दर्शन-पूजन अवश्य करना चाहिए।

अष्टमः सर्वकष्टौघानविमुक्तविनायकः ।
अविमुक्ते मम क्षेत्रे हरेत्प्रणतचेतसाम्[2] ।।

ये आठवें अविमुक्त-विनायक हैं, जो मेरे इस अविमुक्त-क्षेत्र में भक्तिमान् लोगों के समस्त कष्टों को दूर कर देते हैं।

काशीमिदानीं यास्यामि विश्वेश्वरविलोकने ।
अद्य यात्राऽस्ति महती कार्तिक्यां बहुपुण्यदा ।।

इस काशी-क्षेत्र में इस समय कार्तिक मास में भगवान् विश्वनाथ जी का दर्शन तथा काशी की यात्रा बहुत पुण्य देने वाली है। अतः कार्तिक मास में प्रयत्न-पूर्वक काशी की यात्रा अवश्य करनी चाहिए।

मनोनिवृत्तिः परमोपशान्तिः सा तीर्थवर्या मणिकर्णिका च ।
ज्ञानप्रवाहा विमलादिगङ्गा सा काशिकाऽहंनिजबोधरूपा[3] ।।

भगवत्पादाचार्य शङ्कर ज्ञानियों के लिए कहते हैं कि जहाँ पर मन एकाग्र हो जाय, अर्थात् वासनारहित हो जाय और सुख की प्राप्ति हो, वही स्थान मणिकर्णिका है। विशुद्ध ज्ञान-प्रवाह ही गङ्गा है तथा स्वस्वरूप का बोध (ज्ञान) ही काशी है।

---

१. का० ख० ९८।३१; २. वही—५७।११४; ३. आदि शङ्कराचार्य। का० मा०—१४

काशीक्षेत्रं शरीरं त्रिभुवनजननी व्यापिनी ज्ञानगङ्गा
भक्तिश्रद्धामयोऽयं निजगुरुचरणध्यानयोगः प्रयागः।
विश्वेशोऽयं तुरीयः सकलजनमनस्साक्षिभूतोऽन्तरात्मा
देहे सर्वं मदीये यदि वसति पुनस्तीर्थमन्यत्किमस्ति[1] ॥

यह शरीर ही काशी-क्षेत्र है, तीनों लोकों को उत्पन्न करके उन्हीं में व्याप्त है, ऐसा जो ज्ञान, वही गङ्गा है, भक्ति एवं श्रद्धा ही गया है तथा अपने इष्टदेव और गुरु के चरणों का ध्यान ही प्रयागरूप योग है एवं तुरीय आत्मा ही साक्षात् भगवान् विश्वनाथ हैं। समस्त प्राणियों के मन के साक्षी सर्वभूतात्मा ही तो इस देह में निवास करते हैं, अर्थात् परमात्मा और आत्मा अभिन्न हैं, ऐसा जानने वाले के लिए आत्मा से भिन्न कोई तीर्थ नहीं है।

काश्यां पापं ये प्रकुर्वन्ति पापास्तेषां दुःखं जायते निश्चयेन।
शृण्वन्तु सर्वे वक्ष्यामि काशीमाहात्म्यमद्भुतम्।
न चात्र विस्मयः कार्यः काशीं प्रति कदाचन[2] ॥

जो पापी मनुष्य काशी-क्षेत्र में पाप करते हैं, उन्हें अवश्य ही दुःख प्राप्त होता है। मैं काशी के अद्भुत माहात्म्य का वर्णन कर रहा हूँ। आप सब उसका श्रवण करें। काशी के माहात्म्य के प्रति किसी प्रकार का विस्मय नहीं करना चाहिए।

क्षेत्रपापकृतः शास्ति दर्शयंस्तीव्रयातनाम्।
अन्यत्र विहितं पापं नश्येत्काशीनिरीक्षणात्।
काश्यां कृतानां पापानां दारुणेयं तु यातना[3] ॥

काशी-क्षेत्र में पाप करने वालों को कालभैरव तीव्र यातना से शासित करते हैं। दूसरी जगह का किया हुआ पाप तो काशी को देखते ही विनष्ट हो जाता है; परन्तु काशी में किये हुए पापों के लिए यह घोर भैरवी-यातना भोगनी ही पड़ती है।

श्रेयसां भाजनं चैतन्नृजन्म न मुधा नयेत्।
देवानामपि दुष्प्राप्यं काशीसन्दर्शनादृते ॥
कः कलिः कोऽथवा कालः किं वा कर्माण्यनेकधा।
परानन्दप्रदं क्षेत्रमविमुक्तं यदीक्षितम्[4] ॥

समग्र कल्याणों का आधार और देवताओं के भी दुष्प्राप्य इस मनुष्य जन्म को विना काशी के दर्शन किये वृथा नहीं करना चाहिए। (क्योंकि) जिस किसी ने परम आनन्ददायिनी, अविमुक्त-क्षेत्ररूपा इस काशीपुरी का दर्शन प्राप्त कर लिया, फिर तो क्या काल, किं वा कलि अथवा अनेक प्रकार के कर्म (फल) उस जीव का क्या कर सकते हैं?

१. काशी-पञ्चक; २. का० रह० ९।१०७, १०९; ३. का० ख० ३३।११४-११५।
४. वही—५०।१३३-१३४।

ते गर्भवासे तिष्ठन्ति पुनस्ते गर्भवासिनः ।
ये न गर्भवनच्छेत्रीं सेवन्ते वरणामसिम्[1] ॥

वे ही लोग गर्भ में वास करते हैं और उन्हीं लोगों को बारम्बार गर्भवास का दुःख भोगना पड़ता है, जो लोग गर्भरूप वन को काटने वाली वरणा और असि (वाराणसी) का सेवन नहीं करते।

कृतानि साधनान्यत्र स्वरूपान्यपि महामते ।
भवन्ति काशीमाहात्म्यात्सिद्धान्येव न संशयः ॥
अत्र साधनवैकल्ये काशी पूर्णं प्रकल्पयेत् ॥

हे महामते ! काशी के बाहर किये गये स्वल्प भी सत्कर्म काशी के माहात्म्य के द्वारा पूर्ण फल देते हैं, इसमें संशय नहीं है। जो कुछ साधन की दुर्बलता होती है, वह काशी के सम्बन्ध से पूर्ण हो जाती है।

अन्यच्च ते प्रवक्ष्यामि उपायज्ञानसाधनम् ।
यानि तीर्थानि चोक्तानि व्योमतन्त्रे पुरा मया ॥
तेषामप्यधिकं तीर्थमविमुक्तं महामुने ।
सर्वतीर्थानि च मया तस्मिन् स्थाने प्रतिष्ठिताः[2] ॥

स्कन्द जी कहते हैं कि हे महामुनि ! तुम्हें अन्य ज्ञान-साधन का उपाय बताऊँगा। मैंने व्योमतन्त्र में जो अनेक तीर्थों का वर्णन किया है, उन सभी से अधिक श्रेष्ठ तीर्थ अविमुक्त (वाराणसी) है; क्योंकि सभी तीर्थों को मैंने उसी स्थान पर प्रतिष्ठित कर दिया है।

अन्यत्र ब्राह्मणानां तु कोटिं सम्भोज्य यत्फलम् ।
वाराणस्यां मुदैकेन भोजितेन तदाप्यते[3] ॥

अन्यत्र एक कोटि ब्राह्मणों को भोजन कराने से जो फल प्राप्त होता है, वह फल वाराणसी में केवल एक ब्राह्मण को हर्षपूर्वक भोजन कराने से प्राप्त होता है !

अनाराध्य महादेवमेषु लिङ्गेषु कुम्भज ।
कः काश्यां मोक्षमाप्नोति सत्यं सत्यं पुनः पुनः ॥
तस्मात्सर्वप्रयत्नेन काशीफलमभीप्सुभिः ।
पूज्यान्येतानि लिङ्गानि भक्त्या परमया मुने[4] ॥

देवाधिदेव ने कुम्भज से कहा कि इन सब (काशी में स्थित) लिङ्गों में

१. का० ख० ५०।१३५; २. लिङ्गपुराण; ३. का० रह० २।६६।
४. का० ख० ७३।४०-४१।

महादेव की आराधना किये विना काशी में मोक्ष किसे मिल सकता है! यह बात बारम्बार सत्य ही सत्य है। अतएव हे मुने! काशी के फल (मोक्ष) को चाहने वालों को सब प्रयत्न उठाकर बड़ी भक्ति के साथ इन शिवलिङ्गों का पूजन अवश्य करना चाहिए।

सेव्योत्तरवहा नित्यं लिङ्गमर्च्यं प्रयत्नतः।
दमो दानं दया नित्यं कर्तव्यं मुक्तिकाङ्क्षिभिः॥
इदमेव रहस्यं च कथितं क्षेत्रवासिनाम्।
मतिः परहिता कार्या वाच्यं नोद्वेगकृद्वचः[1]॥

विश्वनाथ जी जैगीषव्य ऋषि से कहते हैं कि मुक्ति चाहने वालों को नित्य ही उत्तरवाहिनी गंगा की सेवा, प्रयत्नपूर्वक शिवलिङ्ग का पूजन, इन्द्रियों का दमन, यथाशक्ति दान तथा समस्त जीवों पर दया सदैव करनी चाहिए। क्षेत्रवासी लोगों के लिए यही परम रहस्य कहा गया है कि अपनी बुद्धि को तो दूसरे की हिताभिलाषिणी बनावें एवं घबड़ाहट करने वाली बात न बोलें।

तारकं ज्ञानमाप्येत तल्लिङ्गस्य समर्चनात्।
ज्ञानवाप्यां नरः स्नात्वा तारकेशं विलोक्य च॥
कृतसन्ध्यादिनियमः परितर्प्य पितामहान्।
धृतमौनव्रतो धीमान् यावल्लिङ्गविलोकनम्॥
मुच्यते सर्वपापेभ्यः पुण्यं प्राप्नोति शाश्वतम्।
प्रान्ते च तारकं ज्ञानं यस्माज्ज्ञानाद्विमुच्यते[2]॥

उस लिङ्ग (तारकेश्वर) के समर्चन से तारक ज्ञान की प्राप्ति होती है। बुद्धिमान् मनुष्य ज्ञानवापी में स्नान कर सन्ध्या-वन्दन आदि नित्य-नियम और पितरों का तर्पण कर मौनव्रती होकर तारकेश्वर लिङ्ग का दर्शन करे, तो सभी पापों से छूटकर अनन्त पुण्य को प्राप्त करता है। वह स्वयं अन्त समय में तारक-ज्ञान (तारक-मन्त्रोपदेश) को प्राप्त करता है। उसे प्राप्त कर वह विमुक्त हो जाता है, अर्थात् उसे मोक्ष की प्राप्ति होती है।

शृणु देवि प्रवक्ष्यामि काश्यां धर्मरहस्यकम्।
स्वल्पं कृतं महामेरुतुल्यं नास्त्यत्र संशयः[3]॥

हे देवि! मैं काशी का धर्म-रहस्य कहता हूँ सुनो, काशी में किया गया थोड़ा भी धर्म महासुमेरु पर्वत के समान हो जाता है, इसमें कोई संशय नहीं है।

---

१. का० ख० ६४।६५-६६; का० ख० ६९।१५४-१५६; ३. काशीमूलरहस्य—१९।७८।

काशीयं सर्वजन्तूनां मुक्तिदात्री तनुत्यजाम् ।
अमोघभोगदा चात्र स्वल्पधर्मकृतामपि[1] ॥

यह काशी मरने वाले जन्तुवों को मोक्ष देने वाली है। यहाँ काशी में थोड़ा सा भी धर्म करने वाले को यह काशी की भूमि अमोघ भोग फल रूप में प्रदान करती है।

सर्वस्तस्य शुभः कालो ह्यविमुक्ते म्रियेत यः ।
न तत्र कालो मीमांस्यः शुभो वा यदि वाऽशुभः[2] ॥

अविमुक्त (काशी) क्षेत्र में जो मृत्यु को प्राप्त करता है, उसके सभी काल शुभ हैं। काशी में मरने वालों के काल के विषय में शुभ एवं अशुभ का विचार ही नहीं करना चाहिए।

हर शम्भो महादेव सर्वज्ञ सुखदायक !
प्रायश्चित्तं सुनिर्वृत्तं पापानां त्वत्प्रसादतः ।
पुनः पापमतिर्माऽस्तु धर्मबुद्धिः सदाऽस्तु मे ॥

हे हर ! हे शम्भो ! हे महादेव ! हे सर्वज्ञ ! हे सुखदायक ! आपकी कृपा से हमारे समग्र पापों का प्रायश्चित्त पूर्ण हुआ। अब पुनः हमारी पाप में वुद्धि न होकर धर्म में ही बुद्धि हो।

जीवन्मृतोऽथ विज्ञेयः पुरुषः सोदरम्भरिः ।
अदत्तदाना जायन्ते परभाग्योपजीविनः ॥

जो पुरुष केवल उदर भरने के लिए जीवन धारण करता है, वह जीवन जीते हुए भी मृतक के समान है। जिन्होंने कभी सत्पात्र को कुछ दान नहीं दिया है, वे ही दरिद्र एवं दूसरों के भाग्य पर जीवन व्यतीत करते हैं।

धर्मस्तु सम्पत्तिभरैः किलोह्यतेऽत्यर्थो हि कामैर्बहुदानभोगकैः ।
अन्यत्र सर्वं स च मोक्ष एकः काश्यां न चान्यत्र तथा यथाऽत्र[3] ॥

किसी स्थान में प्रचुर धन व्यय करके धर्मलाभ होता है और कहीं पर बहुत-से दान-भोगों के द्वारा अर्थ और काम की प्राप्ति भी हो सकती है। चाहे किसी स्थान में ये सब पाये जायँ; परन्तु यह एक मोक्ष, जैसा काशी में है, वैसा अन्यत्र कहीं भी नहीं प्राप्त होता (यहाँ सायुज्य मोक्ष प्राप्त होता है)।

---

१. का० मू० रहस्य–१९।१५१ ; २. म० पु० १८४।६१ ; ३. का० ख० ५।२३ ।

काशीवीथिषु सञ्चारे मुद्रा भवति खेचरी ।
खेचरी जायते नूनं खेचर्या मुद्रयानया ॥

काशी की गलियों में चलने वाले की खेचरी मुद्रा बनती है और इस खेचरी मुद्रा से निश्चय ही व्यक्ति खेचर हो जाता है, अर्थात् मुक्त हो जाता है ।

आदौ काश्यां धर्ममार्गेण वासः पापत्यागः काशिमाहात्म्यदृष्टिः ।
देहं गेहं पुत्रमित्रादि यस्य सर्वं तुच्छं सोऽधिकारी महात्मा ॥

जो व्यक्ति प्रारम्भ में काशी में धर्ममार्ग से निवास करता है, पाप का त्याग कर काशी-माहात्म्य को दृष्टि में रखते हुए शरीर, गृह, पुत्र एवं मित्र आदि सभी को तुच्छ समझता है, वही व्यक्ति काशीवास का अधिकारी है ।

कृतो धर्मः स्वल्पमपि ज्ञात्वाऽज्ञात्वाऽप्यमोघकृत् ।
चुलुकोदं बिल्वमेकं स्वल्पाश्च तिलतण्डुलाः[1] ॥

जो व्यक्ति जाने या विना जाने काशी में थोड़ा भी धर्म करता है, वह धर्म अमोघ फल प्रदान करता है । जो व्यक्ति एक चुल्लू जल, एक बिल्वपत्र तथा स्वल्प मात्रा में भी तिल, चावल, चढ़ाता है, वह भी मुक्त हो जाता है ।

सर्वेभ्यः काशिसंस्थेभ्यो मोक्षभिक्षां प्रयच्छति ।
त्रिपुरारिः पुरद्वारि कदा स्यां मोक्षभिक्षुकः[2] ॥

काशी में निवास करने वालों को मोक्षरूपी भिक्षा देने के लिए भगवान् शङ्कर सदा प्रतीक्षा करते रहते हैं कि हमारे द्वार पर यह मोक्ष-भिक्षुक कब आयेगा ?

तुष्टे महेश्वरे तुष्टं जगदेतच्चराचरम् ।
नान्यत्र पापं ते गन्तु विना वाराणसीं पुरीम् ॥
ब्रह्महत्यादिपापानां प्रायश्चित्तं मनीषिभिः ।
प्रोक्तं न हरनिन्दायास्तत्र काश्येव केवलम्[3] ॥

भगवान् शिव के प्रसन्न होने से चराचर जगत् प्रसन्न होता है । विद्वानों ने ब्रह्महत्यादि पापों और शिव-निन्दा जैसे पाप का प्रायश्चित्त केवल काशी को ही बताया है, अर्थात् काशी के प्राप्त होते ही समग्र पापों का प्रायश्चित्त हो जाता है ।

---

१. का० मू० रह० १९।८० ; २. लिङ्गपुराण । ३. का० ख० ८९।११८–११९ ।

अत्र योगस्तथा ज्ञानं मुक्तिरेकेन जन्मना ।
अतोऽविमुक्तमासाद्य नान्यद्गच्छेत्तपोवनम् ॥
मोक्षं सुदुर्लभं ज्ञात्वा संसारं चातिभीषणम् ।
अश्मना चरणौ हत्वा कालमत्र प्रतीक्षयेत्[1] ॥

यहाँ पर (काशी में) एक ही जन्म में योगसिद्धि, ज्ञानप्राप्ति और मुक्तिलाभ हो जाता है, अतएव इस अविमुक्त-क्षेत्र का त्याग कर तपस्या करने के लिए कहीं दूसरे तपोवन में नहीं जाना चाहिए। मोक्ष को अत्यन्त दुर्लभ तथा संसार को बड़ा भयंकर समझकर पत्थर से अपना पैर तोड़कर यहाँ पर काल की बाट जोहनी चाहिए।

अविमुक्तं परित्यज्य यदा यास्यन्ति दुर्धियः ।
हसिष्यन्ति तदा भूतान्यन्योन्यकरताडनैः ॥
प्राप्य वाराणसीं पुण्यां सिद्धिक्षेत्रमनुत्तमम् ।
परिनिष्क्रान्तुमन्यत्र कस्य जन्तोर्मतिर्भवेत्[2] ॥

जब दुर्बुद्धि लोग काशी को छोड़कर कहीं अन्यत्र चले जाते हैं, तब मेरे (शिव के) भूतगण परस्पर करताली बजाकर हँसने लगते हैं। परमोत्तम सिद्धिक्षेत्र पवित्र काशीपुरी में रहकर फिर वहाँ से निकल जाने की इच्छा किस प्राणी को होती है।

सर्वकामाश्च ये यज्ञाः पुनरावृत्तिकाः स्मृताः ।
अविमुक्ते मृता ये च सर्वे ते ह्यनिवर्तकाः[4] ॥

सभी कामनाओं को पूर्ण करने वाले जो यज्ञ हैं, वे समग्र पुनर्जन्म प्रदान करने वाले हैं; किन्तु जो मनुष्य अविमुक्त (काशी) क्षेत्र में शरीर का त्याग करते हैं, उनका संसार में पुनः आगमन नहीं होता, अर्थात् वे मोक्ष प्राप्त कर लेते हैं।

ग्रहनक्षत्रताराणां कालेन पतनाद्भयम् ।
अविमुक्ते मृतानां तु पतनं नैव विद्यते[3] ॥

ग्रह, नक्षत्र तथा तारागणों को समयानुसार पतन का भय बना ही रहता है; किन्तु अविमुक्त (काशी) क्षेत्र में मरने वालों का पतन कभी भी नहीं होता।

कल्पकोटिसहस्रैस्तु कल्पकोटिशतैरपि ।
न तेषां पुनरावृत्तिर्मृता ये क्षेत्र उत्तमे[5] ॥

जो प्राणी इस उत्तम क्षेत्र (काशी) में शरीर का त्याग करते हैं; उनका सैकड़ों करोड़ कल्पों में क्या, हजारों करोड़ कल्पों में भी पुनरागमन नहीं होता, अर्थात् उन्हें मोक्ष की प्राप्ति हो जाती है।

१. का० ख० ६४।१०६–१०७; २. वही—६४।१०८-१०९; ३. म० पु० १८५।६०।
४. वही—१८५।६१; ५. वही—१८५।६२।

विषयासक्तचित्तोऽपि त्यक्तधर्मरुचिर्नरः ।
इह क्षेत्रे मृतो यो वै संसारं न पुनर्वसेत्[1] ॥

विषयों में आसक्त चित्त वाले पुरुष हों या अपने धर्म-कर्म का त्याग करने वाले, इस काशी-क्षेत्र में मरने पर उन सभी का पुनर्जन्म नहीं होगा।

अनाहिताग्निर्नो भ्रष्टा नोऽशुचिस्तस्करोऽपि वा ।
अविमुक्ते वसेद्यस्तु स वसेदीश्वरालये[2] ॥

काशी में निवास करने वाला व्यक्ति यदि अनाहिताग्नि भी हो, तो भी वह भ्रष्ट नहीं कहलाता। यदि कोई तस्कर (चोर) भी हो, तो उसे अपवित्र नहीं माना जाता; क्योंकि काशी में निवास-बुद्धि से श्रद्धा के साथ निवास करने वाले की दुष्ट-बुद्धि नष्ट हो जाती है। इस अविमुक्त वाराणसी-क्षेत्र में निवास करना तो भगवान् विश्वनाथ के घर में निवास करने के समान है।

समुद्राणां च सर्वेषां नाविमुक्तस्थ शक्यते ।
अन्तकाले मनुष्याणां छिद्यमानेषु मर्मसु ॥
वायुप्रेर्यमाणानां स्मृतिर्नैवोपजायते ।
अविमुक्ते ह्यन्तकाले भक्तानामीश्वरः स्वयम्[3] ॥

अन्तकाल के समय सर्वसाधारण मनुष्यों के मर्मस्थल अवश्य फटने लगते हैं; किन्तु अविमुक्त (वाराणसी) क्षेत्र में निवास करने वाले मुद्राधारी अथवा कोई भी अन्य हों, किसी के मर्मस्थल का छेदन नहीं होता है।

अन्त समय में वायु के प्रबल होने पर प्राणिमात्र की स्मरणशक्ति नष्ट हो जाती है; किन्तु अविमुक्त (वाराणसी) क्षेत्र में रहने वालों को भगवान् विश्वनाथ जी स्वयं उपस्थित होकर स्मरणशक्ति प्रदान करते हैं।

यत्र योगस्तथा ज्ञानं मुक्तिरेकेन जन्मना ।
अविमुक्तं तदासाद्य नान्यदिच्छेत्तपोवनम्[4] ॥

जहाँ पर योग, ज्ञान तथा मुक्ति एक ही जन्म में प्राप्त होती है, उस अविमुक्त (वाराणसी) क्षेत्र को छोड़कर किसी भी अन्य तपोवन में नहीं जाना चाहिए।

अपुनर्मरणानां हि सा गतिर्मोक्षकाङ्क्षिणाम् ।
यां प्राप्य कृतकृत्यः स्यादिति मन्येत पण्डितः[5] ॥

मोक्ष की कामना करने वाले पुनर्जन्म से रहित व्यक्तियों को जो गति प्राप्त होती है, उसी गति को प्राप्त कर विद्वान् पुरुष अपने को कृतकृत्य मानता है।

१. शिवपुराण; २. म० पु० १८४।८; ३. वही—१८२।२२-२३।
४. पद्मपु० ३३।४३; ५. म० पु० १८४।६५।

अविमुक्तं समासाद्य तीर्थसेवी कुरूद्वह।
दर्शनाद्देवदेवस्य मुच्यते ब्रह्महत्यया[1]॥

हे कौरवश्रेष्ठ! जो तीर्थसेवी मनुष्य अविमुक्त-क्षेत्र (काशी) में जाकर देवाधिदेव विश्वनाथ जी का दर्शन करते हैं, वे ब्रह्महत्या से भी मुक्त हो जाते हैं।

देवीदं सर्वगुह्यानां स्थानं प्रियतरं मम।
मद्भक्तास्तत्र गच्छन्ति मामेव प्रविशन्ति च[2]॥

हे देवि! मेरे समस्त गुप्त स्थानों में यह स्थान (काशी) मुझे प्रियतर है। मेरे भक्त वहाँ निवास करके मुझे प्राप्त करते है।

अविमुक्ते परा सिद्धिरविमुक्ते परं पदम्।
अविमुक्तं निषेवेत देवर्षिगणसेवितम्[3]॥

इस अविमुक्त (काशी) क्षेत्र में परा-सिद्धि और परम-पदवी की प्राप्ति होती है। अतः देव तथा महर्षियों से सेवित इस काशी का सेवन अवश्य ही करना चाहिए।

प्राप्य विश्वेश्वरं देवं न स भूयोऽभिजायते।
अनन्यमानसो भूत्वा योऽविमुक्तं न मुञ्चति[4]॥

भगवान् विश्वनाथ एवं काशी को प्राप्त करके जो व्यक्ति पुनः इस अविमुक्त क्षेत्र का परित्याग नहीं करता, उसे पुनर्जन्म की यातना नहीं भुगतनी पड़ती। वह व्यक्ति भगवान् विश्वनाथ के प्रति अनन्यचित्त होकर मुक्ति का अधिकारी हो जाता है।

तस्मात्सर्वप्रयत्नेन वाराणस्यां वसेन्नरः।
योगी वाऽप्यथवाऽयोगी पापी वा पुण्यकृत्तमः[5]॥

इसलिए प्रयत्नपूर्वक वाराणसी में निवास करना चाहिए। चाहे योगी हो या भोगी, चाहे पापी हो या पुण्यात्मा, सबके लिए वाराणसी मुक्ति देने वाली है।

आपद्यपि हि घोरायां काशी त्याज्या न कुत्रचित्।
यतः सर्वापदां हर्ता त्राता विश्वपतिः प्रभुः॥
अवन्ध्यं दिवसं कुर्यात्स्नानदानजपादिभिः।
यतः काश्यां कृतं कर्म महत्त्वाय प्रकल्पते[6]॥

घोर आपत्ति आने पर भी काशी का त्याग नहीं करना चाहिए; क्योंकि

---

१. म० भा० वनपर्व, ८४।१८; २. पद्मपु० स्व० ख० ३३।१५; ३. म० पु० १८२।२०।
४. वही—१८२।१७। ५. पद्मपु० ३३।६४; ६. का० ख० ९६।४७-४८।

समस्त आपत्तियों के विनाशक भगवान् विश्वनाथ जी यहाँ पर सदैव निवास करते हैं। यहाँ निवास करते हुए स्नान, दान, जपादि से दिनों को सफल बनाना चाहिए; क्योंकि काशी में किये गये समग्र पुण्य-कर्म अतीव महत्त्वपूर्ण होते हैं।

मृत्युं विज्ञाय नियतं गतिं कर्मानुसारिणीम्।
अवश्यं काशिका सेव्या सर्वकर्मनिवारिणी॥
मानुष्यं प्राप्य ये मूढा निमेषमितजीवितम्।
न सेवन्ते पुरीं काशीं ते मुष्टा मन्दबुद्धयः[1]॥

कार्त्तिकेय जी अगस्त्य मुनि से कहते हैं कि कर्मानुसारिणी गति एवं मृत्यु की निश्चितता को ध्यान में रखते हुए समग्र कर्मों का निवारण करने वाली काशी की सेवा अवश्य करनी चाहिए। क्षणमात्र जीवन वाले मनुष्य जन्म को प्राप्त कर जो व्यक्ति काशीवास नहीं करता, वह मन्दबुद्धि प्रायः जीवन से ही हाथ धो लिया होता है।

दुर्लभं जन्म मानुष्यं दुर्लभा काशिका पुरी।
उभयोः सङ्गमासाद्य मुक्ता एव न संशयः[2]॥

कार्त्तिकेय जी कहते हैं कि मनुष्य जन्म दुर्लभ है तथा काशी-पुरी की प्राप्ति भी अतीव दुर्लभ है। यदि इन दोनों का सङ्गम हो जाय, तो मनुष्यों को निःसन्देह मुक्ति प्राप्त होती है।

काश्यां धर्मस्तच्चतुष्पादरूपः काश्यामर्थः सोऽप्यनेकप्रकारः।
काश्यां कामः सर्वसौख्यैकभूमिः काश्यां श्रेयस्तत्तु किं नात्र यच्च॥
विश्वेश्वरो यत्र न तत्र चित्रं धर्मार्थकामामृतरूपरूपः।
स्वरूपरूपः स हि विश्वरूपस्तस्मान्न काशीसदृशी त्रिलोकी[3]॥

काशी में धर्म अपने चारों पैरों से स्थित है, अर्थ भी काशी में अनेक प्रकार से वर्तमान है, फिर काशी में काम तो समस्त सौख्यों का एकमात्र आश्रय ही रहा है। वस्तुतः ऐसी कौन-सी श्रेयस्कर (कल्याणकारी) वस्तु है, जो काशी में नहीं है?

भला जहाँ पर धर्म, अर्थ, काम एवं मोक्ष को देने के लिए ही मूर्त्तिमान् होकर भगवान् विश्वेश्वर स्वयं विद्यमान हैं, वहाँ पर आश्चर्य की क्या बात है? क्योंकि विश्वनाथ जी अखण्ड सच्चिदानन्द साक्षात् विश्वरूप हैं। इसी कारण से त्रैलोक्य भर काशी के समान नहीं है।

---

१. का० ख० ९४।४८–४९; २. वही—९४।५०; ३. वही—४।९७–९८।

नाविमुक्ते मृतः कश्चिन्नरकं याति किल्बिषी ।
ईश्वरानुगृहीता हि सर्वे यान्ति परां गतिम्[१] ।।

अविमुक्त (काशी) क्षेत्र में मृत्यु को प्राप्त होने वाला कोई पापी भी नरक में नहीं जाता । ईश्वर के अनुग्रह से समस्त प्राणी यहाँ परमगति (मोक्ष) को प्राप्त करते हैं ।

वाराणसीह करुणामयदिव्यमूर्त्ति-
रुत्सृज्य यत्र तु तनुं तनुभृत्सुखेन ।
विश्वेशदृङ्महसि यत्सहसा प्रविश्य
रूपेण तां वितनुतां पदवीं दधाति[२] ।।

इस संसार में वाराणसी (काशी) साक्षात् करुणामयी अलौकिक मूर्त्ति है; क्योंकि वहाँ पर प्राणिमात्र सुखपूर्वक देहत्याग कर उसी समय विश्वेश्वर की ज्ञानरूप ज्योति में प्रवेश करके तद्रूप कैवल्य (मोक्ष) पद को प्राप्त कर लेता है ।

जातो मृतो बहुषु तीर्थवरेषु रे त्वं
जन्तो न जातु तव शान्तिरभून्निमज्ज्य ।
वाराणसी निगदतीह मृतोऽमृतत्वं
प्राप्याऽधुना मम बलात्स्मरशासनः स्याः[३] ।।

वाराणसी यह कहा करती है कि—"रे प्राणियों ! तुम संसार में अनेक बार उत्पन्न हुए और बहुत से तीर्थों में नहाकर मृत्यु के वशंगत हुए; परन्तु कभी भी तुमको शान्ति-सुख नहीं मिला, अस्तु, यदि अब तुम मेरे बल से मृत्यु को प्राप्त कर सको तो अमृतत्व लाभ करके महादेव हो जाओ" ।

अन्यत्र तीर्थसलिले पतितो द्विजन्मा
देवादिभावमयते न तथा तु काश्याम् ।
चित्रं यदत्र पतितः पुनरुत्थितिं न
प्राप्नोति पुल्कसजनोऽपि किमग्रजन्मा[४] ।।

अन्यत्र तीर्थ-जल में देहत्याग करने से केवल द्विज ही देवादि पदत्व को प्राप्त कर सकते हैं; परन्तु काशी में वैसा नहीं है, यहाँ तो यह बड़ी विचित्रता है कि ब्राह्मण क्या यदि चाण्डाल मनुष्य भी मृत्यु को प्राप्त होता है, तो जन्म की पुनरावृत्ति से रहित मुक्त ही हो जाता है ।

१. पद्मपु० स्व० ख० ३३।२१ ; २. का० ख० ।३०७१ ।
३. का० ख० ३०।७२ ; ४. वही—३०।७३ ।

यो याति परमं स्थानं यत्र गत्वा न शोचति ।
जन्ममृत्युजरामुक्तं परं यान्ति शिवालयम्[1] ॥

जो लोग उस परम स्थान को प्राप्त करते हैं, जहाँ शोक का अवसर हो नहीं है, वे सभी जन्म, मृत्यु, जरा से छुटकारा प्राप्त कर शिव में विलीन हो जाते हैं ।

भेषजं परमं तेषामविमुक्तं विदुर्बुधाः ।
अविमुक्तं परं ज्ञानमविमुक्तं परं पदम्[2] ॥

ऐसे लोगों के लिए अविमुक्त (काशी) क्षेत्र ही परम औषध है, अविमुक्त ही परम ज्ञान है और वही परमपद (मोक्ष) को प्रदान करने वाला भी है ।

अस्मिन् वैश्वेश्वरे क्षेत्रे सम्भोज्याः शिवयोगिनः ।
कोटिभोज्यफलं सम्यगेकैकपरिसङ्ख्यया[3] ॥

शिवयोगियों को इस काशी-क्षेत्र में अवश्य भोजन कराना चाहिए; क्योंकि एक-एक शिवयोगी की संख्या में करोड़ों को भोजन कराने का फल प्राप्त होता है ।

शिवरूपा महादेव तत्पापं शान्तिमिच्छतु ।
काश्यां स्थलचराः कीटाः पादाघातेन संहताः ॥

काशी-क्षेत्र में पैदल चलने से जो कीट आदि पैर के नीचे दबकर मर गये हैं और उनके मरने से हमें जो पाप लगा है, मैं प्रार्थना करता हूँ कि वे हमारे अपराध को क्षमा करते हुए हमें शान्ति प्रदान करें, यतः वे सभी शिवरूप ही हैं ।

आगच्छेत्तदिदं स्थानं सेवितं मोक्षकाङ्क्षिभिः ।
मृतानां च पुनर्जन्म न भूयो भवसागरे[4] ॥

मोक्ष चाहने वालों से सेवित इस काशी-क्षेत्र में अवश्य आना चाहिए, जहाँ मृत्यु को प्राप्त करने वाले के लिए पुनः भवसागर में भटकने हेतु जन्म नहीं प्राप्त होता, अर्थात् वह मुक्त हो जाता है ।

एक एव हि विश्वेशो मुक्तिदो नान्य एव हि ।
स एव काशीं प्रापयन्मुक्तिं यच्छति नान्यतः[5] ॥

कार्तिकेय जी कहते हैं कि इस काशी में एकमात्र मुक्ति देने वाले भगवान् विश्वनाथ जी के अतिरिक्त अन्य कोई नहीं है । वे ही काशी को प्राप्त कराते हैं तथा काशी में मुक्ति भी देते हैं ।

---

१. पद्मपु० ३३।२६ ; २. पद्मपु० ३३।३० ; ३. का० ख० ९९।१५ ।
४. पद्मपु० ३३।६३ ; ५. का० ख० ९४।५४ ।

काश्यां मृतस्तु सालोक्यं साक्षात्प्राप्नोति मानवः ।
ततः सरूपतां याति न परावर्तते पुनः[1] ॥

काशी में मरने वाला सालोक्य मुक्ति प्राप्त करता है, उसके बाद सरूपता प्राप्त करता है, जिससे उसका पुनः जन्म नहीं होता है ।

यथा स्थानविशेषेषु त्रिविधा मुक्तिरीरिता ।
न तादृशो मुक्तिरत्र काश्यां मुक्तिर्विलक्षणा ॥
तदात्मिका मुक्तिरत्रेति वेदानुशासनम् ॥

जैसे स्थान विशेष में अनेक प्रकार की मुक्तियाँ कही गयी हैं, वैसी मुक्ति अन्यत्र कहीं नहीं मिलती, वह काशी में तत्क्षण प्राप्त होती है । काशी में तादात्म्य मुक्ति प्राप्त होती है, ऐसा वेद का मत है ।

भवस्य प्रीतिरतुला ह्यविमुक्ते ह्यनुत्तमा ।
असंख्येयं फलं तत्र ह्यक्षया च गतिर्भवेत्[2] ॥

काशी (अविमुक्त) क्षेत्र में भगवान् शिव की अत्यन्त प्रीति यदि किसी को प्राप्त है, तो काशी में उसे अगणित फल तथा अक्षय गति मिलती है ।

विघ्नैश्चालोडयमानोऽपि योऽविमुक्तं न मुञ्चति ।
स मुञ्चति जरामृत्युं जन्म चैतदशाश्वतम् ।
अविमुक्तप्रसादात्तु शिवसायुज्यमाप्नुयात्[3] ॥

विघ्नों के द्वारा पीड़ित होने पर भी जो इस अविमुक्त क्षेत्र को नहीं छोड़ते हैं, वे अशाश्वत जरा, मृत्यु और जन्म को त्याग देते हैं तथा इस अविमुक्त क्षेत्र की अनुकम्पा से शिव-सायुज्य मुक्ति को प्राप्त कर लेते हैं ।

सर्वपापविनिर्मुक्तो गच्छेच्च परमां गतिम् ।
न तस्य पुनरावृत्तिः कल्पकोटिशतैरपि[4] ॥

काशी सभी प्राणियों को सभी पापों से मुक्त करके परमगति (मोक्ष) प्रदान करती है । करोड़ों जन्मों में भी पुनः संसार में नहीं आना पड़ता ।

काश्यां तु कामपुण्या वै मल्लोकं विशते हरेः ।
काश्यां विशिष्टदेहा ये संयुज्यन्ते शिवेन ते ॥

---

१. पद्मपुराण ; २. म० पु० १८४।४ ।
३. म० पु० १८२।२७; ४. लिङ्गपुराण ।

स्वयमात्मानुसन्धानात् सायुज्यां मुक्तिमाप्नुयुः ।
तादृशो मुक्तिरत्रैव काश्यां सद्यो न संशयः ।।

काशी के काम्य पुण्यों से मनुष्य मेरे लोक में निवास करते हैं। काशी में देह छोड़ने वाले शिव से संयुक्त हो जाते हैं। वे स्वयमात्मानुसन्धान से सायुज्य मुक्ति को प्राप्त करते हैं। ऐसी मुक्ति काशी में ही होती है, इसमें कोई संशय नहीं है।

जन्मान्तरसहस्रेषु मोक्षं लभ्येत मानवाः ।
इहैव लभ्यते जन्तोर्मुक्तिरेकेन जन्मना[१] ।।

हजारों जन्मों में मनुष्य मुक्ति प्राप्त करते हैं; किन्तु यहाँ (काशी में) एक ही जन्म में मुक्ति मिल जाती है।

ज्ञाने विहितनिष्ठानां परमानन्दमिच्छताम् ।
या गतिर्विहिता सद्भिः साऽविमुक्ते मृतस्य तु[२] ।।

ज्ञान में निष्ठा रखने वाले तथा परमानन्द को इच्छा करने वाले को सज्जनों ने जो गति बताई है, वही गति अविमुक्त में मरने वालों की होतो है।

अविमुक्तस्थितैः पुण्यैः पांशुभिर्वायुनेरितैः ।
अपि दुष्कृतकर्माणो यास्यन्ति परमां गतिम् ।।

काशी (अविमुक्त) क्षेत्र में स्थित परम पवित्र वायु के द्वारा उड़ायी गयी धूलि से सम्पृक्त हो जाने पर पापी भी परम गति को प्राप्त करते हैं।

कृत्वा पापसहस्राणि पश्चात् संतापमेत्य वै ।
योऽविमुक्ते वियुज्येत स याति परमां गतिम्[३] ।।

जो हजारों पापों का सम्पादन कर बाद में पश्चात्ताप का अनुभव करता है, वह व्यक्ति काशी के अविमुक्त-क्षेत्र में प्राणों का त्याग करके परमगति को प्राप्त होता है।

अत्र हि जन्तोः प्राणेषूत्क्रममाणेषु रुद्रस्तारकं ब्रह्म व्याचष्टे येनासावमृतो भूत्वा मोक्षीभवति। तस्मादविमुक्तमेव निषेवेत। अविमुक्तं न विमुञ्चेत[४] ।।

काशी में प्राणी का प्राण जाने के समय दुःख को नाश करने वाले रुद्र तारक मन्त्र का उपदेश देते हैं। उस उपदेश से वह मरणरहित मुक्त हो जाता है। उस हेतु से अविमुक्त (काशी) क्षेत्र का सेवन अवश्य करें। काशी जी का त्याग न करें।

---

१. काशीमोक्षनिर्णय; २. म० पु० १८४।३।
३. म० पु० ८४-७१; ४. जाबालोपनिषद्—७।

अपि पातकिनो ये च कालेन निधनं गताः ।
तेऽपि स्वर्गादिहागत्य काश्यां मोक्षमवाप्नुयुः ॥

यदि महापापी भी कालवशात् काशी में प्राण-त्याग करता है, तो वह निश्चित हो मुक्त हो जाता है। इसीलिए यहाँ देवता भो स्वर्ग से आकर मोक्ष को प्राप्त करते हैं।

शशकैर्मशकैः काश्यां यत्पदं हेलयाऽऽप्यते ।
तत्पदं नाप्यतेऽन्यत्र योगमुक्त्याऽपि योगिभिः ॥

इस काशीपुरी में खरगोश और मच्छर भी अनायास जिस पद को प्राप्त करते हैं, उस पद को योगी-जन अन्यत्र योग-मुक्ति से भी नहीं प्राप्त कर सकते।

जले स्थलेऽन्तरिक्षे वा यत्र कुत्रापि वा मृताः ।
तारकं ज्ञानमासाद्य कैवल्यपदभागिनः[1] ॥

काशी में पृथ्वी, जल, आकाश आदि किसी जगह भी यदि मृत्यु हो, तो वह प्राणी भगवान् शिव जी के तारक मन्त्रोपदेश द्वारा मोक्ष-पद का भागी होता है।

कीटाः पतङ्गा मशकाश्च वृक्षाः जले स्थले ये विचरन्ति जीवाः ।
मण्डूकमत्स्याः कृमयोऽपि काश्यां त्यक्त्वा शरीरं शिवमाप्नुवन्ति[2] ॥

पृथ्वी के सभी तीर्थ केवल मुक्ति-क्षेत्र काशी को प्राप्त कराते हैं; परन्तु काशी को पाकर प्राणी मुक्त ही हो जाते हैं। अर्थात् अन्य करोड़ों तीर्थों से बड़ी यह काशीपुरी है। कीट, पतंग, मच्छर, वृक्ष, जलचर, थलचर आदि सभी प्राणी यहाँ अपना शरीर छोड़कर कल्याणपद को प्राप्त होते हैं।

येनैकजन्मना मुक्तिर्यस्मात् करतले स्थिता ।
अनेकजन्मसंसारबन्धनिर्मोक्षकारिणी[3] ॥

श्रीकाशी जी में एक ही जन्म में मुक्ति मुट्ठी में आ जाती है; क्योंकि यह अनेक बार जन्म देने वाले संसार-बन्धन की नाशकारिणी है।

सर्वत्र शुभजन्मिन्यां काश्यां मुक्तिः पदे-पदे ।
सर्वपापविनिर्मुक्तो गच्छेच्च परमां गतिम्[4] ॥

सभी जगह शुभ-योनियों में जन्म लेने वालों को काशी में पद-पद पर मुक्ति मिलती है। तत्पश्चात् सभी पापों से मुक्त होकर परम-गति मोक्ष को प्राप्त करता है।

---

१. शिवरहस्य ; २. काशीखण्ड; ३. वही; ४. लिंगपुराण ।

सप्तजन्मार्जितात्पापान्मुक्तो भवति तत्क्षणात् ।
सर्वत्र शुभजन्मिन्यां काश्यां मुक्तिः पदे-पदे[1] ॥

काशी में सात जन्मों के अर्जित पाप क्षणभर में नष्ट हो जाते हैं। सभी प्रकार के शुभ कर्म को करने वाली काशी में पग-पग पर मुक्ति मिलती है।

१. काशीखण्ड ।

॥ द्वितीय अध्याय ॥

मुक्तिधाम काशी

यत्र विश्वेश्वरो देवः सर्वेषामेव देहिनाम् ।
ददाति तारकं ज्ञानं संसारान्मोचकं परम्[1] ॥

भगवान् सूर्य कहते हैं कि काशी में ही भगवान् श्रीविश्वनाथ जी सम्पूर्ण देहधारी प्राणियों को संसार से मुक्त करने वाले तारक मन्त्र का ज्ञान देते हैं, उसी ज्ञान से प्राणी मुक्त हो जाते हैं ।

ब्राह्मणाः क्षत्रिया वैश्याः शूद्राश्च वर्णसङ्कराः ।
स्त्रियो म्लेच्छाश्च ये चान्ये संकीर्णाः पापयोनयः[2] ॥
कीटाः पिपीलिकाश्चैव ये चान्ये मृगपक्षिणः ।
कालेन निधनं प्राप्ता अविमुक्ते शृणु प्रिये ॥
अकामो वा सकामो वा ह्यपि तिर्यग्गतोऽपि वा ।
अविमुक्ते त्यजन् प्राणान् मम लोके महीयते[3] ॥

भूतभावन श्रीमहादेव जी अपनी प्राणप्रिया श्रीपार्वती से कह रहे हैं कि, हे प्रिये ! अविमुक्त वाराणसी क्षेत्र में ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, वर्णसङ्कर, स्त्री, म्लेच्छ एवं अन्य समग्र संकीर्ण पापयोनि वाले जीव तथा कीट-पतंग, चींटी, अन्य मृगादि पशु एवं पक्षी भी जब कभी मृत्यु को प्राप्त होते हैं, ये सब के सब मुक्त हो जाते हैं ।

फिर मनुष्य तो सकाम हो, चाहे निष्काम हो, वह देह छोड़ते ही शिवस्वरूप हो शिवलोक में पूजनीय बनता है ।

ब्रह्मज्ञानं तदेवाहं काशीसंस्थितिभागिनाम् ।
दिशामि तारकं प्रान्ते मुच्यन्ते ते तु तत्क्षणात्[4] ॥

विश्वनाथ जी स्वयं कहते हैं कि स्वभावतः मनुष्यों के पञ्चेन्द्रिय चञ्चल होने से ब्रह्मज्ञान का उपदेश कहाँ हो सकता है, इसी कारण मैं काशी में अन्त समय में ब्रह्मज्ञान का उपदेश करता हूँ । अतएव काशी-निवासी जन अन्त समय में उसी ब्रह्मज्ञान

---

१. आदित्य-पु०, त्रि० से०, पृ० ३०८; २. पद्मपुराण, स्वर्ग-ख० ३३।१८ ।
३. म० पु०, १८१।२०,२२; ४. का० ख० ३२।११६ ।

रूप तारक मन्त्र के उपदेश से उसी समय मुक्त हो जाते हैं और सबसे बड़ी विशेषता तो यह है कि काशी में मरने वाला कैसा भी पापी, दुराचारी, चरित्रहीन, चाण्डाल क्यों न हो और चाहे पुण्यात्मा हो, सबको भगवान् विश्वनाथ जी एक ही प्रकार की मुक्ति देते हैं।

ब्रह्मज्ञानं न विन्दन्ति योगैरेकेन जन्मना।
जन्मनैकेन मुच्यन्ते काश्यामन्तकृतो जनाः[1] ॥

योगी लोग तक एक ही जन्म में ब्रह्मज्ञान प्राप्त नहीं करते हैं; परन्तु काशी में शरीर त्याग करने वाले व्यक्ति एक ही जन्म में मुक्ति को प्राप्त कर लेते हैं।

कलौ विश्वेश्वरो देवः कलौ वाराणसी पुरी।
कलौ भागीरथी गङ्गा कलौ दानं विशिष्यते[2] ॥

कलियुग में एक ही विश्वेश्वर देवता हैं और एक ही वाराणसी पुरी है। कलियुग में दान देना ही मुक्ति का साधन है। अतः काशीवास, गङ्गा जी में स्नान तथा दान देना, ये सब मुक्ति के साधन माने जाते हैं।

काशीवासिजनो देवि ! मम गर्भे वसेत्सदा।
अतस्तं मोचयाम्यन्ते प्रतिज्ञेयं यतो मम[3] ॥

विश्वनाथ जी दण्डपाणि जी से कहते हैं कि जैसी मेरी रति काशी में है, उसी तरह काशीवास करने वाले मेरे गर्भ में रहते हैं। अतः अन्तकाल में उन्हें मैं मुक्त कर देता हूँ। यही मेरी प्रतिज्ञा है।

पुण्यानि पापान्यखिलान्यशेषं सार्थं सबीजं तु शरीरभार्यें।
इहैव संहृत्य ददामि बोधं यतः शिवानन्दमवाप्नुवन्ति[4] ॥

विश्वनाथ जी कहते हैं कि हे देवि ! काशी में रहने वालों के सम्पूर्ण पुण्यों एवं पापों को बीज (मूल) के साथ तथा शरीर के साथ यहीं पर नष्ट करके ज्ञान का उपदेश करता हूँ, जिससे काशी में मृत प्राणी को शिवानन्द की प्राप्ति होती है।

दुर्लभं जन्म मानुष्यं दुर्लभा काशिकापुरी।
उभयोः सङ्गमासाद्य मुक्ता एव न संशयः[5] ॥

मनुष्य जन्म दुर्लभ है, उसी तरह काशी-पुरी भी दुर्लभ है। दोनों के संगम से तत्काल निःसंदेह मुक्ति मिलती है।

१. का० ख० ३२।१२०; २. वही—३२।१२५; ३. वही—३२।१३२।
४. सनत्कु० सं० तीर्थसुधानिधि-४५। ५. स्कन्दपुराण।

नान्यत्पश्यामि जन्तूनां मुक्त्वा वाराणसीपुरीम् ।
सर्वपापप्रशमनीं प्रायश्चित्तं कलौ युगे[1] ॥

प्राणियों के लिये वाराणसी पुरी को छोड़कर किसी अन्य पुरी से मुक्ति मिलनी सम्भव नहीं है। यह समस्त पापों को नष्ट करने वाली है और कलियुग में काशी सभी पापों को शान्त करने के लिये उत्तम प्रायश्चित्त भी है।

कपालमिन्दुः करिचर्म नागाः काशीपुरीं कण्ठगतस्य जन्तोः ।
मूर्च्छासु मूर्च्छासु परिस्फुरन्ति संज्ञासु संज्ञासु तिरोभवन्ति[2] ॥

विष्णु भगवान् कहते हैं कि काशीपुरी में जीव जब के प्राण गले तक पहुँच जाते हैं और वह मरने लगता है, उस समय जब-जब उसे मूर्च्छा (बेहोशी) आती है, तब-तब उसे शिव जी के हाथ का कपाल, उनके ललाट पर स्थित चन्द्रमा, उनके ओढ़ने का बाघम्बर, करिचर्म और उनके शरीर पर स्थित सर्प दिखाई देते हैं और जब-जब मूर्च्छा दूर होती है, तब-तब सभी आँखों से ओझल हो जाते हैं, अर्थात् जब प्राण जाने के समय बेहोशी होती है, उस समय महादेव जो तारक मन्त्र सुनाने के लिए आते हैं और उनके कपाल, चन्द्रमा आदि दिखाई पड़ने लगते हैं; परन्तु जब फिर होश आता है, तब ये सभी लुप्त हो जाते हैं।

समासक्तं यदा चित्तं जन्तोर्विषयगोचरे ।
यद्येवं ब्रह्मणि स्यात् तत्को न मुच्येत बन्धनात्[3] ॥

जैसे लौकिक विषयों में प्राणियों का मन सदा संलग्न रहता है। यदि इसी प्रकार परब्रह्म में आसक्त हो जाय तो कौन प्राणी बन्धन से मुक्त नहीं हो सकता है ?

मुमुक्षवः सुखेन स्युः काशीवासे शिवाज्ञया ।
न काशीसदृशं किञ्चित्साधनं विद्यतेऽन्यथा[4] ॥

विष्णु भगवान् कहते हैं कि हे पुण्यात्माओं, शिव जी की आज्ञा से काशीवास करने वाले मुमुक्षुजन सदा सुखपूर्वक काशीवास करें। काशी के समान मोक्ष का कोई अन्य साधन नहीं है।

जपध्यानविहीनानां ज्ञानविज्ञानवर्जिनाम् ।
तपस्युत्साहहीनानां गतिर्वाराणसी नृणाम्[5] ॥

शङ्कर जी कहते हैं कि जो मनुष्य न तो जप कर सकते हैं और न परमेश्वर का

---

१. पद्मपुराण; २. शैवागम; ३. मैत्रायण्युपनिषद् ।
४. का० रह० २० ; ५. कूर्मपुराणान्तर्गत वाराणसी-माहात्म्य ।

ध्यान ही करते हैं, ज्ञान और विज्ञान से रहित हैं, तप करने के लिये जिनके हृदय में लेशमात्र भी उत्साह नहीं है, ऐसे मनुष्यों की गति वाराणसी में ही हो सकती है, दूसरी जगह मुक्ति मिलनी असम्भव है।

किं मया वर्ण्यते देवि ह्यविमुक्तफलोदयः।
पापिनां यत्र मुक्तिः स्यान्मृतानामेकजन्मना ॥
अन्यत्र तु कृतं पापं वाराणस्यां विनश्यति ॥

हे देवि ! मैं अविमुक्तवासजन्य फल का क्या वर्णन करूँ, जहाँ मुक्ति देना ही तुम्हारे दर्शन का फल है। यहाँ मरे हुए पापियों को तुरन्त मुक्ति हो जाती है; क्योंकि अन्य क्षेत्र का किया हुआ पाप वाराणसी में विनष्ट हो जाता है।

कृत्वा कर्माण्यनेकानि कल्याणानीतराणि च।
तानि क्षणात् समुत्क्षिप्य काशीसंस्थोऽमृतो भवेत्[1] ॥

अपने जीवनकाल में जीव से अनेक प्रकार के पाप और पुण्य हो जाते हैं। काशी में रहने वाले उन सब कर्मों के बन्धन से वह मुक्त हो जाता है। प्राणों के छूटते ही क्षण भर में उसके सब पाप नष्ट हो जाते हैं। व्यक्ति के वे समस्त कर्म शीघ्र ही नष्ट हो जाते हैं तथा काशीवासी अमृत हो जाता है।

इदं गुह्यतमं क्षेत्रं सदा वाराणसी मम।
सर्वेषामेव भूतानां हेतुर्मोक्षस्य सर्वदा[2] ॥

विश्वनाथ जी स्कन्द जी से कहते हैं कि सदा अत्यन्त छिपा हुआ यह मेरा काशी-क्षेत्र चराचर समस्त प्राणियों के मोक्ष का कारण है।

यथा मोक्षमिहाप्नोति ह्यन्यत्र न तथा क्वचित्।
एतन्मम पुरं दिव्यं गुह्याद् गुह्यतरं महत्[3] ॥

हे देवि ! इस मेरे काशी-क्षेत्र में नियमपूर्वक निवास करके प्राणी जिस प्रकार मोक्ष पाता है, उस प्रकार अन्यत्र नहीं प्राप्त करता है। यह मेरा दिव्य पुर (धाम) अत्यन्त गोपनीय है।

अन्यानि मुक्तिक्षेत्राणि काशीप्राप्तिकराणि हि।
काशीं प्राप्य विमुच्यन्ते नान्यथा तीर्थकोटिभिः[4] ॥

हे देवि ! अन्य अयोध्या आदि छः पुरियों में शरीर-त्याग करने से काशीपुरी में जन्म मिलता है। पश्चात् (काशी में) देहत्याग से प्राणी मुक्त हो जाता है। अन्य करोड़ों तीर्थों से भी मुक्ति नहीं मिलती है।

१. का० ख०; २. म० पु० १८०।४७; ३. वही—१८०।५२; ४. स्कन्द-पुराण।

स्थिरा काश्यामिहैवैका प्रतिज्ञा हि मया कृता ।
अत्रैव मृतमात्राणां तिरश्चामपि देहिनाम् ।।
भक्तानामप्यभक्तानां पुण्यपापात्मनामपि ।
मुक्तिं दास्यामि सर्वेषां भक्तानामेव सा बहिः ।।

शिव जी कहते हैं कि—मैंने यह दृढ़ प्रतिज्ञा की है कि इस काशीपुरी में मरने वाले सभी मनुष्य, पशु-पक्षी, कीट-पतंग आदि को चाहे वे भक्त हों या नहीं, पुण्यात्मा हों या पापी, सभी को अवश्य मुक्ति दूँगा । काशी से बाहर मरने वाले उन्हीं मनुष्यों को मुक्ति दूँगा जो मेरे अनन्य भक्त हैं ।

अविमुक्तगुणान्वक्तुं देव-दानव-मानवैः ।
न शक्यतेऽप्रमेयत्वात् स्वयं यत्र भवः स्थितः[1] ।।

काशी (अविमुक्त) क्षेत्र के अपरिमित गुण-वर्णन में देव-दानव तथा मानव भी समर्थ नहीं हो सकते ; क्योंकि उसकी महिमा का कोई पार नहीं है । ऐसी यह काशी है, जहाँ स्वयं भगवान् शिव निवास करते हैं ।

अविमुक्ते मृतानां तु सा गतिर्विहिता शुभा ।
संहर्तारश्च कर्तारस्तस्मिन् ब्रह्मादयः सुराः[2] ।।

'काशी (अविमुक्त) क्षेत्र में मरे हुए प्राणियों की शुभ गति होती है' ऐसा कहा गया है । संहार तथा सृष्टि करने वाले ब्रह्मादि देवता भी उस अविमुक्त-क्षेत्र (काशी) में स्थित हैं ।

क्षेत्रेऽस्मिंस्तव देवेश यत्र कुत्रापि वा मृताः ।
कृमिकीटादयोऽप्याशु मुक्ताः सन्तु न चान्यथा[3] ।।

भगवान् राम भगवान् शंकर से कहते हैं कि हे भगवन् ! आपके क्षेत्र में जहाँ कहीं भी कृमि, कीट आदि भी यदि मृत्यु को प्राप्त करते हैं, तो उन्हें भी शीघ्र ही मुक्ति मिल जाय, यह बात अन्यथा न हो ।

अविमुक्ते तव क्षेत्रे सर्वेषां मुक्तिसिद्धये ।
अहं सन्निहितस्तत्र पाषाणप्रतिमादिषु[4] ।।

विष्णु भगवान् कहते हैं कि अविमुक्त क्षेत्र में जहाँ सबको मुक्ति मिलती है, वहाँ (काशी में) मैं समस्त पाषाण-प्रतिमाओं में हितकर होकर स्थित हूँ ।

---

१. म० पु० १८४:७; २ वही—१८४।२२।
३. रामोत्तरतापिन्युपनिषद्; ४. वही ।

महापापौघशमनीं पुण्योपचयकारिणीम् ।
भुक्तिमुक्तिप्रदात्रीं च को न काशीं सुधीः श्रयेत् ॥

महापापों का नाश करने वाली, पुण्य की वृद्धि करने वाली, भुक्ति-मुक्ति को देने वाली काशी का कौन विद्वान् आश्रय नहीं लेना चाहेगा ।

नाविमुक्ते मृतः कश्चिन्नरकं याति किल्बिषी ।
ईश्वरानुगृहीता हि सर्वे यान्ति परां गतिम्[1] ॥

अविमुक्त क्षेत्र में प्राण-त्याग करने वाला कोई पापी भी नरक में नहीं जाता । ईश्वर (विश्वनाथ जी) के अनुग्रह से सभी परम-गति (मोक्ष) प्राप्त करते हैं ।

मोक्षं सुदुर्लभं मत्वा संसारं चातिभीषणम् ।
अर्चनाचरणे मुक्त्वा वाराणस्यां वसेन्नरः[2] ॥

मोक्ष को दुर्लभ मानने वाले और संसार को भयंकर मानने वाले लोगों को अर्चना-पूजा करते हुए वाराणसी में वास करना चाहिए ।

स याति परमं स्थानं यत्र गत्वा न शोचति ।
जन्ममृत्युजरामुक्ताः परं यान्ति शिवालयम्[3] ॥

वे लोग परम स्थान काशी को प्राप्त करते हैं, जहाँ शोक का अवसर नहीं है तथा जहाँ लोग जन्म, मृत्यु, जरा से छुटकारा पाकर शिव में विलीन हो जाते हैं ।

भेषजं परमं तेषामविमुक्तं विदुर्बुधाः ।
अविमुक्तं परं ज्ञानमविमुक्तं परं पदम्[4] ॥

विद्वानों की दृष्टि में ऐसे लोगों के लिए काशी (अविमुक्त) क्षेत्र ही परम औषध है, ज्ञान है और परमपद है ।

यतो मयाऽविमुक्तं तदविमुक्तं ततः स्मृतम् ।
तदेव गुह्यं गुह्यानामेतद्विज्ञानमुच्यते[5] ॥

यतः मैं अविमुक्त-क्षेत्र को कभी भी विमुक्त नहीं करता, इसीलिए इसे अविमुक्त कहते हैं । यही गुह्य ज्ञान और विज्ञान है । यहीं पर मुक्ति प्राप्त होती है ।

ज्ञानाज्ञानाभिनिष्ठानां परमानन्दमिच्छताम् ।
या गतिर्विदिता सुभ्रु ! साऽविमुक्ते मृतस्य तु[6] ॥

जो ज्ञान और अज्ञान में लगे हुए हैं तथा परमानन्द चाहते हैं और जिस गति को चाहते हैं, वह अविमुक्त क्षेत्र (काशी) में मरने से प्राप्त होती है ।

---

१. पद्म-पु०, स्व० ख० ३३।२१; २. वही—३३।२२; ३. वही—३३।२६ ।
४ वही—३३।३०; ५. वही—३३।४४; ६. वही—३३।४५ ।

यत्र साक्षान्महादेवो देहान्ते स्वयमीश्वरः ।
व्याचष्टे तारकं ब्रह्म तत्रैव हि विमुक्तये[1] ॥

जहाँ देहान्त होने पर स्वयं भगवान् विश्वनाथ (महादेव जी) तारक ब्रह्म का उपदेश देकर मुक्त कर देते हैं ।

यत्तत्परतरं तत्त्वमविमुक्तमिति श्रुतम् ।
एकेन जन्मना देवि ! वाराणस्यां तदाप्नुयात्[2] ॥

जो वह अविमुक्त परमतत्त्व है, हे देवि ! वह एक ही जन्म में वाराणसी में प्राप्त हो जाता है ।

वरुणायास्तथा चास्या मध्ये वाराणसीपुरी ।
तत्रैव संस्थितं तत्त्वं नित्यमेवं विमुक्तकम्[3] ॥

वरुणा और असी के बीच में वाराणसीपुरी स्थित है । उसी में यह विमुक्ति देने वाला तत्त्व नित्य स्थित है ।

वाराणस्याः परं स्थानं न भूतं न भविष्यति ।
यत्र नारायणो देवो महादेवो दिवीश्वरः[4] ॥

वाराणसी से बढ़कर कोई स्थान न हुआ, न होगा, जहाँ नारायण और महादेव दोनों निवास करते हैं ।

महापातकिनो देवि ! ये तेभ्यः पापकृत्तमाः ।
वाराणसीं समासाद्य ते यान्ति परमां गतिम्[5] ॥

हे देवि ! जो महापातकी हैं तथा जो उनसे भी बढ़कर पापी हैं, वे वाराणसी को प्राप्त कर परमगति (मोक्ष) को प्राप्त करते हैं ।

यैः समाराधितो रुद्रः पूर्वस्मिन्नेकजन्मनि ।
ते विन्दन्ति परं क्षेत्रमविमुक्तं शिवालयम्[6] ॥

जिसने पूर्व के एक जन्म में रुद्र की आराधना की है, वे शिव के आवासभूत अविमुक्त-क्षेत्र (काशी) को प्राप्त होते हैं ।

जन्ममृत्युभयं तीर्त्वा स याति परमां गतिम् ।
नैःश्रेयसीं गतिं पुण्यां तथा योगगतिं व्रजेत्[7] ॥

काशी में जन्म-मृत्यु के भय को पार कर वह परमगति को प्राप्त करता है और नैःश्रेयस गति तथा पुण्यमय योग-गति को प्राप्त करता है ।

१. पद्म-पु० ३३।४७; २. वही—३३।४८; ३. वही—३३।५०; ४. वही—३३।५१ ।
५. वही—३३।५३; ६. वही—३३।५९; ७. म० पु० १८२।१३ ।

न हि योगगतिर्दिव्या जन्मान्तरशतैरपि ।
प्राप्यते क्षेत्रमाहात्म्यात् प्रभावाच्छङ्करस्य तु[1] ॥

सैकड़ों जन्मों में भी दिव्य योगगति नहीं मिलती; किन्तु काशी-क्षेत्र के प्रभाव तथा भगवान् विश्वनाथ जी की कृपा से वह मुक्ति अवश्य प्राप्त हो जाती है।

आ देहपतनाद् यावत् क्षेत्रं यो न विमुञ्चति ।
न केवलं ब्रह्महत्या प्राक्कृतं च निवर्तते[2] ॥

शरीर-त्याग-पर्यन्त जो काशी-क्षेत्र का त्याग नहीं करता, वह केवल ब्रह्महत्या मात्र नहीं; अपितु पूर्वकृत पापों से भी निवृत्त हो जाता है, अर्थात् सभी पापों से वह व्यक्ति मुक्त हो जाता है।

तत्र ब्रह्मादयो देवा नारायणपुरोगमाः ।
योगिनश्च तथा साध्यास्तथैव भगवान् स्वयम्[3] ॥

इस काशी-क्षेत्र में नारायण, ब्रह्मादि देवयोगी तथा, साध्यगण और सनातन भगवान् विश्वनाथ जी विराजमान हैं और सबको मुक्ति प्रदान करते हैं।

उपासन्ते शिवं मुक्ता मद्भक्ता मत्परायणाः ।
या गतिर्ज्ञानितपसां या गतिर्यज्ञयाजिनाम्[4] ॥

जो लोग काशी में शिव जी की उपासना करते हैं, ज्ञानी, तप करने वाले याज्ञिकों की जो गति होती है, वही गति मेरे परायण (आश्रित) रहने वाले भक्तों को होती है।

सम्राड्विराण्मया लोका जायन्ते ह्यपुनर्भवाः ।
महर्जनस्तपश्चैव सत्यलोकस्तथैव च[5] ॥

सम्राट्-विराट्मय लोक भी मुक्ति के भागी हो जाते हैं। कहाँ तक कहा जाय, महर्लोक, तपोलोक, जनलोक तथा सत्यलोक के देवता भी काशी में मुक्त हो जाते हैं।

ब्राह्मणाः क्षत्रिया वैश्याः शूद्रा वै वर्णसङ्कराः ।
कृमिम्लेच्छाश्च ये चान्ये सङ्कीर्णाः पापयोनयः ॥
अविमुक्तं गतो देवि न निर्गच्छेत् ततः पुनः ।
सोऽपि मत्पदमाप्नोति नात्र कार्या विचारणा[6] ॥

भगवान् विश्वनाथ जी अन्नपूर्णा जी से कहते हैं कि हे देवि ! ब्राह्मण, क्षत्रिय,

---

१. म० पु० १८२।१४; २. वही—१८२।१६; ३. वही—१८४।२०।
४. वही—१८४।२१; ५. वही—१८४।२३; ६. वही—१८१।१९, २४।

वैश्य, शूद्र, वर्णसङ्कर, कृमि, म्लेच्छ तथा अन्य संकीर्ण पापयोनियाँ भी यदि काशी-(अविमुक्त) क्षेत्र में आकर पुनः वापस न चली जांय, तो वह मेरे पद को प्राप्त करती हैं, वह मेरे इस परम धाम को प्राप्त करती हैं। इसमें विचार करने की कोई आवश्यकता नहीं है। अर्थात् काशी में मरने पर मुक्ति अवश्य प्राप्त होती है।

जन्मान्तरसहस्रेषु युञ्जन् योगमवाप्नुयात्।
तमिहैव परं मोक्षं मरणादधिगच्छति[1]॥

हजारों जन्मों से योगाभ्यास करता हुआ प्राणी योगसिद्धि को प्राप्त करता है; किन्तु मेरे अतिप्रिय इस काशी-क्षेत्र में केवल शरीर-त्याग करने से ही मोक्ष प्राप्त कर लेता है।

एतदेव परं स्थानमेतदेव परं शिवम्।
एतदेव परं ब्रह्म एतदेव परं पदम्[2]॥

यह काशी-क्षेत्र ही सर्वोत्तम स्थान है, यही परम शिवदायक है, यही परम कल्याणकारी है, यही परम ब्रह्म और यही परम (सर्वोत्तम) पद है।

वाराणसी तु भुवनत्रयसारभूता
रम्या सदा मम पुरी गिरिराजपुत्रि।
अत्रागता विविधदुष्कृतकारिणोऽपि
पापक्षयाद् विरजसः प्रतियन्ति मर्त्याः[3]॥

हे गिरिराजपुत्रि पार्वति! यह वाराणसी नगरी, तीनों लोकों की सारभूत है, यह सर्वदा ही रमणीय प्रतीत होती है, यह मेरी नगरी है। यहाँ पर आने वाले विविध पापकर्म किये हुए भी क्यों न हों, यहाँ आते ही उनके सभी पाप नष्ट हो जाते हैं और वे निष्पाप रहते हैं।

हे हिमालयपुत्रि! सदा रमणीय यह मेरी प्रिय काशीपुरी तीनों लोकों का सार है। अनेक प्रकार के दुष्कर्म करने वाले पापी लोग भी यहाँ आकर पापक्षय हो जाने से सत्त्वगुण-सम्पन्न होकर तेजस्वी, प्रकाशमान हो जाते हैं। इतना ही नहीं, भगवान् विश्वनाथ जी तो यहाँ तक कहते हैं कि—

सूच्यग्रमात्रमपि नास्ति ममास्पदेऽस्मिन्
स्थानं सुरेश्वरि मृतस्य न यत्र मोक्षः।
भूमौ जले वियति वाऽशुचि मेध्यभूमौ
सर्पाग्निदस्युपविभिर्न हि तस्य जन्तोः॥

---

१. म० पु० १८०।७४; २. वही—१८०।७७; ३. वही—१८०।७८।

हे सुरेश्वरि ! मेरी इस काशीपुरी में ऐसी कोई सूई भर भी जगह नहीं है, जिसमें मरने पर जीव को मुक्ति न मिले। चाहे भूमि पर प्राण-त्याग करे या जल में, चाहे आकाश में मरे, पवित्र स्थान में मरे या अपवित्र स्थान में मरे, उस जीव को मुक्ति अवश्य मिल जाती है। सर्प के काटने से, अग्नि में जल जाने से, वज्र के गिरने से अथवा चोरों के द्वारा असमय में मारे जाने से अकाल मृत्यु कही जाती है और उनको सद्गति की प्राप्ति नहीं होती है; परन्तु काशी में किसी भी प्रकार से मरने वाले को मुक्ति अवश्य मिलती है।

विनापि योगैश्च विनापि पुण्यैर्विनापि दानैस्सहितोऽपि पापैः ।
मृतः प्रयात्येव हि यत्र तत्र मामेव निर्दग्धसमस्तदोषः ॥

अपने जीवनकाल में किसी प्रकार की योग-क्रिया किये विना ही, यहाँ तक कि घोर पापों से घिरे रहने पर भी जीव काशी में मरते ही मेरे लोक में पहुँचकर मुक्त हो जाता है और उसके सब दोष नष्ट हो जाते हैं।

काशीनाथं समाश्रित्य कुतः कालभयं नृणाम् ।
क्रुद्धोऽपि जीवहृत्कालस्तच्च काश्यां सुमङ्गलम्[1] ॥

हे देवि ! श्रीकाशीपति विश्वनाथ जी के आश्रय (पूजा-अर्चा) से अतिकुपित काल से भी प्राणियों को भय नहीं रहता है, बल्कि काशी का मरण मङ्गलस्वरूप हो जाता है।

मन्मना मम भक्तश्च मयि सर्वार्पितक्रियः ।
यथा मोक्षमिहाप्नोति ह्यन्यत्र न तथा क्वचित्[2] ॥

काशी में रहने वाले मेरे भक्त मुझमें अपने मन को लगाते हैं और मेरे लिए अपनी सम्पूर्ण क्रियाओं को समर्पित करके जिस प्रकार का मोक्ष यहाँ काशी में प्राप्त करते हैं, उस प्रकार की मुक्ति अन्य जगह कहीं भी नहीं मिलती है।

बहुजन्मशताभ्यासाद्योगी मुच्येत वा न वा ।
मृतमात्रोऽपि मुच्येत काश्यामेकेन जन्मना[3] ॥

बहुत से सैकड़ों जन्मों के अभ्यास से भी योगी को मुक्ति मिले या न मिले; किन्तु काशी में शरीर-त्याग मात्र से एक ही जन्म में मुक्ति मिल जाती है।

वाराणस्यां स्थितो यो वै पातकेषु रतः सदा ।
योनिं प्रविश्य पैशाचीं वर्षाणामयुतत्रयम् ॥
पुनरेव च तत्रैव ज्ञानमुत्पद्यते ततः ।
मोक्षं गमिष्यते सोऽपि गुह्यमेतत् खगाधिप[4] ॥

---

१ का० ख०; २. म० पु० १८०।५१; ३. का० ख० ; ४. गरुड-पुराण।

विष्णु भगवान् कहते हैं कि हे गरुड़ जी ! वाराणसी में रहकर जो सदा पाप में रत रहते हैं, वे पिशाच योनि में तीस हजार वर्ष तक निवास करते हैं, पुनः ज्ञान प्राप्त करके मोक्ष प्राप्त करते हैं। यह अत्यन्त गोपनीय तथ्य है।

अन्यत्र यत्कृतं पापं तत्काश्यां परिणश्यति।
नाऽन्यत्पश्यामि जन्तूनां मुक्त्वा वाराणसीपुरीम्।
सर्वपापप्रशमनीं प्रायश्चित्तं कलौ युगे[1] ॥

अन्य स्थानों में किये गये पाप काशी में नष्ट हो जाते हैं। काशीपुरी को छोड़कर समस्त पाप नष्ट करने वाली दूसरी कोई वस्तु नहीं दीख पड़ती। कलियुग में काशी ही समस्त पापों का प्रायश्चित्तस्वरूप है।

सदागतो विमुक्तिस्तु प्रसादादेव मे भवेत्।
मत्प्रसादस्तु येष्वस्ति जीवेषु त्रिजगत्सु वै ॥
तेषामेव भवेच्छ्रद्धा मल्लिङ्गे मम तीर्थके ॥

मेरे क्षेत्र में आये हुए प्राणी की मेरी प्रसन्नता से ही मुक्ति होती है। जगत् में जिन जीवों पर मेरी प्रसन्नता होती है, उन्हीं लोगों को मेरे लिङ्ग तथा काशी-क्षेत्र में श्रद्धा होती है।

काशीयं सर्वजन्तूनां मुक्तिदात्री तनुत्यजाम्।
अमोघभोगदा चात्र स्वल्पधर्मकृतामपि ॥
केवलं धर्मह्रस्वत्वात् कलौ काशी गतिर्नृणाम् ॥

यह काशी अपनी सीमा के अन्तर्गत शरीर-त्याग करने वाले सभी जन्तुवों को मोक्ष देनेवाली है। यहाँ पर थोड़ा-सा भी धर्म करने वाले को यह अमोघ भोग देती है। धर्म के ह्रास से कलियुग में केवल काशी ही मनुष्यों की गति है।

कालमाधवनामाहं कालभैरवसन्निधौ।
कलिः कालो न कलयेन्मद्भक्तमिति निश्चितम्[2] ॥

कालभैरव के समीप कालमाधव नाम के विष्णु देवता हैं। कलियुग में इनके भक्त को काल ग्रहण नहीं करता है।

तल्लिङ्गसेवया सर्वे तुष्यन्ति प्रपितामहाः।
तद्दक्षिणे सिद्धकूपः सिद्धाः सन्ति सहस्रशः[3] ॥

पित्रीश्वर लिङ्ग की पूजा, सेवा और दर्शन से समस्त प्रपितामहगण सन्तुष्ट होते हैं। उनके दक्षिण में सिद्धकूप है, जहाँ हजारों सिद्ध स्थित हैं।

१. का० ख०; २. वही—६१।१८६; ३. वही—९७।१६२।

मुमुक्षोः प्राणिमात्रस्य पापाद्भीरोः शिवात्मनः।
जाते साधनवैकल्ये काशी पूर्णं प्रकल्पयेत् ॥

पाप से भयभीत शिवात्मस्वरूप मुमुक्षु प्राणिमात्र के साधनों के अपूर्ण होने पर काशी उसे पूर्ण करती है।

अधिक क्या कहा जाय, कार्त्तिकेय जी अगस्त्य ऋषि से कहते हैं कि—

प्राप्य विश्वेश्वरं देवं न स भूयोऽभिजायते।
अनन्यमानसो भूत्वा योऽविमुक्तं न मुञ्चति[1] ॥

जो अनन्य मन से अविमुक्त काशी को नहीं छोड़ता है और विश्वेश्वर भगवान् को प्राप्त कर लेता है, वह पुनर्जन्म का भागी नहीं होता है।

सर्वपर्वाणि तत्रैव सर्वतीर्थानि तत्र वै।
अविमुक्तमिदं क्षेत्रं मत्स्याकारत्वमाप्नुयात्[2] ॥

सभी पर्व तथा सभी तीर्थ इसी अविमुक्त-क्षेत्र (काशी) में हैं, अतः यह क्षेत्र मत्स्य के आकार को प्राप्त किया है।

यथा मोक्षमिहाप्नोति ह्यन्यत्र न तथा क्वचित्।
एतन्मम पुरं दिव्यं गुह्याद्गुह्यतरं महत्[3] ॥

यहाँ काशी में जैसी मुक्ति प्राप्त होती है, वैसी अन्यत्र कहीं नहीं मिलती है। यह मेरा दिव्य गुह्यतर आवास-स्थान है।

अस्मिन् सिद्धाः सदा देवि मदीयं व्रतमास्थिताः।
नानालिङ्गधरा नित्यं मम लोकाभिकाङ्क्षिणः[4] ॥

इस काशी में सिद्ध लोग मेरा व्रत धारण करके निवास करते हैं तथा मेरे धाम की इच्छा करने वाले अनेक रूप धारण करके यहाँ निवास करते हैं।

रहस्यं विश्वनाथस्य को जानातीति संस्तुवेत्।
पञ्चाशत्कोटिविस्तीर्णभूमौ काशी विलक्षणा ॥
यस्मिन् मेऽनुग्रहः पूर्णस्तस्यैवात्र गतिर्भवेत्।
तस्मात्काशी भूविशेषे वैलक्षण्यमिहास्ति हि ॥

भगवान् विश्वनाथ जी का रहस्य कौन जान सकता है ? अतः उनकी स्तुति करो, क्योंकि पचास करोड़ योजन विस्तीर्ण पृथ्वी में "काशी" ही विलक्षण है।

१. म० पु०; २. का० ख०; ३. म० पु० १८०।५२। ४. वही—१८०।४८।

श्रीविश्वनाथ जी कहते हैं कि जिसके ऊपर मेरा पूर्ण अनुग्रह होता है, वही यहाँ (काशी में) शरीर-त्याग तथा मुक्तिलाभ करता है । इसलिए काशी की भूमि में बड़ी विलक्षणता है।

अत्र विश्वेश्वरः साक्षात् स्थावरात्मा जगत्प्रभुः ।
सर्वेषां सर्वसिद्धीनां कर्ता भक्तिजुषामिह[1] ।।

इस काशी में जगत्-स्वामी स्थावर रूप में विश्वेश्वर-भक्तिमानों को सभी सिद्धियाँ प्रदान करते हैं।

जाने सत्त्वमया जाताः क्षेत्रस्यास्य निषेवणात् ।
नीरजस्का वितमसः संसारार्णवपारगाः ।।
वाराणस्यास्तु ये भक्तास्ते भक्ता मम निश्चितम् ।
जीवन्मुक्ता हि ते नूनं मोक्षलक्ष्म्या कटाक्षिताः[2] ।।

कार्तिकेय जी अगस्त्य ऋषि से कहते हैं कि काशी-क्षेत्र की सेवा करने से, सविधि निवास करने से मनुष्य सत्त्वमय हो जाते हैं। रजोगुण तथा तमोगुण से विमुक्त होकर वे संसाररूपी सागर से पार हो जाते हैं।

जो लोग वाराणसी (काशी) के भक्त हैं, वे निश्चित ही मेरे (भगवान् शङ्कर के) भक्त हैं तथा ऐसे भक्त जीवन्मुक्त होते हैं एवं शरीरत्यागोपरान्त उन्हें मोक्ष-लक्ष्मी निश्चित ही वरण करती हैं।

मोक्षलक्ष्मीरियं काशी न येभ्यः परिरोचते ।
स्वर्लक्ष्मीं काङ्क्षमाणेभ्यः पतितास्ते न संशयः[3] ।।

मोक्ष-लक्ष्मी यह काशी जिन्हें प्रिय नहीं लगती है तथा जो केवल स्वर्ग-लक्ष्मी को ही चाहते हैं, वे पतित ही होते हैं। इसमें कोई संशय नहीं है।

अविमुक्ते परासिद्धिर्रविमुक्ते परागतिः ।
जपं दत्तं हुतं चेष्टं तपस्तप्तं कृतं च यत्[4] ।।

श्रीकाशी (अविमुक्त) क्षेत्र में परम सिद्धि है और यहीं पर परमगति प्राप्त होती है तथा जप, दान, हवन, यज्ञ और तप करने वाले को यहाँ प्रत्यक्ष फल प्राप्त होता है।

---

१. का० ख० ९२।१६ ; २. वही— ६४।४२; ३. वही—६४।५० ।
४. म० पु० १८१।१६ ·

मृतानां न पुनर्जन्म न भूयो भवसागरः ।
तस्मात्सर्वप्रयत्नेन वाराणस्यां वसेन्नरः[1] ॥

इस काशी (अविमुक्त) पुरी में मरने वालों का पुनर्जन्म नहीं होता है। इसलिये अनेक प्रयत्नों द्वारा काशी-पुरी में निवास करना चाहिए।

एकं रूपं हि विश्वेशो मुक्तिदो नान्य एव हि ।
स एव काशीं सम्प्राप्य मुक्तिं यच्छति नान्यतः ॥

भगवान् विश्वेश (विश्वनाथ) जो हो मुक्तिदाता हैं, अन्य दूसरा कोई नहीं। वही भगवान् विश्वनाथ काशी-निवासियों को मुक्ति देते हैं।

सत्यं शौचमहिंसा च क्षान्तिर्दानं दया दमः ।
अस्तेयमिन्द्रियजयः सर्वेषां धर्मसाधनम्[2] ॥

सत्य, शौच, अहिंसा, शान्ति, दान, दया, दम, चोरी न करना, इन्द्रियों को बस में रखना, ये सभी के लिए धर्म के साधन हैं।

काशी सर्वाऽपि विश्वेशरूपिणी नात्र संशयः ।
आश्चर्यकारिपरमं काशी भक्तिप्रवर्धनम् ॥

समस्त काशी शिवरूपा है, इसमें कोई संशय नहीं है। महान् आश्चर्यकारिणी काशी भक्ति की वृद्धि करती है और भुक्ति-मुक्ति भी प्रदान करती है।

अविमुक्तं महाक्षेत्रं परं निर्वाणकारणम् ।
क्षेत्राणां परमं क्षेत्रं मङ्गलानाञ्च मङ्गलम्[3] ॥

अगस्त्य जो कहते हैं कि अविमुक्त महाक्षेत्र (तो) परम निर्वाण का कारण है। समस्त क्षेत्रों में परम क्षेत्र और मङ्गलों का भी मङ्गलस्वरूप है।

असारे खलु संसारे सारमेतच्चतुष्टयम् ।
काश्यां वासः सतां सङ्गः गङ्गाम्भः शिवपूजनम् ॥

इस असार संसार में चार सार (तत्त्व) हैं—१. काशी में वास, २. सज्जन साधु-सन्तों के साथ रहना, ३. गङ्गास्नान और ४. शिव का पूजन। यह चार साधन जिन मनुष्यों के नियमित होते हैं, वे व्यक्ति जीवन्मुक्त हो जाते हैं।

पुण्यवानितरो वाऽपि मम क्षेत्रस्य सेवया ।
मुक्तो भवति देवेशि! नात्र कार्या विचारणा[4] ॥

हे देवि! पुण्यात्मा या पापी जन मेरे इस काशी-क्षेत्र का सेवन करने से

---

१. का० ख० ३२।७७; २. वही—४०।८६; ३. वही— ३५।१।
४. वही—२।१२७।

(नियमतः काशी में निवास करके) मुक्त हो जाते हैं। मुक्ति के विषय में संशय नहीं करना चाहिए, अवश्य ही काशी मुक्ति देती है।

काशीस्थैः पतितैस्तुल्या न वयं स्वर्गिणः क्वचित्।

काश्यां पाताद्भयं नास्ति स्वर्गे पाताद्भयं महत्[1]॥

काशी में वास करने वाले पतित से पतित व्यक्तियों की तुलना हम स्वर्गवासी नहीं कर सकते हैं; क्योंकि काशी-निवासी प्राणियों को किसी भी प्रकार के पतन का भय नहीं रहता। स्वर्ग में निवास करने वाले हम देवताओं को **"क्षीणे पुण्ये मर्त्यलोके विशन्ति"** इस सूक्ति के अनुसार मृत्युलोक में पतन का भय रहता है, अर्थात् स्वर्गलोक में पुण्य का भोग करने के पश्चात् मृत्युलोक में जन्म लेना पड़ता है।

परार्द्धद्वयनाशेऽपि काशीस्थो वै न नश्यति।

तस्मात्सर्वप्रयत्नेन काश्यां श्रेयः समाचरेत्[2]॥

परार्द्धद्वय का नाश होने पर भी काशी में वास करने वाले को नाश का भय नहीं होता है। इसलिए आत्मोन्नति के इच्छुक व्यक्ति को चाहिए कि वह सब प्रकार से प्रयत्न करके काशीवास करके निःश्रेयस की प्राप्ति करे। यतः काशीवास कैवल्य मोक्ष प्राप्त कराता है।

यत्सुखं काशीवासेऽत्र न तद् ब्रह्माण्डमण्डपे।

अस्ति चेत्तत्कथं सर्वे काशीवासाभिलाषुकाः[3]॥

जो सुख काशीवास से प्राप्त होता है, वह सुख इस सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में दुर्लभ है। यदि ऐसा सुख अन्यत्र सुलभ होता, तो सभी लोग काशीवास के अभिलाषी क्यों होते? अर्थात् जो सुख काशीवास में प्राप्त होता है, वह सुख अन्यत्र कहीं भी नहीं प्राप्त होता।

काशीवाससुखं प्राप्य नाद्यापि दिवमीहते।

स्नात्वाऽत्र सन्तर्प्य पितॄञ्छ्राद्धं कृत्वा विधानतः[4]॥

काशी में स्नान करके, विधिपूर्वक पितरों का श्राद्ध करके तथा उन्हें तृप्त करके काशीवासी जन काशीवास-सुख को प्राप्त कर स्वर्ग भी नहीं चाहता है। यतः काशीवास करने वाला व्यक्ति स्वर्ग से भी काशी में उत्तम सुख समझता है।

ये काश्यां धर्मभूयिष्ठा निवसन्ति मुनीश्वराः।

ते तारयन्ति चात्मानं शतपूर्वान् शतावरान्॥

जो मुनीश्वर अविमुक्त काशी-क्षेत्र में निरन्तर धर्मकर्मानुष्ठान का पालन

---

१. का० ख० ३।७९; २. वही—३।८१; ३. वही—३।८२।

४. वही—३३।१६३।

करते हैं, वे महापुरुष अपने को तो तारते ही हैं, सौ पीढ़ी पूर्वजों तथा आने वाली पुत्र-पौत्रादि सौ पीढ़ी को भी भवसागर से तारते हैं।

आधिव्याधिसहायिन्या जरया मृत्युलिङ्गया।
कालं निकटतो ज्ञात्वा काशीनाथं समाश्रयेत्॥
काशीनाथं समाश्रित्य कुतः कालभयं नृणाम्।
क्रुद्धोऽपि जीवहृत्कालस्तच्च काश्यां सुमङ्गलम्[1]॥

मृत्यु को चिह्नरूपा, आधि-व्याधि-सहायिनी वृद्धता के द्वारा काल को निकट-वर्ती जानकर काशीनाथ का आश्रयण करना चाहिए। काशीनाथ का शरणागत हो जाने पर मनुष्य को फिर काल का भय कहाँ से हो सकता है? क्योंकि काल तो कुपित होकर जीव हो लेता है, सो वह भी काशी में परम मंगल का विषय है।

वस्तुः कोटिगुणं पूज्यं काश्यां वासयितुर्ध्रुवम्।
आत्मानं तारयेत् स तु स्तौ द्वौ वासयिता यतः[2]॥

काशीवास करने वाले से काशीवास कराने वाले को कोटिगुणा अधिक पुण्य होता है; क्योंकि काशीवास करने वाला तो अपने को ही तारता है; पर काशीवास कराने वाला अपने को तथा जिसे काशीवास कराता है, दोनों का ही उद्धार कर देता है।

तच्च ज्ञानं भवेत् पुंसां सम्यक्काशीनिषेवणात्।
काशीं निषेवणेन स्याद् विश्वेशे करुणोदयः[3]॥

काशी के सेवन (काशीवास) से तत्त्वज्ञान होता है। काशीवास करने वाले व्यक्ति की काशी में निष्ठा, श्रद्धा और भक्ति देखकर भगवान् विश्वनाथ जी को दया आती है, वे कृपा करके मोक्ष प्रदान करते हैं; इसमें संशय नहीं है।

यथा शुक्तौ पयोवाहात् पतिता जलबिन्दवः।
मुक्ताः स्युस्तथा काश्यां स्थिताः सर्वेऽपि जन्तवः[4]॥

जिस प्रकार शुक्ति में आकाश से जल गिरने पर मोती बन जाता है, उसी प्रकार काशीवास करने वाले सभी नर-नारी शिवरूप हो जाते हैं, अर्थात् शिवस्वरूप को प्राप्त कर मुक्त हो जाते हैं।

शास्त्रमार्गेण वसतामिहामुत्र न दुर्लभः।
मोक्षः साधनसङ्घैर्हि प्राप्यते न तु यः क्वचित्[5]॥

शास्त्र के अनुसार काशीवास करने वाले मनुष्यों को इस लोक में समस्त सुख

---

१. का० ख० ४१।१८५-१८६; २. काशीदर्शन; ३. का० ख० ९६।७३।
४. लिङ्गपुराण; ५. का० रह० २०।८७।

प्राप्त होता है और अन्त में उनको मोक्ष प्राप्त होता है। जो अनेक तप, दान, तीर्थ आदि साधनों से नहीं प्राप्त होता है, वह भी दुर्लभ नहीं रहता है, अर्थात् सुलभ हो जाता है।

गायन्ति सिद्धाः किल गीतकानि
धन्या विमुक्ते तु नरा वसन्ति।
स्वर्गापवर्गस्य पदस्य लिङ्ग
ये कृत्तिवासं शरणं प्रपन्नाः[1]॥

यदि शाश्वत अमृतपद तारक ब्रह्म के उपदेश की इच्छा रखने वाले हों, तो सिद्ध लोग यह गीत गाते हैं कि—जो अविमुक्त वाराणसी में निवास करते हैं, वे धन्य हैं तथा जो स्वर्ग और अपवर्ग के चिह्नभूत कृत्तिवास का शरण ग्रहण किये हैं, वे भी धन्य हैं।

काशीं समाश्रिता ये च यैश्च विश्वेश्वरोऽर्चितः।
तारकं ज्ञानमासाद्य ते मुक्ताः कर्मपाशतः[2]॥

सनत्कुमार जो कहते हैं कि जो व्यक्ति काशीवास करते हैं और भूतभावन विश्वनाथ जी का दर्शन-अर्चन-पूजनादि करते हैं, वे तारक ज्ञान प्राप्त करके कर्म-बन्धन से मुक्त हो जाते हैं।

तनुः कृतार्था शिव काशिवासिनी[3]।

भगवान् शिव की पुरी श्रीकाशी जी में वास करने से शरीर कृतार्थ होता है।

कः प्राप्य काशीं दुर्मेधाः पुनस्त्यक्तुं समीहते।
अनेकजन्मजनितकर्मनिर्मूलनक्षमाम्[4] ॥

अनेक जन्मार्जित पापों को निर्मूल (सर्वथा समाप्त) करने में समर्थ पुण्यप्राप्त काशी को प्राप्त करके भी ऐसा कौन दुर्बुद्धि मनुष्य होगा, जो पुनः छोड़ना चाहेगा।

वरं काशीपुरीवासो मासोपवसनादिभिः।
विचित्रच्छत्रसञ्छायं राज्यं नान्यत्र नीरिपुः[5]॥

एक मास भर उपवास करके रहने पर भी काशीपुरी का निवास श्रेष्ठ माना

---

१. लिङ्गपुराण; २. का० ख० ४२।५६; ३. वही—४४।४२।
४. वही—५२।७५; ५. वही—३।७७।

का० मा०—१८

जाता है। छत्र की छाया में दूसरी जगह का निष्कण्टक राज्य भी श्रेष्ठ नहीं है; अपि तु काशी में निवास करना ही श्रेष्ठ है।

जन्मान्तरसहस्रेषु यत्पुण्यं समुपार्जितम्।
तत्पुण्यपरिवर्तेन काश्यां वासोऽत्र लभ्यते[1]॥

पराशर ऋषि सूत जी से कहते हैं कि जो पुण्य हजारों जन्मान्तरों में एकत्रित किया जाता है, उसी पुण्य के परिवर्तन फल से काशीवास प्राप्त होता है।

अवश्यं काशिका सेव्या सर्वकर्मनिवारिणी।
मानुष्यं प्राप्य ये मूढा निमेषमितजीवितम्।
न सेवन्ते पुरीं काशीं ते मूढा मन्दबुद्धयः[2]॥

कार्तिकेय जी अगस्त्य जी से कहते हैं कि सभी कर्मों का निवारण करने वाली काशी की सेवा (काशीवास) अवश्य करनी चाहिए। क्षणभंगुर जीवन वाले मनुष्य जन्म को प्राप्त कर जो काशीवास नहीं करता है, वह मन्द बुद्धि वाला है।

एकरात्रं स्थिता ये तु पुण्यसम्भारसन्ततिः।
तेषां प्रवर्तते नित्यं मासंसंवत्सरक्रमैः[3]॥

अनेक जन्मार्जित अपने पुण्य के फल की कृपा से जो एक रात भी काशी-निवास करते हैं, उनको मास-वर्ष के अनुसार क्रमशः फल प्राप्त होता है, यह निश्चित है।

आनन्दकानने ह्यत्र ज्वलद्दावानलोऽस्म्यहम्।
कर्मबीजानि जन्तूनां ज्वालये न प्ररोहये॥
वस्तव्यं सततं काश्यां यष्टव्योऽहं प्रयत्नतः[4]॥

भगवान् विश्वनाथ जी कहते हैं कि मैं इस आनन्दकानन काशी में धधकता हुआ दावानल (दावाग्नि) हूँ। मैं जीवों के कर्म-बीज को भस्मसात् करता रहता हूँ, उन्हें उगने नहीं देता हूँ। अतः भक्तों को काशी में निरन्तर ही निवास करना चाहिए। प्रयत्नपूर्वक काशी का सेवन करना चाहिए।

---

१. का० ख० ३।८३; २. वही—९४।४८–४९; ३. ब्रह्मवैवर्तपुराण, काशीरहस्य। ४. का० ख० ६४।५२-५३।

मोक्षं सुदुर्लभं मत्वा संसारं चातिभीषणम्।
अर्चनाचरणे भुक्त्वा वाराणस्यां वसेन्नरः[1] ॥

मोक्ष को दुर्लभ तथा संसार को भयंकर मानकर अर्चन-पूजन करते हुए वाराणसी में वास करना चाहिए।

तस्मात्सर्वप्रयत्नेन वाराणस्यां वसेन्नरः।
योगी वाऽप्यथवाऽयोगी पापो वा पुण्यकृत्तमः[2] ॥

चाहे योगी हो अथवा भोगी, पापो हो अथवा पुण्यात्मा, सबके लिए वाराणसो मुक्ति देने वालो है। अतः प्रयत्नपूर्वक वाराणसी में निवास करना चाहिए।

पुण्यानि पापान्यखिलान्यशेषं सार्थं सबीजं च शरीरमार्ये।
इहैव संहृत्य ददामि बोधं यतः शिवानन्दमवाप्नुवन्ति[3] ॥

विश्वनाथ जो कहते हैं कि हे देवि ! काशीवास करने वालों के सम्पूर्ण पुण्य एवं पापों को बीज (मूल) के साथ सशरीर यहीं पर नष्ट करके ज्ञान का उपदेश करता हूँ, जिससे काशो में मृतक प्राणो को शिवानन्द को प्राप्ति होती है।

कृतप्रयत्नोऽप्यकृतप्रयत्नो देहावसाने लभतेऽत्र मोक्षम्[4] ॥

श्रीविश्वनाथ जो कहते हैं कि प्रयत्नपूर्वक अथवा विना प्रयत्न के भी मोक्ष-प्राप्ति के लिए काशीवास करना चाहिए।

सर्वभोगसमायुक्ता नित्यास्तत्र स्थिता जनाः।
सारूप्य-सामीप्य-सार्ष्टिर्मुक्ति कालादवाप्नुयुः[5] ॥

समस्त भौतिक सुखों से लिप्त प्राणी भी यदि काशीवास करते हैं, तो उसे भी सारूप्य, सामीप्य तथा सायुज्य-मुक्ति यथाकाल प्राप्त होती है।

वरमेते पक्षिमृगाः पशवः काशिवासिनः।
येषां न पुनरावृत्तिर्न देवा न पुनर्भवाः[6] ॥

श्रीपराशर ऋषि जो सूत जो से कहते हैं कि काशी में वास करने वाले लोग, पशु, पक्षी और मृग सभी श्रेष्ठ हैं, जिनका यहाँ काशी में मरने से पुनः जन्म नहीं होता, न देवता होते हैं; बल्कि सभी प्राणी काशी में मुक्त हो जाते हैं।

---

१. पद्मपु० ३३।२२; २. वही—३३।६४; ३. सनत्कुमारसंहिता, तीर्थसुधानिधि, पृ० ४५; ४. वही; ५. केदारमाहात्म्य; ६. का० ख० ३।७५।

वाराणस्यां निवसतां यत्पुण्यमुपजायते ।
तदेव संवासयितुः फलं भवति नान्यथा[1] ॥

वाराणसी (काशी) में निवास करने वालों को जो पुण्य मिलता है, वही फल काशीवास कराने वाले सहायक को मिलता है । यह सर्वथा सत्य है । अतः प्रयत्नपूर्वक साधकों को काशीवास कराना चाहिए ।

महापातकयुक्तोऽपि श्रद्धाविरहितोऽपि हि ।
काशीप्रवेशादनघः सम्यक् स्थित्वा सुखी भवेत्[2] ॥

महापातकों से युक्त, श्रद्धारहित (भक्तिहीन) भी काशी में प्रवेश मात्र से निष्पाप हो जाता है और विधिपूर्वक काशीवास करने वाले नर-नारी सुख प्राप्त करते हैं ।

महापापास्तदा स्वर्गं यान्ति साहस्रवत्सरान् ।
पुनः काशीं समासाद्य मुक्ताः स्युः सर्वजन्तवः[3] ॥

महापाप करने वाले व्यक्ति भी हजार वर्ष तक स्वर्ग में निवास करते हैं । पुनः काशी को प्राप्त करके समस्त प्राणी मुक्त हो जाते हैं ।

ये स्थावराः काशिकायां वसन्ति ते सर्वयोगीष्वपि योगनिष्ठाः ।
क्षुब्धं मनो नैव सुखाय यत्र सम्प्राप्यते तत्सुखं शान्तचित्तैः[4] ॥

प्राणिमात्र जो काशी में निवास करते हैं, वे सब योगियों से भी बड़े योगी हैं; क्योंकि उनका मन सुख के लिए कभी क्षुब्ध नहीं होता और वे शान्तचित्त होकर काशी में सुख प्राप्त करते हैं ।

काशीस्थलोको न यमाद् बिभेति न दुःखसङ्घान्न च गर्भवासात् ।
बिभेति चैकान्महतो भयात्परं यन्मानुषं जन्म शिवेन हीनम्[5] ॥

काशी-निवासी लोग यमराज से भी नहीं डरते, न दुःख-समुदाय से और न ही गर्भवास के दुःख से, केवल एकमात्र महाभय (पाप) से दुःखित होते हैं, यदि उनके मन में शिव का नाम नहीं आता है ।

काश्यां सदैव वस्तव्यं स्नातव्योत्तरवाहिनी[6] ।
आनन्दकाननं प्राप्य स्थितेषु ··· ···[7] ॥

शङ्कर जी ने कहा है कि काशी में सदैव निवास करना चाहिए और उत्तर-

---

१. का० रह० २।५५; २. वही—२।६९ ३. वही—२२।७८; ४. वही—३।१० । ५. वही—३।११; ६. काशी-माहात्म्य; ७. का० ख० ५३।६० ।

वाहिनी गङ्गा जी में सदा स्नान करना चाहिए। जो प्राणी आनन्दकानन (काशी) को प्राप्त कर लेते हैं, वे पुनः गर्भ में नहीं आते हैं।

काशी समाश्रिता यैस्तु मनोवाक्कायकर्मभिः।
तानत्र निर्मलधियो निर्वाणश्रीः समाश्रयेत्[1] ॥

मन, वाणी एवं शरीर से सर्वथा तन्मय होकर जो लोग काशी में निवास करते हैं, ऐसे शुद्ध बुद्धि वाले मनुष्यों को मोक्ष-लक्ष्मी स्वयं वरण करती हैं, अर्थात् मोक्ष प्रदान करती हैं।

कुत्रचिच्च शुभं वर्धेत कुत्रचित् पापसंक्षयः।
सर्वेषां कर्मणां नाशो नास्ति काशीपुरीं विना[2] ॥

कितने तीर्थ पुण्य को बढ़ाते हैं तथा कितने तीर्थ पापों का नाश करते हैं, तथापि समग्र कर्मों का नाश काशी के बिना नहीं होता, इसलिए काशीवास ही मुक्ति को देने वाला है तथा काशी समग्र कर्म का नाश करती है, इसलिए भी काशी-सेवन तथा काशीवास मुक्ति को देने वाला है।

वर्त्तते यः काशिकायां सदा जनो न तस्य दुःखं न च विघ्नसङ्गः।
क्षणमिह सज्जनसङ्गतिरेका भवति भवार्णवतरणे नौका ॥

जो मनुष्य सदा काशी में निवास करता है, उसको कोई दुःख नहीं होता, उसे कोई विघ्न नहीं होता है। क्षण भर का भी सज्जन-संग संसार-समुद्र तरने के लिए नाव बनता है। तीर्थसेवा के साथ-साथ यह महाफललाभ होता है। अतः शास्त्र-विधानपूर्वक काशीवास करने वाले व्यक्ति को विघ्न नहीं होता।

हन्यमानोऽपि यो विद्वान् वसेद् विघ्नशतैरपि।
स याति परमं स्थानं यत्र गत्वा न शोचति ॥
जन्ममृत्युजरामुक्तः परं याति शिवालयम्[3] ॥

जो विद्वान् सैकड़ों विघ्नों से बाधित होकर भी अविमुक्त क्षेत्र (काशी) में निवास करता है, वह उस परम पद को प्राप्त करता है, जहाँ जाकर शोक नहीं करना पड़ता। वह जन्म, जरा एवं मरण से रहित होकर शिवलोक को प्राप्त करता है।

१. का० ख० ६४।१०२; २. ज्ञानसंहिता, श्लो० ७२; ३. म० पु० १८४।६३-६४।

कृत्वा वै नैष्ठिकीं दीक्षामविमुक्ते वसन्ति ये ।
तेषां तत्परमं ज्ञानं ददाम्यन्ते परं पदम् ॥
वायुभक्षश्च सततं वाराणस्यां स्थितो नरः ।
यदि पापो यदि शठो यदि चाधार्मिको नरः[1] ॥

शंकर जी कहते हैं कि विश्वनाथ जी तथा काशी के प्रति अनन्य भक्त अथवा ब्रह्मनिष्ठ सन्त से नैष्ठिकी दीक्षा लेकर "काशी कभी भी नहीं छोड़ूँगा" यह संकल्प लेकर जो प्राणी इस अविमुक्त (काशी) में निवास करते हैं, उन प्राणियों को अन्त समय में सर्वोत्तम पाप-पुण्य-क्षयकृत् ज्ञान को देता हूँ, जिससे वे प्राणी आवागमन से मुक्त हो जाते हैं।

गुरुशास्त्रानुभविनीं श्रद्दधुः काशिवासिनः ।
विसृज्य सर्वत्र रतिं काश्यां कुर्यात्सुखावहाम्[2] ॥

गुरु एवं शास्त्रों के प्रति काशीवासियों की सदैव श्रद्धा रहती है। अतः सभी जगह से प्रेम-ममत्व छोड़कर काशी में सदा भक्तियुक्त होकर सुखद प्रेम करना चाहिए; क्योंकि काशी ही भुक्ति-मुक्ति-प्रदात्री है।

सत्सङ्गः श्रवणं विष्णोः काश्यां वासः शिवार्चनम् ।
भवत्येव सतां सङ्गात्सत्सङ्गः शेवधिर्नृणाम्[3] ॥

सत्संग, विष्णु का महत्त्व सुनना, काशी में निवास करना तथा शंकर जी की पूजा करना, काशी में सज्जनों के संग से ही ये सब होते हैं। अतः काशी में रहते हुए प्रतिदिन गंगास्नान, शिवपूजा, कथाश्रवण, यथाशक्ति दान तथा सज्जन-सन्त महापुरुषों के संग से ही जीवन्मुक्ति प्राप्त होती है।

काश्यां कश्चिद् द्विजवरः सनातन इति श्रुतः ।
वेदशास्त्रार्थतत्त्वज्ञः सर्वविद्याविशारदः ॥
पुत्रपौत्रप्रपौत्रादिकुटुम्बसहितः सुखी[4] ॥

पावन काशी नगरी में एक द्विजकुलभूषण श्री सनातन नाम के ब्राह्मण थे। सकलविद्यापारंगत तथा वेद एवं शास्त्रवेत्ता धर्मपरायण दीन-हीन उस ब्राह्मण ने काशीवास के प्रभाव से पुत्र, पौत्र, प्रपौत्र, धन-धान्य तथा सर्वविध सुख प्राप्त किया एवं अन्त में शिवलोक प्राप्त किया।

---

१. का० ख०; २. वही—२४।८०; ३. का० रह० २५।२५; ४. वही—२४।२५।

कायं विज्ञाय सापायं स्मृत्वा गर्भस्य वेदनाम् ।
त्यक्त्वा राज्यमपि प्राज्यं सेव्या काशी निरन्तरम्[1] ॥

शरीर को बाधाओं से युक्त जानकर, गर्भ की वेदना को स्मरण कर तथा श्रेष्ठ राज्य का भी त्याग कर काशीवास करना चाहिए; क्योंकि काशीवास से ही धर्म, अर्थ, काम एवं मोक्ष प्राप्त होता है।

पुत्रपौत्रकलत्राख्यां त्यक्त्वा मायां हि वैष्णवीम् ।
भवान्तरेऽनेकरूपां भवघ्नीं काशिकां श्रयेत्[2] ॥

पुत्र, पौत्र, स्त्री इत्यादि वैष्णवी माया को त्याग कर अनेक प्रकार की भवबाधा का नाश करने वाली काशी का आश्रय लेना चाहिए; क्योंकि संसार-बन्धन से काशी मुक्त करती है।

कालं निकटतो ज्ञात्वा काशीनाथं समाश्रयेत् ।
काशीनाथं समाश्रित्य कुतः कालभयं नृणाम् ॥
काश्यां कालं तथाऽऽयान्तं भाग्यवान् सम्प्रतीक्षते ॥
कलिः कालः कृतं कर्म त्रिकण्टकमितीरितम् ।
एतत्त्रयं न प्रभवेदानन्दवनवासिनाम्[3] ॥

काल को निकटतम जानकर काशी का आश्रय लेना चाहिए, अर्थात् काशीवास करना चाहिए। काशीनाथ के आश्रय से काल का भय कहाँ? काशी में काल को आते-जाते हुए भाग्यवान् ही देखते हैं। कलियुग, काल तथा किया हुआ कर्म, ये त्रिकण्टक कहे गये हैं। ये तीनों काशी-निवास करने वाले के ऊपर प्रभाव नहीं दिखा सकते, अर्थात् काशी में कलि, काल तथा कर्म, इन तीनों की शक्ति नष्ट हो जाती है।

अन्यत्राऽऽशंकितः कालः कलयिष्यत्यसंशयम् ।
कालादभयमिच्छेच्चेत्ततः काशीं समाश्रयेत्[4] ॥

काशी के अतिरिक्त सर्वत्र कालकृत भय होता है, अतः अभयकाम मनुष्य काशी में निवास करें।

ज्ञात्वाऽभ्यसेन्नरो योगमथवा काशिकां श्रयेत्[5] ॥
एक एव हि विश्वेशो मुक्तिदो नान्य एव हि[6] ॥

मनुष्य को योग जानकर योग का अभ्यास अथवा काशीवास करना चाहिए।

---

१. का० ख० २६।१४३; २. वही—२६।१४८; ३. वही—४१।१८५, १८७-१८८।
४. वही—४१।१८९; ५. वही—४२।४०; ६. वही—५१।९।

एकमात्र भगवान् विश्वनाथ ही मुक्तिदाता हैं। अतः जो व्यक्ति काशी आ जाता है, वह मुक्त हो जाता है। अर्थात् काशी में शरीरपात होते ही जीव मुक्त हो जाता है।

कलिकालौ कलयतः काशीस्थान्नेति भाषते।
मृगाणां पक्षिणामित्थं दृष्ट्वा चेष्टां त्रिविष्टपम्[1] ॥

कलि, काल भी लय को प्राप्त हो जाता है, काशीवासियों को देख भी नहीं सकता है। मृगों, पक्षियों की इस बात और चेष्टा को देखकर देवता लोग कहते हैं कि काशीवास करना श्रेष्ठ है।

काशीक्षेत्रनिवासश्च जाह्नवीचरणोदकम्।
गुरुः विश्वेश्वरः साक्षात् तारकं ब्रह्म निश्चयः[2] ॥

काशीवास करने से गङ्गोदक चरणामृत, विश्वेश्वर गुरु तथा तारक मन्त्र ब्रह्म की प्राप्ति होती है। अतः विश्वनाथ जैसे गुरु तथा काशी जैसी मुक्ति-पुरी अन्यत्र प्राप्त नहीं है।

जरया परिभूता ये व्याधिना विकलीकृताः।
येषां क्वापि गतिर्नास्ति तेषां वाराणसी गतिः ॥

जो वृद्धावस्था तथा रोगों से पीड़ित और व्याधि से विकल हो गये हैं, जिनकी कहीं गति नहीं हैं, उनको काशी (वाराणसी) ही एकमेव गति है।

नान्यत्पश्यामि जन्तूनां मुक्त्वा वाराणसीं पुरीम्।
सर्वपापप्रशमनीं प्रायश्चित्तं कलौ युगे[3] ॥

ब्रह्मा जी कार्तिकेय जी से कहते हैं कि वाराणसीपुरी को छोड़कर जीवों के सभी पापों को नष्ट करने का अन्य कोई भी प्रायश्चित्त मैं नहीं देख रहा हूँ। इस कलिकाल में सभी पापों को नष्ट करने के लिए एकमात्र काशीवास ही प्रायश्चित्त है। अस्तु, काशीवास करने से जन्म-मृत्यु रूप प्रायश्चित्त हो जाता है।

काश्यां सदैव वस्तव्यं द्रष्टव्यो बिन्दुमाधवः।
श्रोतव्यमिदमाख्यानं जेतव्या जगतां गतिः[4] ॥

सदैव काशीवास करते हुए बिन्दुमाधव का दर्शन करना चाहिए। काशी-माहात्म्य-कथा को सुनना तथा संसार की गति को जीतना चाहिए। अर्थात् काशीवासी व्यक्ति को मोहशक्ति से मन की गति को जीतना चाहिए।

---

१. का० ख० ३।७२; २. मत्स्यपुराण; ३. का० ख० ६४।९०।
४. का० ख० ११।२४५।

यस्तत्र निवसेद् विप्रोऽसंयुक्तात्मा समाहितः ।
त्रिकालमपि भुञ्जानो वायुभक्षसमो भवेत्[१] ।।

काशी में जो विप्र समाहितचित्त तथा जितेन्द्रिय होकर निवास करता है, वह तीनों काल में भोजन करता हुआ भी वायुभक्षक के समान माना जाता है; क्योंकि वह ब्राह्मण मन, बुद्धि, चित्त तथा अहंकार को समाहित कर लेता है।

योऽत्र मासं वसेद् धीरो लघ्वाहारो जितेन्द्रियः ।
सम्यक् तेन व्रतं चीर्णं दिव्यं पाशुपतं महत्[२] ।।

जो अल्पाहारी तथा जितेन्द्रिय होकर इस काशी में एक मास निवास करता है, उसने अतिदिव्य पाशुपत व्रत पूर्ण कर लिया, ऐसा माना जाता है; क्योंकि इन्द्रियों को जीतकर काशीवास करने का शास्त्रों में बहुत महत्त्व है।

यस्याः प्रसादादन्यास्तु पुर्यो मोक्षं वितन्वते ।
तां काशीं को न सेवेत मोक्षार्थी सर्वदा शुभम्[३] ।।

जिसके कारण अन्य पुरियाँ मोक्ष प्रदान किया करती हैं, ऐसी काशी का मोक्ष चाहने वाला कौन पुरुष सेवन नहीं करेगा, अर्थात् सभी पुरियों में श्रेष्ठ, मोक्ष देने वाली काशीपुरी सबके द्वारा सेवनीय है।

कालभैरवभक्तानां सदा काशीनिवासिनाम् ।
विघ्नं यः कुरुते मूढः स दुर्गतिमवाप्नुयात्[४] ।।

सदैव काशी में वास करने वाले तथा भगवान् कालभैरव के भक्तों के कार्य में (काशीवासजनित अभिलाषा तथा अन्य कार्यों में) जो मूर्ख विघ्न उत्पन्न करता है, वह निश्चितरूपेण अपने लोकद्वय को भक्तद्रोही होने के कारण नष्ट करके दुर्गति को प्राप्त करता है। अतः काशी-विश्वनाथ और कालभैरव के भक्तों को कष्ट देने वाला व्यक्ति संकटग्रस्त होता है तथा उसे काशी छोड़कर भागना पड़ता है।

त्रिरात्रोपोषितस्तत्र ज्ञानं लभ्येत निर्मलम् ।
त्रिरात्रं तत्र कृत्वा वै यो नरः पूजयिष्यति ।।
सर्वपापविनिर्मुक्तो गच्छेच्च परमां गतिम्[५] ।।

काशी में तीन रात निवास करने से निर्मल ज्ञान प्राप्त होता है। तीन रात तक नियम पालन करके जो मनुष्य पूजा करेगा, वह सभी पापों से मुक्त होकर परम

१. म० पु० १८२।१०; २. वही—१८२।१२ ; ३. का० खं० १३।२८।
४. का० खं० ३१।१४८; ५. वही।

गति को प्राप्त करेगा। तीन रात्रि निवास का विधान इस प्रकार है---निर्जल व्रत करके त्रिकाल गङ्गास्नान, त्रिकाल सन्ध्या तथा त्रिकाल शिवपूजा तीन दिन तक करने से ऊपर कहे गये फल प्राप्त होते हैं, चौथे दिन ब्राह्मणों को भोजन कराकर स्वयं भोजन करना चाहिए।

दृशौ कृतार्थे कृतकाशिदर्शने तनुः कृतार्था शिवकाशिवासिनी।
मनः कृतार्थं धृतकाशिसंश्रयं मुखं कृतार्थं कृतकाशिसम्मुखम्॥

जिसने काशी का दर्शन प्राप्त कर लिया, उसकी आँखें कृतार्थ हो गयीं, काशी-निवास से शरीर पवित्र हो गया, काशी का आश्रय लेने से मन कृतार्थ हो गया और काशी का साक्षात्कार करने से मुख कृतार्थ हो गया।

यथा शुक्तौ पयोवाहात् पतिता जलबिन्दवः।
मुक्ताः स्युस्तथा काश्यां स्थिताः सर्वेऽपि जन्तवः[1]॥

जिस प्रकार शुक्ति में आकाश से जल गिरने पर मोती बन जाता है, उसी प्रकार काशीवास करने वाला व्यक्ति भी शिव बन जाता है।

अवश्यं काशिका सेव्या सर्वकर्मनिवारिणी।
मानुष्यं प्राप्य ये मूढा निमेषमितजीवितम्।
न सेवन्ते पुरीं काशीं ते मूढा मन्दबुद्धयः[2]॥

कार्त्तिकेय जी अगस्त्य जी से कहते हैं कि सभी कर्मों का निवारण करने वाली काशी की सेवा अवश्य करनी चाहिए। क्षणभंगुर जीवन वाले मनुष्य-जन्म को प्राप्त कर जो काशीवास नहीं करता है, वह मन्दबुद्धि वाला जीव है।

पापतापाभितप्तानां भूतानामिह जाह्नवी।
पापतापहरा यद्वद् गङ्गा नान्यत्तथा कलौ[3]॥

कलियुग में गंगा के सदृश पाप-ताप का नाश करने वाला अन्य कोई नहीं है। अभितप्त मनुष्यों के लिए गङ्गास्नान तथा गंगाजल-पान से बढ़कर दूसरा साधन नहीं है।

गङ्गायां स्नाति यो मर्त्यो यावज्जीवं दिने दिने।
जीवन्मुक्तः स विज्ञेयो देहान्ते मुक्त एव सः[4]॥

गङ्गा जी में प्रतिदिन स्नान करने वाले व्यक्ति को जीवन्मुक्त जानना चाहिए, मरने पर तो वह मुक्त है ही।

१. लिङ्गपुराण; २. का० ख० ९४।४९; ३. वही—२८।९५।
४. वही—२७।८८।

तिथिनक्षत्रपर्वादि नापेक्ष्यं जाह्नवीजले ।
स्नानमात्रेण गङ्गायां सञ्चिताघं विनश्यति[1] ॥

तिथि, नक्षत्र, पर्व आदि की अपेक्षा गङ्गा जी के जल में स्नान मात्र से व्यक्ति जीवनकृत सञ्चित पापों से मुक्त हो जाता है, अर्थात् जन्म-जन्मान्तर में किये हुए पाप नष्ट हो जाते हैं।

कृमिकीटपतङ्गाद्या ये मृता जाह्नवीतटे ।
कूलात् पतन्ति ये वृक्षास्तेऽपि यान्ति परां गतिम्[2] ॥

शङ्कर भगवान् स्वयं कहते हैं कि कृमि, कीट, पतंग जो भी गङ्गा जी के तट पर मरते हैं तथा वृक्षादिक जो तट से गिर पड़ते हैं, वे सभी परम गति (मोक्ष) को प्राप्त करते हैं।

ज्येष्ठे मासि सिते पक्षे दशम्यां हस्तसंयुते ।
गङ्गातीरे तु पुरुषो नारी वा भक्तिभावतः[3] ॥

शिव जी कहते हैं कि ज्येष्ठ महीने के शुक्ल पक्ष में हस्त-नक्षत्रयुक्त दशमी तिथि को गङ्गा जी में जो पुरुष तथा स्त्री भक्ति-भाव से स्नान करते हैं, वे भी मुक्त हो जाते हैं।

अश्वत्थवटचूतादि वृक्षारोपेण यत्फलम् ।
कूपवापीतडागादिप्रपासत्रादिभिस्तथा ॥
अन्यत्र यद्भवेत्पुण्यं तद् गङ्गादर्शनाद् भवेत् ।
पुष्पवाटयादिभिश्चापि गङ्गास्पर्शं ततोऽधिकम्[4] ॥

अश्वत्थ (पीपल), वट, आम्रादि वृक्षों के रोपने तथा कूप, बावली, तालाब के बनवाने एवं पौसरा, यज्ञादि करने तथा पुष्पवाटिका आदि के लगाने से जो पुण्य होता है, वह पुण्य गङ्गा जी के दर्शन मात्र से होता है। गङ्गा जी के जलस्पर्श से उससे भी अधिक पुण्य होता है।

निशायां जागरं कुर्याद् गङ्गां दशविधैर्हरे ।
पुष्पैः सुगन्धैर्नैवेद्यैः फलैर्दशदशोन्मितैः[5] ॥

रात्रि में गङ्गा जी के घाट पर जागरण करना चाहिए। दश प्रकार के पुष्प, सुगन्ध, फल तथा नैवेद्य से गङ्गा जी की पूजा करनी चाहिए।

---

१. का० ख० २७।८९; २. वही—२७।१३४; ३. वही—२७।१३५।
४. वही—२७।१०१-१०२; ५. वही—२७।१३६।

अन्यत्र यत्कृतं कर्म व्रतं दानं जपस्तपः ।
गङ्गातटे तु तत्सर्वं हरे कोटिगुणं भवेत्[1] ॥

हे हरे ! अन्यत्र किया गया कर्म, व्रत, दान, जप, तप, ये सभी गङ्गातट पर करने से कोटिगुणा अधिक फल प्राप्त होता है।

जन्मर्क्षे तु कृते स्नाने गङ्गायां भक्तिपूर्वकम् ।
जन्मप्रभृतिपापौघात् सञ्चितान्मुच्यते क्षणात्[2] ॥
स्वर्गदा सर्वजन्तूनां महापातकिनामपि[3] ॥

भक्तिपूर्वक गङ्गास्नान करने पर जन्म से उस दिन तक के संचित पाप से तत्क्षण मुक्ति मिलती है और गङ्गा माता सभी जन्तुवों को यहाँ तक कि महापातको को भी स्वर्ग देने वाली हैं।

वैशाखे कार्तिके माघे गङ्गास्नानं सुदुर्लभम् ।
दर्शे शतगुणं पुण्यं सङ्क्रान्तौ च सहस्रकम्[4] ॥

वैशाख, कार्तिक, माघ के महीने में गङ्गास्नान दुर्लभ है। अमावास्या तिथि के दिन गङ्गा जी में स्नान करने वाले व्यक्ति को सौ गुणा अधिक पुण्य प्राप्त होता है तथा संक्रान्ति के दिन स्नान करने से हजार गुणा पुण्य प्राप्त होता है। इसलिए प्रयत्नपूर्वक गङ्गा-दर्शन तथा स्नान करना चाहिए।

श्रद्धया भक्तियुक्तस्तु गङ्गां स्नात्वा विधानतः ।
ब्रह्महाऽपि विशुद्धयेत किं पुनस्त्वन्यपातकी[5] ॥

विधिपूर्वक श्रद्धा-भक्ति से युक्त होकर गङ्गा जी में स्नान करने से ब्रह्महत्यारा भी शुद्ध हो जाता है, अन्य पातकी की बात ही क्या है।

कीदृशी सा महागङ्गा साक्षाच्छम्भुस्वरूपिणी ।
यस्या दर्शनतो मुक्तिर्न जाने स्नानजं फलम्[6] ॥

साक्षात् भगवान् शिव की स्वरूप गङ्गा जी का महत्त्व कितना है, जिसके दर्शन से मुक्ति मिल जाती है, तो फिर स्नान करने से कितनी मुक्ति मिलेगी ?

गङ्गादि सर्वतः पुण्या ब्रह्महत्यापहारिणी ।
वाराणस्यां विशेषेण यत्र चोत्तरवाहिनी[7] ॥

ब्रह्महत्या दूर करने वाली गङ्गा जी सर्वत्र पुण्य प्रदान करने वाली हैं, फिर

१. का० ख० २७।११२ ; २. वही—२७।१२८; ३. वही २८।११८।
४ वही—२७।१२९ ; ५. वही—२७।१३३; ६. केदारमाहात्म्य। ७. भविष्यपुराण।

भी काशी में उत्तरवाहिनी होकर विशेष पुण्य प्रदान करती हैं। जिन नर-नारियों ने उत्तरवाहिनी गङ्गा जी में स्नान करके शिव-पूजन किये, वे तो निहाल ही हो गये।

तत्र सन्निहिता नूनं गङ्गा त्रिपथगा मुने !।
श्रेयोऽर्थी लभते श्रेयो धनार्थी लभते धनम्॥
कामो काममवाप्नोति मोक्षार्थी मोक्षमाप्नुयात्[1]॥

हे मुने ! त्रिपथगा गङ्गा के सदा सन्निकट रहने वाला श्रेयार्थी श्रेय को प्राप्त करता है, धनार्थी धन को प्राप्त करता है, कामार्थी काम तथा मोक्षार्थी मोक्ष को प्राप्त करता है।

सर्वलोकेषु तीर्थानि यानि ख्यातानि तानि च।
सर्वाणि तान्यशेषेण वाराणस्यां तु जाह्नवीम्॥
उत्तराभिमुखीं पुण्यामागच्छन्ति दिने दिने[2]॥

सम्पूर्ण संसार में जितने भी प्रसिद्ध तीर्थ हैं, वे सब वाराणसी में उत्तरवाहिनी पवित्र-पुण्य गङ्गा जी के पास प्रतिदिन आते हैं।

भुक्ति-मुक्तिप्रदा भैशो भक्तस्वर्गापवर्गदा।

भुक्ति-मुक्ति-प्रदात्री यह भागीरथी अपने भक्तों को स्वर्ग तथा अपवर्ग दोनों देती हैं।

ततः शतगुणा प्रोक्ता यत्र पश्चिमवाहिनी।
तस्मात्सहस्रगुणिता काश्यामुत्तरवाहिनी[3]॥

पश्चिम दिशा की ओर बहने वाली गङ्गा में स्नान सौ गुना पुण्यदायक बतलाया गया है और काशी में उत्तरवाहिनी-गङ्गा में स्नान करने वालों को सहस्र गुना फल बतलाया गया है।

उपास्य सन्ध्यां ज्ञानोदे यत्पापं काललोपजम्।
क्षणेन तदपाकृत्य ज्ञानवान् जायते द्विजः[4]॥

काशी की पवित्र गङ्गा के तट पर सन्ध्योपासन करने से बहुत समय का किया हुआ पाप नष्ट हो जाता है और उपासक ब्राह्मण ज्ञानवान् हो जाता है।

१ का० ख० २९।१७४; २. भविष्यपुराण; ३. वही।
४ का० ख० ३३।४४।

आयुरारोग्यजननं सर्वोपद्रवनाशनम् ।
सर्वसिद्धिकरं पुंसां गङ्गानामसहस्रकम् ॥

गङ्गा का सहस्र बार नाम जपने से आयु, आरोग्य प्राप्त होता है तथा यह नाम-जप सभी उपद्रवों को शान्त कर देता है, साथ ही सभी प्रकार की सिद्धियाँ भी प्राप्त हो जाती हैं।

दर्शनात् स्पर्शनात् पानात्तथा गङ्गेति कीर्त्तनात् ।
स्मरणादेव गङ्गायाः सद्यः पापात् प्रमुच्यते ॥

गङ्गा का दर्शन, स्पर्श तथा गङ्गा के गुणों का कीर्तन, गङ्गा का जलपान करने वाले नर-नारी तथा गङ्गा जी का मात्र स्मरण करने वाले मनुष्य पाप से शीघ्र ही मुक्त हो जाते हैं।

तथा सर्वाणि तीर्थानि सप्तपुर्यश्च मानदे ।
वसन्ति काशीमाश्रित्य स्वसामर्थ्यविवृद्धये ॥

हे मानदे ! समस्त तीर्थ तथा सप्त पुरियाँ अपने-अपने सामर्थ्य की अभिवृद्धि के लिए काशी का आश्रयण कर निवास करती हैं। काशी की उत्तरवाहिनी गङ्गा सभी तीर्थों से श्रेष्ठ हैं।

मणिकर्ण्यां कृतस्नानो मणिकर्णीशवीक्षणात् ।
जननीजठरावासे वसेति न लभेन्नरः[1] ॥

मणिकर्णिका तीर्थ में स्नान करके मणिकर्णीश्वर का दर्शन करने वाला व्यक्ति पुनः माता के गर्भ से जन्म नहीं लेता है।

सम्प्राप्य वासरं विष्णोर्विष्णुतीर्थेषु सर्वतः ।
यात्रा कार्या प्रयत्नेन महाफलसमृद्धये[2] ॥

एकादशी तिथि के दिन विष्णु-तीर्थों (पञ्चगङ्गा और मणिकर्णिका) में प्रयत्न-पूर्वक स्नान कर विष्णु-दर्शन-यात्रा करने से महाफल की प्राप्ति होती है।

यथा प्रथमतो यात्रा कर्तव्या यात्रिकैर्मुदा ।
सचैलमादौ संस्नाय चक्रपुष्करिणीजले ॥
सन्तर्प्य देवान् सपितृन् ब्राह्मणांश्च तथार्थिनः[3] ॥

प्रसन्नतापूर्वक यात्री प्रथमतः यात्रा करें, तो उनको सवस्त्र पुष्करिणी (मणिकर्णिका) के जल में स्नान करके देव तथा पितरों का तर्पण कर याचकों तथा ब्राह्मणों को (यथाशक्ति दान देकर) सन्तुष्ट करना चाहिए।

---

१. का० ख० ६१।१०४; २. वही—१००।९८; ३. वही—१००।३६-३७।

पापानि पापिनां हत्वा महान्त्यपि बहून्यपि ।
काशीतीर्थानि मध्याह्ने प्रायश्चित्तचिकीर्षया[1] ॥

मध्याह्न काल में जो पापी-पुरुष पापहानि की भावना से काशी तीर्थ (मणिकर्णिका) में स्नान करता है, उसके महान् से महान् पाप भी तीर्थ (मणिकर्णिका) के प्रभाव से अत्यधिक होने पर भी नष्ट हो जाते हैं ।

कृतनानाविधा धर्मा इष्टापूर्तास्तु तैर्नृभिः ।
वार्धकं समनुप्राप्य प्रापि यैर्मणिकर्णिका[2] ॥

नाना प्रकार धर्म करके बावली इत्यादि को भी बनवाकर बुढ़ापे में जिन लोगों ने मणिकर्णिका को प्राप्त किया है, वे धन्य हैं ।

संस्नातुं सर्वतीर्थानि मुक्तिदां मणिकर्णिकाम् ।
काश्यां रहस्यं परममेतत्ते कथितं मुने[3] ॥

विष्णु जी कहते हैं कि हे मुने ! मुक्ति देने वाली मणिकर्णिका काशी का श्रेष्ठ रहस्य है । जो सब तीर्थों के स्नान का फल होता है, वह फल केवल मणि-कर्णिका-स्नान से ही होता है ।

निर्मलानि भवन्त्येव विगाह्य मणिकर्णिकाम्[4] ॥

मणिकर्णिका में स्नान कर व्यक्ति निर्मल हो जाता है ।

सामान्यसोमवारे तु प्राचीना मणिकर्णिका ।
सर्वपापहरा स्नानात् केदारेशस्य दर्शनात्[5] ॥

प्रत्येक सोमवार के दिन प्राचीन मणिकर्णिका (केदारघाट), जो सब पापों का हरण करने वाली है, में स्नान करने तथा केदारनाथ जी का दर्शन करने से उत्कृष्ट फल मिलता है, अर्थात् मनोरथ पूर्ण होते हैं ।

तस्य दर्शनमात्रेण तत्त्वज्ञानविधायकम् ।
पापक्षयमवाप्नोति सर्वथा नात्र संशयः[6] ॥

मणिकर्णिका कुण्ड के दर्शन मात्र से पाप क्षय हो जाते हैं, स्नान, दर्शन करने वाले मनुष्यों को तत्त्वज्ञान होता है और उसमें स्नान करने से सर्वथा पापक्षय होता है, इसमें संशय नहीं है ।

---

१. का० ख० ६१।५१; २. वही—६१।६५; ३. वही—६१।४५ ।
४. वही—६१।५२; ५. का० रह० ६।७; ६. त्रिस्थलीसेतु ।

मुक्तिक्षेत्राणि सर्वाणि यत्संसेव्योदितं फलम् ।
पञ्चरात्रान्तं तत्रास्तु निषेव्य मणिकर्णिकाम्[1] ॥

अन्य सम्पूर्ण मुक्तिक्षेत्र के सेवन करने से जो फल प्राप्त होता है, उससे दश गुणा अधिक फल जितेन्द्रिय होकर पाँच रात्रि तक मणिकर्णिका घाट में स्नान करके विश्वनाथ आदि देव-मन्दिरों का दर्शन करते हुए काशीवास करने से प्राप्त होता है तथा उस काशीवासी मनुष्य की जहाँ कहीं भी मृत्यु हो, सद्गति होती है।

एवमादीनि तीर्थानि वाराणस्यां स्थितानि वै ।
न शक्यं विस्तराद्वक्तुं कल्पकोटिशतैरपि[2] ॥

इस प्रकार काशी में अनेक तीर्थ स्थित हैं, जिनका विस्तारपूर्वक वर्णन करना कोटि कल्पों में भी कठिन है ।

सर्वपापहरो नृणां काश्यां सर्वोत्तरस्ततः ।
हरणात् सर्वपापानां हरम्पापाख्यतीर्थकम् ॥

काशी में मनुष्यों के समस्त पापों का हरण करने वाला सबसे उत्तर 'हरम्पाय' नाम का तीर्थ है, जो समस्त पापों का हरण करने के कारण 'हरपापा' तीर्थ कहा जाता है।

सर्वतीर्थावगाहाच्च यत्पुण्यं स्यान्नृणामिह ।
तत्पुण्यं कोटिगुणितं मणिकर्ण्येकमज्जनात्[3] ॥

इस लोक में समस्त तीर्थों के स्नान से जो पुण्य मिलता है, वह केवल मणि-कर्णिका कुण्ड में एक बार स्नान करने से मिलता है।

तत्र भागीरथीतीर्थे श्राद्धं कृत्वा विधानतः ।
ब्राह्मणान् भोजयित्वा तु ब्रह्मलोके नयेत्पितृन्[4]॥

विष्णु भगवान् कहते हैं कि भागीरथी तीर्थ में विधान से श्राद्ध करके ब्राह्मण भोजन कराने वाले के पूर्वजों को ब्रह्मलोक को प्राप्ति होतो है ।

ईशानतीर्थे यः स्नात्वा विशेषात्सोमवासरे ।
सन्तर्प्य देवर्षिपितॄन् दत्वा दानं स्वशक्तितः ॥
ततः समर्च्य श्रीलिङ्गं महासम्भारविस्तरैः ।
अत्रापि दत्वा नानार्थान् कृतकृत्यो भवेन्नरः[5] ॥

जो कोई ईशान (ज्ञानवापी) तीर्थ में स्नान करके सोमवार के दिन देव-ऋषि-

---

१. का० रह० २६।९०; २. पद्मपु० ३७।१९; ३. ब्रह्मपुराण ।
४. का० ख० ६१।१६०; ५. वही—३३।४२-४३ ।

पितृ-तर्पण करता है, यथाशक्ति दान करता है तथा बड़े वस्तु-विस्तार से विश्वेश्वर को पूजा और वहाँ पर भी नाना प्रकार के द्रव्यों का वितरण करता है, वह मनुष्य कृतकृत्य हो जाता है।

ज्येष्ठतीर्थे नरः काश्यां दत्वा दानानि शक्तितः।
ज्येष्ठान् स्वर्गानवाप्नोति नरो मोक्षं च गच्छति[1] ॥

मनुष्य काशीस्थ ज्येष्ठ तीर्थ में यथाशक्ति दान देकर सर्वोत्तम स्वर्ग तथा मोक्ष को प्राप्त करता है।

स्नात्वा मत्स्योदरीतीर्थे विलोक्योङ्कारमीश्वरम्।
न जातु जायते जन्तुर्जननीजठरे क्वचित्[2] ॥

मत्स्योदरी (मच्छोदरी) तीर्थ में स्नान कर ओङ्कारेश्वर का दर्शन करने से जीव जन्म-मरण से दूर हो जाता है, फिर कभी भी माँ की गोद में उसे जन्म नहीं लेना पड़ता।

स्नात्वा पिलपिलातीर्थे त्रिविष्टपसमीपतः।
दृष्ट्वा त्रिलोचनं लिङ्गं किं भूयः परिशोचति[3] ॥

पिलपिला तीर्थ में स्नान तथा त्रिविष्टप की पूजा एवं त्रिलोचन शिवलिङ्ग का दर्शन कर लेने पर फिर मनुष्य को क्या सोचना? उसकी मुक्ति निर्विवाद होती है।

पिशाचमोचने स्नात्वा कपर्दीशं समर्च्य च।
कृत्वा तत्रान्नदानं च नरोऽन्यत्रापि निर्भयः[4] ॥

पिशाचमोचन तीर्थ में स्नान तथा कपर्दीश्वर की पूजा एवं वहाँ पर अन्नदान करके मनुष्य अन्यत्र भी निर्भय होकर भ्रमण करता है तथा उसे काशीवास का फल भी प्राप्त होता है।

पैशाचमोचने तीर्थे सम्भोज्य शिवयोगिनम्।
कोटिभोज्यफलं सम्यगेकैकपरिसंख्यया[5] ॥

पिशाचमोचन तीर्थ में शिवयोगियों को भोजन कराने से करोड़ों योगियों को भोजन कराने का पुण्य प्राप्त होता है।

१. का० ख० ६३।१९; २. वही—७३।१५५; ३. वही—७५।१२।
४. वही—५४।७९; ५. वही—५४।८४।
का० मा०—२०

पिशाचमोचनं तीर्थं तदारभ्य महामुने ।
वाराणस्यां परां ख्यातिमगमत्सर्वपापहृत्[१] ॥

तर्ब से लेकर सभी पापों का हरण करने वाला तीर्थ 'पिशाचमोचन' नाम से वाराणसी में परम ख्याति को प्राप्त हुआ ।

मार्गशुक्लचतुर्दश्यां कपर्दीश्वरसन्निधौ ।
स्नात्वाऽन्यत्रापि मरणान्न पैशाच्यमवाप्नुयुः[२] ॥

मार्गशीर्ष (अगहन) शुक्ल चतुर्दशी के दिन कपर्दीश्वर की सन्निधि में स्नान करने वाला व्यक्ति अन्यत्र कहीं भी मृत होने (मरने) पर पिशाचत्व को नहीं प्राप्त होता ।

नरनारायणं तीर्थं नरनारायणात्पुरः ।
तत्र तीर्थे कृतस्नानो नरो नारायणो भवेत्[३] ॥

नारायण से पूर्व उसके आगे नरनारायण (बदरीनारायण घाट) तीर्थ है, उस तीर्थ में स्नान करने पर नर (मनुष्य) भी नारायण हो जाता है ।

काश्यां पञ्चनदं तीर्थमध्यास्यातीवपावनम् ।
भूर्भुवःस्वःप्रदेशेषु काशी परमपावनम्[४] ॥

काशी में पञ्चनद तीर्थ अतीव पावन है तथा भूर्भुवःस्वः प्रदेशों में काशी परम पावन है ।

सर्वाघौघप्रशमनीं सर्वश्रेयोविधायिनीम् ।
यथा पञ्चनदं तीर्थं काश्यां प्रथितिमागतम्[५] ॥

सभी प्रकार के पापों का शमन करने वाला तथा सभी प्रकार का कल्याण करने वाला यह पञ्चनद तीर्थ काशी में प्रसिद्ध है ।

वन्ध्यापि वर्षपर्यन्तं स्नात्वा पञ्चनदे ह्रदे ।
समर्च्य मङ्गलां गौरीं पुत्रं जनयति ध्रुवम्[६] ॥

वर्षपर्यन्त पञ्चनद ह्रद में स्नान तथा मङ्गला-गौरी की अर्चना (उपासना) करने से वन्ध्या स्त्री भी निश्चय ही पुत्र पैदा करने वाली होती है ।

---

१. का० ख० ५४।८३; २. वही—५४।८० ; ३. वही—५८।५४ ।
४. वही—५९।४-५ ; ५ वही—५९।१२-१३; ६. वही—५९।१२७ ।

सुस्नातस्तारके तीर्थे तारकेश्वरदर्शनात् ।
संसारसागरं तीर्त्वा तारयेत्स्वपितॄनपि[1] ॥

विष्णु भगवान् अग्निबिन्दु से कहते हैं कि तारक तीर्थ में स्नान करने तथा तारकेश्वर का दर्शन करने से व्यक्ति संसार-सागर का पार कर अपने पितरों को भी तार देता है ।

रुद्रकुण्डे नरः स्नात्वा दृष्ट्वा रुद्रेश्वरं विभुम् ।
यत्र तत्र मृतो वाऽपि रुद्रलोकमवाप्नुयात्[2] ॥

रुद्रकुण्ड में स्नान तथा रुद्रेश्वर भगवान् का दर्शन कर मनुष्य जहां कहीं भी मरकर रुद्रलोक को प्राप्त करता है ।

पौंश्चल्यजनितो दोषस्तत्तीर्थपरिमज्जनात् ।
क्षणाद् विनाशमागच्छेदरुन्धत्याः प्रभावतः[3] ॥

पुंश्चली स्त्री-जनित दोष उस तीर्थ (वसिष्ठ घाट) में स्नान तथा वसिष्ठेश्वर एवं अरुन्धती का दर्शन करने से अरुन्धती के प्रभाव से तत्क्षण नष्ट हो जाते हैं ।

तत्रैवारुन्धतीतीर्थं स्त्रीणां सौभाग्यवर्धनम् ।
पतिव्रताभिस्तत्तीर्थं गाहनीयं विशेषतः[4] ॥

स्त्रियों के सौभाग्य को बढ़ाने वाला अरुन्धती तीर्थ वहीं पर है, जो पतिव्रता स्त्रियों के द्वारा ग्रहण करने योग्य है ।

वसिष्ठतीर्थं परमं महापातकनाशनम् ।
तर्पयित्वा पितॄंस्तत्र वसिष्ठेशं विलोक्य च[5] ॥

महापातक का नाश करने वाला श्रेष्ठ वसिष्ठ तीर्थ है । उसमें अपने पूर्वजों की कल्याण-कामना से वसिष्ठेश्वर का दर्शन तथा पूजन करके तर्पण करने से पितृ-ऋण से मुक्त होकर मनुष्य निष्पाप हो जाता है ।

नरो न लिप्यते पापैर्जन्मत्रयसमर्जितैः ।
वसिष्ठलोके वसति ब्रह्मतेजःसमन्वितः[6] ॥

जन्मत्रयार्जित पापों से मुक्त होकर तथा ब्रह्म से युक्त होकर मनुष्य महर्षि वसिष्ठ के लोक (सामीप्य) को प्राप्त करता है ।

१. का० ख० ६१।११९ ; २. वही—९७।९१; ३. वही—६१।१६९।
४. वही—६१।१६८; ५. वही—६१।१६६; ६. वही—६१ १६७।

तत्र भागीरथीतीर्थे श्राद्धं कृत्वा विधानतः ।
ब्राह्मणान् भोजयित्वा तु ब्रह्मलोके नयेत्पितॄन्[1] ॥

भागीरथी तीर्थ में विधिपूर्वक श्राद्ध करने से और ब्राह्मणों को भोजन कराने से मनुष्य अपने पितरों को ब्रह्मलोक में पहुँचा देता है ।

अशुभां गतिमापन्ना यस्य पूर्वे पितामहाः ।
तेन भागीरथीतीर्थे तर्पणीयाः प्रयत्नतः[2] ॥
ते ब्रह्मलोके गच्छन्ति तृप्तास्तीर्थे वृषध्वजे ॥
कृते क्षीरमयं तीर्थं त्रेतायां मधुमत्पुनः ।
द्वापरे सर्पिषा पूर्णं कलौ जलमयं भवेत्[3] ॥

जिनके पितामह आदि पहले अशुभ गति को प्राप्त हुए हैं, उन्हें भागीरथी तीर्थ में स्नान करके तर्पण करना चाहिए। शंकर के तीर्थ में तृप्त होकर वे ब्रह्मलोक में जाते हैं। यह तीर्थ सत्ययुग में दुग्धमय, त्रेतायुग में मधुमय, द्वापर में घृतमय था और कलियुग में जलमय है ।

यत्पीत्वा भवबन्धोत्थभयं मुञ्चन्ति मानवाः ।
बहुनात्र किमुक्तेन कालेशे देवि यत्कृतम् ॥
तत्सर्वमक्षयं देवि पुनर्जन्मनि जन्मनि[4] ॥

कालोदक तीर्थ के जल को पीकर मनुष्य भवबन्धन-भय को त्याग देते हैं। अधिक क्या कहा जाय, हे देवि ! इस कालेश्वर मन्दिर के पास जो कुछ भी किया जाय, वह सब जन्म-जन्मान्तर में अक्षय हो जाता है ।

कूपः कालोदको नाम जराव्याधिविघातकृत् ।
तदीयजलपानेन न मातुः स्तन्यपानवान् ॥

कालोदक नाम का यह कूप जरा और व्याधि का नाशक है। इसके जलपान से व्यक्ति पुनः माता का स्तनपान नहीं करता, अर्थात् मुक्त हो जाता है ।

ज्ञानतीर्थञ्च तत्रैव ज्ञानदं सर्वदा नृणाम् ।
कृताभिषेकस्तत्तीर्थे दृष्ट्वा ज्ञानेश्वरं शिवम्[5] ॥

वहीं पर ज्ञान-तीर्थ (ज्ञानवापी) भी है, जो सर्वदा मनुष्यों को ज्ञान देता है। उस तीर्थ में अभिषेक कर ज्ञानेश्वर शिव का दर्शन करने से मनुष्य विष्णुलोक को जाता है ।

---

१. का० ख० ६१।१६०; २. वही—६१।१५९; ३. वही—६२।८२-८३ ।
४. लिङ्गपुराण; ५. का० ख० ६१।१४० ।

ज्ञानोदतीर्थपानीयैर्लिङ्गं यः स्नापयेत्सुधीः ।
सर्वतीर्थोदकैस्तेन ध्रुवं संस्नापितं भवेत्[१] ॥

जो सुधी ज्ञानोदक तीर्थ में जल द्वारा शिव-लिङ्गार्चन (पूजन) करता है, वह सम्पूर्ण तीर्थोदक द्वारा शिवलिङ्ग-स्नान कराने का फल प्राप्त करता है।

प्रयागादधिकं तीर्थं प्रयागं परमं शुभम् ।
विश्वरूपं तथा तीर्थं तालतीर्थमनुत्तमम्[२] ॥

प्रयाग से बढ़कर काशी में प्रयाग क्षेत्र है, वही विश्वरूप तीर्थ तथा सर्वश्रेष्ठ तालतीर्थ भी है।

उपशान्तं शिवं चैव व्याघ्रेश्वरमनुत्तमम् ।
त्रिलोचनं महातीर्थं लोलार्कं चोत्तराह्वयम्[३] ॥

उपशान्त शिव व्याघ्रेश्वर नाम से प्रसिद्ध हैं। यहीं त्रिलोचन तीर्थ तथा लोलार्क तीर्थ भी है।

कपालमोचनं तीर्थं ब्रह्महत्याविनाशनम् ।
शुक्रेश्वरं महापुण्यमानन्दपुरमुत्तमम्[४] ॥

कपालमोचन तीर्थ ब्रह्महत्याविनाशक है। शुक्रेश्वर तीर्थ महापुण्यप्रद तथा आनन्दपुर उत्तम क्षेत्र है।

कम्बलाश्वतरं तीर्थं सर्वविद्याप्रदायकम् ।
तत्र स्नातो भवेन्मर्त्यो गीतविद्याविशारदः[५] ॥

सभी विद्याओं का प्रदान करने वाला कम्बलेश्वर तीर्थ है, जहाँ स्नान करने से मनुष्य गीतविद्या में निपुण हो जाता है।

ततस्तु रामतीर्थञ्च वीररामेश्वराग्रतः ।
तीर्थस्नानमात्रेण वैष्णवं लोकमाप्नुयात्[६] ॥

वीर रामेश्वर के आगे राम-तीर्थ है, जहाँ स्नान कर मनुष्य विष्णुलोक को प्राप्त करता है।

---

१ का० ख० ३३।४९; २. पद्मपु० स्वर्गखण्ड—३७।२; ३. वही—३७।१७।
४. वही—३७।१८; ५. का० ख० ८४।८२; ६. वही—८४।६९।

तत्र ज्ञानह्रदे स्नात्वा दृष्ट्वा ज्ञानेश्वरं नरः ।
ज्ञानं तदधिगच्छेद्वै यत्र नो बाध्यते पुनः[1] ॥

काशी के ज्ञानकुण्ड (ज्ञानवापी) में स्नान कर तथा ज्ञानेश्वर का दर्शन कर मनुष्य ज्ञान प्राप्त करता है, जिसे प्राप्त कर लेने पर मनुष्य को कोई बाधा नहीं होती।

तत्र श्राद्धं नरः कृत्वा पिण्डान् कूपे परिक्षिपेत् ।
एकविंशकुलोपेतः श्राद्धकृद्रुद्रलोकभाक्[2] ॥

वहाँ पर मनुष्य श्राद्ध करके उसी कूप में पिण्डों का प्रक्षेप करे, तो वह २१ कुलों के साथ रुद्रलोक में जाता है।

गौरीकुण्डं यथा तत्र हंसतीर्थं च निर्मलम् ।
यथा मधुस्रवा गङ्गा काश्यां तदखिलं तथा[3] ॥

हिमालय के केदारखण्ड में जिस प्रकार गौरीकुण्ड एवं निर्मल हंसतीर्थ है तथा मधुस्रवा अमृतवाहिनी मन्दाकिनी हैं, वैसे ही काशी (केदारेश्वर तीर्थ) में सब तीर्थ—गौरीकुण्ड, हंसतीर्थ एवं मन्दाकिनी विद्यमान हैं।

कालोदो नाम कूपोऽस्ति तदग्रे सर्वरोगहृत् ।
यैस्तु तत्रोदकं पीतं स्त्रीभिः पुंभिः स्वकर्मभिः[4] ॥

कालेश्वर भगवान् शिव के आगे कालोदक नामक तीर्थ है, जो समस्त रोगों (पापों) को हरण करने वाला है। अपने कर्म में रत जो स्त्री-पुरुष उस जल को पीते हैं, वे परम धाम को प्राप्त करते हैं।

तत्पश्चिमे भैरवेशः कूपस्तस्योत्तरे शुभः ।
तदुदकस्पर्शमात्रेण सर्वयज्ञफलं लभेत्[5] ॥

उसके पश्चिम में भैरवेश्वर हैं तथा उसके उत्तर में एक सुन्दर कूप है, उसके जल-स्पर्श मात्र से समस्त यज्ञों के फल की प्राप्ति होती है।

नदी वाराणसी चेयं जाह्नव्या सह सङ्गता ।
सङ्गमे देवनद्याश्च यः स्नात्वा मनुजः शुचिः ॥
अर्चयेत् सङ्गमेशानं तस्य जन्मभयं कुतः[6] ॥

यह वाराणसी (वरणा और असी) नाम की नदी, जो गङ्गा से मिली हुई है, इस देवनदी में जो मनुष्य स्नान कर एवं पवित्र होकर (अस्सी घाट पर) सङ्गमेश्वर का पूजन करता है, उसे पुनर्जन्म का भय नहीं होता है।

१. का० ख० ८४।५८; २. वही—९७।९३; ३. वही—७७।४७।
४. वही—९७।१२५; ५. वही—९७।१४१; ६. तीर्थचिन्तामणि।

तत्रैव तस्थौ भक्तानां भक्षयन्नघसन्ततिम् ।
पापभक्षणमासाद्य कृत्वा पापशतान्यपि ॥
कुले बिभेति पापेभ्यः कालभैरवसेवकः[1] ॥

भक्तों की पापराशियों का भक्षण करते हुए भगवान् कालभैरव वहां निवास करते हैं। पापभक्षक तीर्थ को प्राप्त कर सैकड़ों पाप करके भी कालभैरव के भक्त पापों से कैसे डर सकते हैं ?

पीतमात्रेण तेनैव उदकेन यशस्विनि ।
त्रीणि लिङ्गानि वर्द्धन्ते हृदये पुरुषस्य तु ॥
मुक्तिदौ तौ तु सर्वेषां येऽपि दुष्कृतिनो नराः[2] ॥

शङ्कर जो पार्वती जी से कहते हैं—हे यशस्विनि ! यहां के जल को पीने मात्र से ही मनुष्य के हृदय में तीनों सिद्धि देने वाले लिङ्ग बढ़ते हैं। भले ही मनुष्य पापी हो, किन्तु वे दोनों सभी को मुक्ति देने वाले हैं।

तं नैर्ऋत्यां च व्यासेशः कूपश्च विमलोदकः ।
व्यासकूपे नरः स्नात्वा तर्पयित्वा सुरान्पितॄन् ॥
अक्षयं लभते लोकं यत्र कुत्राभिकाङ्क्षितम्[3] ॥

उसके नैर्ऋत्य कोण में व्यासेश्वर तथा विमलोदक नामक कूप हैं। मनुष्य व्यास-कूप में स्नान कर तथा देव-पितरों का तर्पण कर जहां कहीं भी मनोवाञ्छित फल प्राप्त कर अक्षय लोक को प्राप्त करता है।

ततो भागीरथेस्तीर्थं ब्रह्मनालाच्च दक्षिणे ।
तत्र स्नात्वा नरः सम्यङ् मुच्यते ब्रह्महत्यया[4] ॥

विष्णु भगवान् अग्निबिन्दु से कहते हैं कि ब्रह्मनाल के दक्षिण तरफ भागीरथी तीर्थ है। उस तीर्थ में स्नान करके भागीरथेश्वर का अर्चन करने से मनुष्य ब्रह्महत्या से मुक्त हो जाता है।

लोलार्के रथसप्तम्यां स्नात्वा गङ्गासिसङ्गमे ।
सप्तजन्मकृतैः पापैर्मुक्तो भवति तत्क्षणात्[5] ॥

गङ्गा-अस्सी सङ्गम पर स्थित जो लोलार्क कुण्ड है, उसमें रथसप्तमी के दिन स्नान करने से सात जन्मों के पापों से तत्काल मुक्ति हो जाती है।

---

१. का० ख० ; २. कू० क० त०; ३ का० ख० ९७।१४३-१४४।
४. वही—६१।१५७ , ५. वही—४६।५५ ।

नरः स्नात्वाऽसिसम्भेदे सन्तर्प्य पितृदेवताः ।
श्राद्धं विधाय विधिना पित्रानृण्यमवाप्नुयात्[1] ॥

अस्सी एवं गङ्गा के संगम स्थल पर स्नान एवं तर्पण करने से मनुष्य पितृ-ऋण से मुक्त हो जाता है।

लिङ्गं दशाश्वमेधाख्यं दृष्ट्वा वै दशमीतिथौ ।
दशजन्मार्जितैः पापैर्मुच्यते नात्र संशयः ॥
स्नात्वा दशम्यां च यः पूजयेल्लिङ्गमुत्तमम्[2] ॥

गङ्गा-दशहरा के दिन जो मनुष्य दशाश्वमेध घाट पर विधिवत् स्नान करके श्रद्धापूर्वक शिव-पूजन करता है, तो यह निश्चय सत्य है कि वह दश जन्मों के विविध प्रकार के पापों से मुक्त हो जाता है।

काश्यां कश्चिद्यमे तीर्थे कृत्वा स्नानं महामतिः ।
अपि यस्तर्पणं कुर्यात् सलिलं नो विमुक्तये[3] ॥

काशी में यदि कोई व्यक्ति यम-तीर्थ (संकठा घाट) में विधिवत् स्नान करके पितरों को प्रसन्नता के निमित्त यम तथा अपने पूर्वजों का तर्पण करता है, तो निश्चित ही वह जल (तर्पण) मुक्ति में सहायक होता है।

अतः पञ्चनदं नाम तीर्थं त्रैलोक्यविश्रुतम् ।
तत्राप्लुतो न गृह्णीयाद्देहं ना पाञ्चभौतिकम्[4] ॥

जो व्यक्ति पुनर्जन्म-विमुक्ति की कामना से त्रैलोक्यविख्यात पञ्चनद नामक तीर्थं में यदि विधिवत् स्नान करता है, तो उसको तीर्थ-प्रभाव से निश्चित रूप से पुनः पञ्चभूत के द्वारा निर्मित देह को प्राप्ति नहीं होती।

तत्रैव तीर्थं परमं कपालेशसमीपतः ।
कपालमोचनं नाम तत्र स्नातोऽश्वमेधभाक्[5] ॥

कपालेश्वर के समीप कपालमोचन नामक श्रेष्ठ तीर्थं है, जहाँ स्नान करने वाला व्यक्ति अश्वमेध यज्ञ के फल को प्राप्त करता है।

इदं तीर्थं पापहरं सप्तजन्माघनाशनम् ।
गङ्गायां मिलितं पश्चाज्जन्मकोटिकृताघहम्[6] ॥

यह पापहर नामक तीर्थं सात जन्मों के पापों का विनाशक है। (केदारघाट पर स्थित) यह तीर्थं बाद में जब गङ्गा जो से मिल गया, तब से करोड़ों जन्मों के पापों को दूर करने वाला हो गया।

---

१. का० ख० ४६।५२; २. वही—५२।९१-९२ ३. वही—५१।११३।
४. वही—५९।११६; ५. वही—९७।६५; ६. वही—७७।४८।

केदारं गन्तुकामस्य बुद्धिर्देया नरैरियम् ।
काश्यां स्पृशंस्त्वं केदारं कृतकृत्यो भविष्यसि[1] ॥

विद्वान् या साधारणजन को चाहिये कि केदारघाट में स्नान करके यदि कोई जाने की इच्छा करता है, तो उसे यह प्रेरणा या बुद्धि दें कि काशी में केदारेश्वर का स्पर्श करते ही आप कृतकृत्य हो जायेंगे।

अमासोमसमायोगे श्राद्धं यद्यत्र लभ्यते ।
तीर्थे कापिलधारेऽस्मिन् गयया पुष्करेण किम्[2] ॥

सोमवती अमावास्या के दिन चन्द्रमा के योग में यदि काशी में कपिलधारा तीर्थ या चन्द्रकूप में पिण्डदान किया जाय, तो गया और पुष्कर क्षेत्र जाने की आवश्यकता नहीं है।

दिव्यान्तरिक्षभौमानि यानि तीर्थानि सर्वतः ।
तान्यत्र निवसिष्यन्ति दर्शे सोमदिनान्विते[3] ॥

स्वर्ग और भूमि पर जो भी दिव्य तीर्थ हैं, वे सभी सोमवती अमावास्या को काशी में निवास करते हैं। अतः सोमवती अमावास्या को सभी तीर्थाभिलाषियों को काशी का दर्शन करना चाहिए।

तीर्थं पिलपिलाख्यं वै मनोमलविनाशनम् ।
ततो भैरवतीर्थञ्च महाघौघक्षयप्रदम् ॥
चतुरर्थोदयकरं सर्वविघ्ननिवारणम्[4] ॥

मन के मैल को दूर करने वाला पिलपिला नामक तीर्थ है। उससे भी उत्तम महापापों के समूह को विनष्ट करने वाला भैरव तीर्थ है, जो चारों पुरुषार्थों को प्रदान करने वाला एवं विघ्नों का निवारक है।

प्रातः सोमकुहूयोगे स्नात्वा चन्द्रोदवारिभिः ।
उपास्य सन्ध्यां विधिवत्कृतसर्वोदकक्रियः ॥
उपचन्द्रोदतीर्थेषु श्राद्धं विधिवदाचरेत्[5] ॥

सोमवती अमावास्या के दिन प्रातःकालीन सन्ध्या आदि नित्यकर्मों का विधिवत् पालन करके, चन्द्रकूप में विधिवत् स्नान करके अपने पूर्वजों (पितरों) की मंगल-

---

१. का० ख० ७७।६०; २. वही—६२।५७; ३. वही—६२।५९।
४. वही—८४।४६; ५. वही—१४।५०-५१।

कामना से विधिवत् श्राद्ध करना चाहिए। चन्द्रकूप में पिण्डदान करने से पितर प्रसन्न होते हैं, साथ ही तृप्त और मुक्त हो जाते हैं।

कुर्वञ्छ्राद्धं च तीर्थेऽस्मिन् श्रद्धयोद्धरतेऽखिलान्।
गयायां पिण्डदानेन यथा तुष्यन्ति पूर्वजाः॥

जैसे गया में विधिवत् श्राद्ध करने से पितरों को कल्याण के साथ तृप्ति होती है, वैसे ही चन्द्रकूप नामक तीर्थ में भी श्राद्ध करने से पूर्वजों का तृप्ति के साथ कल्याण होना पूर्ण निश्चित है।

यतः पापानि भक्तानां भक्षयिष्यति तत्क्षणात्।
पापभक्षण इत्येव तव नाम भविष्यति॥
या मे मुक्तिपुरी काशी सर्वाभ्योऽपि गरीयसी[1]॥

प्रणव ऋषि अथर्व ऋषि से बोले कि हे मुने! पापियों के सभी पाप 'काशी' एक क्षण में भक्षण (समाप्त) कर लेती है। इसलिए काशी का 'पाप-भक्षिणी' उपनाम होगा। सभी तीर्थों से उत्तम तीर्थ काशी ही है।

प्रयागतीर्थे सुस्नातो दृष्ट्वा पापैः प्रमुच्यते।
प्रयागगमने पुंसां यत्फलं तपसि श्रुतम्।
तत्फलं स्याद्दशगुणमत्र स्नात्वा ममाग्रतः[2]॥

भगवान् शङ्कर जी कहते हैं कि प्रयाग तीर्थ में स्नान करने से मनुष्य के समस्त पाप मुक्त (नष्ट) हो जाते हैं। माघ मास में प्रयाग संगम में स्नान करने से जो फल मिलता है, उससे दस गुना फल मेरे तीर्थ (काशी के प्रयागराज) में स्नान करने से मिलता है।

दशाश्वमेधिकं प्राप्य सर्वतीर्थोत्तमोत्तमम्।
यत्किञ्चित् क्रियते कर्म तदक्षयमिहेरितम्[3]॥

सभी तीर्थों में उत्तम तीर्थ दशाश्वमेध घाट में आकर जो कोई भी कार्य किये जाते हैं, वे सभी अक्षय हो जाते हैं।

माघमासमथोपोष्य ततो वाराणसीं गतः।
दशाश्वमेधं गङ्गायां तीर्थे सुरग्रहादिषु[4]॥

माघ मास में उपवास कर वाराणसी (काशी) में दशाश्वमेध तीर्थ में

---

१. का० ख० ३१।४५-४६; २. वही—६१।३०।
३. वही—५२।८४; ४. वामनपुराण।

स्नान तथा समस्त पापापहारक सुरालयों (मन्दिरों) में पितृ, देवताओं की पूजा तथा काशी की परिक्रमा एवं अविमुक्तेश्वर और केशव भगवान् की पूजा करनी चाहिए।

यैस्तु तत्रोदकं पीतं नरैः स्त्रीभिश्च कर्मभिः।
न तेषां परिवर्त्तो वै कल्पकोटिशतैरपि[1] ॥

जिन्होंने कालोदक कूप का जल-पान किया, चाहे वे स्त्री हों या पुरुष, उनका सैकड़ों कोटि कल्प तक पुनः संसार में आगमन नहीं होता है। (कालभैरव मुहल्ले में दण्डपाणि के बगल कालोदक तीर्थ-कुण्ड तथा कालेश्वर का मन्दिर है।)

कृतकूपोदकस्नानः कृतैतल्लिङ्गपूजनः ।
वर्षेण सिद्धिमाप्नोति मनोऽभिलषितां नरः ॥

कालोदक कूप में स्नान कर तथा कालेश्वर का पूजन कर मनुष्य एक वर्ष में ही अपनी मनोवाञ्छित सिद्धि को प्राप्त करता है।

सचैलमादौ संस्नाय चक्रपुष्करिणीजले ।
सन्तर्प्य देवान् सपितॄन् ब्राह्मणांश्च तथार्थिनः[2] ॥

प्रथम चक्रपुष्करिणी तीर्थ में समस्त वस्त्रों सहित स्नान कर देवताओं तथा पितरों का पूजन तथा ब्राह्मणों एवं याचकों को दक्षिणा देनी चाहिए।

भवानीं ढुण्ढिराजं च दण्डपाणिं च भैरवम् ।
पूजयेन्नित्यशः काश्यां सूक्ष्मपापाभिभूतये[3] ॥

सूक्ष्म पापों का नाश करने के लिए काशी में भवानी, ढुण्ढिराज, दण्डपाणि तथा कालभैरव का नित्य दर्शन-पूजन अपेक्षित है। अर्थात् प्रयत्नपूर्वक दर्शन-पूजन करना चाहिए।

सर्वपापहरो नॄणां काश्यां सर्वोत्तरस्ततः ।
हरणात् सर्वपापानां हरम्पापाख्यतीर्थकम् ॥

काशी में मनुष्यों के समस्त पापों का हरण करने वाला सबसे उत्तर हरपाप तीर्थ है, जो समस्त पापों का हरण करने के कारण 'हरम्पाप' कहा जाता है। पापों को हरने वाला यह तीर्थ केदारघाट में है।

जीविते वाक्यकरणात् क्षयाऽह्नि भूरिभोजनात् ।
गयायां पिण्डदानैश्च त्रिभिर्पुत्रस्य पुत्रता ॥

पिता जब तक जीवित हैं, उनकी बातें मानें, उनके मरने पर पर्याप्त भोज-

१. लिङ्गपुराण ; २. का० ख० १००।३७; ३. पद्मपुराण।

भण्डारा करें तथा गया में पिण्डदान करें। यह तीनों कार्य करने से पुत्र का पुत्रत्व सार्थक हो जाता है और वह पितृ-ऋण से मुक्त हो जाता है।

पिशाच ! ते पिशाचत्वं तीर्थस्यास्य प्रभावतः ।
कपर्दीशेक्षणादद्य क्षणात्क्षीणं विनङ्क्ष्यति[1] ।।

स्वामिकार्तिक ने ब्रह्मराक्षस से कहा—अये ब्रह्मराक्षस ! इस पिशाचमोचन तीर्थ के प्रभाव से तथा स्नानजनित पुण्य से एवं भगवान् कपर्दीश्वर के दर्शन से तुम्हारा पाप क्षणमात्र में नष्ट हो जायेगा।

पिशाचमोचनं तीर्थमद्यारभ्य समाख्यया ।
अन्येषामपि पैशाच्यमिदं स्नानाद्धरिष्यति[2] ।।

आज से यह तीर्थ पिशाचमोचन नाम से विख्यात होगा। दूसरे भी पिशाचों का पिशाचत्व इसमें स्नान करने से छूट जायेगा।

अस्मिंस्तीर्थे महापुण्ये ये स्नास्यन्तीह मानवाः ।
पिण्डांश्च निर्वपिष्यन्ति सन्ध्यातर्पणपूर्वकम्[3] ।।

इस पिशाचमोचन तीर्थ में सन्ध्या-तर्पण तथा स्नानपूर्वक सद्गति-कामना से पिण्डदान करने पर मनुष्य अपने पूर्वजों को सद्गति प्राप्त करा सकता है।

दुर्गाकुण्डे नरः स्नात्वा सर्वदुर्गार्तिहारिणीम् ।
दुर्गां सम्पूज्य विधिवन्नवजन्माघमुत्सृजेत्[4] ।।

दुर्गाकुण्ड में स्नान कर तथा सभी दुर्गतियों का हरण करने वाली दुर्गा जी की विधिवत् पूजा करके मनुष्य नव जन्मों के संचित पापों से मुक्त हो जाता है।

स्नानं दानं तपः श्राद्धं पिण्डनिर्वपणं त्विह ।
एकैकशः कृतं विप्राः पुनात्यासप्तमं कुलम्[5] ।।

हे विप्रों ! इस काशीपुरी में स्नान-दान-तप-श्राद्ध तथा पिण्डदान में से एक भी कार्य किये जाने पर सात कुलों तक पवित्रता हो जाती है।

अतो ज्ञानोदनामैतत्तीर्थं त्रैलोक्यविश्रुतम् ।
अस्य स्पर्शनमात्रेण सर्वपापैः प्रमुच्यते[6] ।।

अतः ज्ञानोद (ज्ञानवापी) नामक यह तीर्थ त्रिलोक में विख्यात है। इसके स्पर्श मात्र से मनुष्य सभी पापों से मुक्त हो जाता है।

---

१. का० ख० ५४।५६; २. वही—५४।७४; ३. वही —५४।७५।
४. वही—७२।८७; ५. कूर्मपुराण; ६. का० ख० ३३।३३।

महारोगात्प्रमुच्येत तत्र स्नात्वाऽरुणोदये ।
साम्बादित्यं प्रपूज्यापि धर्ममक्षयमवाप्नुयात्[1] ॥

स्कन्द जी कहते हैं कि अरुणोदय के समय में सूर्यकुण्ड में स्नान करने से महारोग से मुक्ति होती है तथा साम्बादित्य की पूजा कर मनुष्य अक्षय पुण्य का भागी होता है ।

स्नात्वा पञ्चनदे तीर्थे कृत्वा च पितृतर्पणम् ।
बिन्दुमाधवमभ्यर्च्य न भूयो जन्मभाग्भवेत्[2] ॥

पञ्चनद (पञ्चगङ्गा) तीर्थ में स्नान कर पितरों का तर्पण करके विन्दुमाधव की पूजा करने के बाद मनुष्य को पुनः जन्म ग्रहण नहीं करना पड़ता ।

तीर्थान्तराणि कलुषाणि हरन्ति सद्यः
श्रेयो ददत्यपि बहु त्रिदिवं नयन्ति ।
पानावगाहनविधानतनुप्रहाणै-
र्वाराणसी तु कुरुते बत मूलनाशम्[3] ॥

अन्य तीर्थों में स्नानादि करने से प्राणियों के पाप तत्काल नष्ट हो जाते हैं और पुण्यलाभ होने से स्वर्ग की प्राप्ति भी होती है । पुण्य क्षीण होने पर पुनः मर्त्यलोक में आने का भय रहता है; परन्तु काशीपुरी में भागीरथी गङ्गा में स्नान और गङ्गाजल-पान तथा काशी में जन्म लेने एवं शरीर का त्याग करने से तो यह जन्म-मृत्यु रूप भवसागर का मूल ही नष्ट हो जाता है, अतः वह प्राणी शिवस्वरूप होकर मोक्ष पद को प्राप्त हो जाता है ।

पतन्ति जाह्नवीतोयं नराणां पुण्यकर्मणाम् ।
तावदब्दसहस्राणि स्वर्गलोके महीयते ॥

मनुष्यों के मुण्डन-संस्कार में जितनी संख्या में नख और केश (बाल) गङ्गा जी में गिरते हैं, उतने हजार वर्ष तक वे स्वर्गलोक में निवास करते हैं । अस्तु, इसी प्रकार सम्पूर्ण विश्व से मनुष्यों की हड्डी को लेकर लोग काशी में गङ्गा जी में छोड़ते हैं । जिसकी हड्डी गङ्गा जी में हो, वह व्यक्ति हजारों वर्ष तक स्वर्ग में निवास करता है ।

---

१. का० ख० ४८।५१;   २. वही—५९।१२०;   ३. वही—३०।८३ ।

सुधामय्यो महौषध्यः क्षिप्तास्तत्र महाधियः ।
तत्कुण्डस्नानतस्तस्मात्तल्लिङ्गपरिवीक्षणात् ॥
नश्यन्ति व्याधयः सर्वाः सह पापैः सुदारुणैः[1] ॥

वहाँ अमृतमय अनेक महौषधियाँ डाली गयी हैं। उस अमृततीर्थ के कुण्ड में स्नान करने से तथा महाकालेश्वर शिवलिङ्ग का दर्शन करने से दारुण पापों के साथ समस्त व्याधियाँ नष्ट हो जाती हैं। (धन्वन्तरिकुण्ड को अमृतकुण्ड कहते हैं। यह दारानगर मुहल्ले में है।)

कपालमोचनं तीर्थमभूद्धत्याविनाशनम् ।
मद्भक्तास्तत्र गच्छन्ति विष्णुभक्तास्तथैव च[2] ॥

कपालमोचन तीर्थ ब्रह्महत्या का नाशक है। मेरे भक्त तथा विष्णुभक्त भी वहाँ जाते हैं तथा स्नान कर कपालभैरव, कपालेश्वर का दर्शन करके पापों का प्रायश्चित्त करते हैं।

गोपीगोविन्दतीर्थे तु गोपीगोविन्दसंज्ञकम् ।
समर्च्यमान्नरो भक्त्या मम मायां न संस्पृशेत् ॥

विष्णु भगवान् कहते हैं कि गोपीगोविन्द तीर्थ में स्नान करके गोपीगोविन्द की पूजा करने वाले नर-नारी मेरी माया से छूट जाते हैं।

मणिकर्ण्यम्बुभिर्येन तर्पिताः प्रपितामहाः ।
तेन श्राद्धानि दत्तानि गयायां मधुपायसैः[3] ॥

मणिकर्णिका तीर्थ में जिस मनुष्य ने अपने पूर्वजों का विधिवत् तर्पण किया है, उसने मानो गया तीर्थ में मधु-पायस से अपने पूर्वजों का विधिवत् श्राद्ध कर लिया है।

तथा च सर्वावभृथैर्यैः स्नाता मणिकर्णिका ।
तै सुराः पूजिताः सर्वे ब्रह्मविष्णुमुखा मखैः[4] ॥

जिन्होंने मणिकर्णिका तीर्थ में स्नान कर लिया, उन्होंने मानो सम्पूर्ण यज्ञों के अन्त में होने वाले अवभृथ स्नान-पूर्वक सम्पूर्ण इन्द्रादि देवता के साथ ब्रह्मा, विष्णु तथा रुद्रादि का पूजन कर लिया।

---

१. का० ख० ९७।१३९; २. मत्स्यपुराण—१८३।१०३; ३ का० ख० ८४।९२। ४. वही—८४।९४-९५।

सेविता श्रद्धया येन श्रीमती मणिकर्णिका ।
दत्त्वा दानानि भूरीणि मखानिष्ट्वा तु भूरिशः[१] ॥

जिन्होंने श्रद्धापूर्वक श्रीमती मणिकर्णिका की सेवा की है, अनेक प्रकार के दान दिये हैं, जिन्होंने बहुत से यज्ञ सम्पादित किये हैं, वे अवश्य मुक्ति प्राप्त करते हैं।

ततो वाराणसीं गत्वा देवमर्च्य वृषध्वजम् ।
कपिलाह्लदमुपस्पृश्य राजसूयफलं लभेत्[२] ॥

उसके पश्चात् वाराणसी के कपिलधारा तीर्थ में जाकर वृषध्वज भगवान् शंकर की पूजा कर यदि कपिल-सरोवर में स्नान करे, तो उसे राजसूय यज्ञ करने का फल प्राप्त होता है।

तथा चन्द्रोदकुण्डेऽत्र श्राद्धैस्तृप्यन्ति पूर्वजाः ।
गयायां च यथा मुच्येत्सवर्णात्पितृजान्नरः[३] ॥

जिस प्रकार गया में विधिवत् श्राद्ध करने से पूर्वजों को अक्षय तृप्ति होती है, उसी प्रकार काशी में चन्द्रकूप में स्नान करके श्रद्धापूर्वक श्राद्ध करने से पूर्वजों को सद्‌गति प्राप्त होती है।

तत्र पञ्चनदे तीर्थे यत्किञ्चिद्दीयते वसु ।
कल्पक्षयेऽपि न भवेत्तस्य पुण्यस्य संक्षयः[४] ॥

पञ्चनद तीर्थ में यदि थोड़ा भी धन दान दिया जाय, तो उससे प्राप्त पुण्य का कल्प के नष्ट हो जाने पर भी विनाश नहीं होता। यह पञ्चनद-तीर्थ पञ्चगङ्गा घाट पर है।

येन पञ्चनदे स्नातं कार्तिके पापहारिणि ।
स्नातो विदारयेत्तत्र पापं जन्मशतार्जितम् ॥

जो व्यक्ति पापों को दूर करने वाले पञ्चनद तीर्थ में कार्तिक मास में स्नान करता है, वह स्नान मात्र से सौ जन्मों के पापों से मुक्त हो जाता है।

यैर्न पञ्चनदे स्नातं कार्तिके पापहारिणि ।
तेऽद्यापि गर्भे तिष्ठन्ति पुनस्ते गर्भवासिनः[५] ॥

जो लोग कार्तिक मास में पापहारी पञ्चनदतीर्थ में स्नान नहीं करते, वे आज तक गर्भ में वास कर रहे हैं और वे फिर भी गर्भवासी ही बने रहेंगे।

१. का० ख० ८४।९७-९८; २. महाभारत-वनपर्व; ३. का० ख० १४।५५।
४. वही—५९।१२९; ५. वही—५९।१३५।

अस्मिन् पञ्चनदीनां च सम्भेदेऽघौघभेदिनि ।
स्नानमात्रात्प्रयात्येकं भित्त्वा ब्रह्माण्डमण्डपम्[१] ॥

यहाँ पाँच नदियों का संगम है, जहाँ की पृथिवी पापों को दूर कर देने वाली है। यहाँ स्नान मात्र से ब्रह्माण्ड का भेदन कर मनुष्य मुक्त हो जाता है।

प्रयागे माघमासे तु सम्यक् स्नातस्य यत्फलम् ।
तत्फलं स्याद्दिनैकेन काश्यां पञ्चनदे ध्रुवम्[२] ॥

माघ मास में प्रयाग में भलीभाँति स्नान करने का जो फल होता है, वह काशी के पञ्चनद तीर्थ (पञ्चगङ्गा) में मात्र एक बार स्नान करने से प्राप्त हो जाता है।

यावत्सङ्ख्यास्तिला दत्ताः पितृभ्यो जलतर्पणे ।
पुण्ये पञ्चनदे तीर्थे तृप्तिः स्यात्तावदाब्दिकी[३] ॥

अत्यन्त पवित्र पञ्चनद तीर्थ में पितरों के तर्पण में जितनी संख्या में तिल दिये जाते हैं, उतने वर्षों तक पितरों की तृप्ति होती है। अतः पञ्चनद तीर्थ में प्रयत्नपूर्वक पितरों का श्राद्ध आदि करना चाहिए।

पिशाचमोचनं तीर्थं तदारभ्यमहामुने ।
वाराणस्यां परां ख्यातिं लब्धवान् पितृमोचनात्[४] ॥

तब से लेकर पिशाचमोचन नाम से वह तीर्थ विख्यात हुआ। समग्र पापों को हरने वाला वाराणसी में पिशाचमोचन नाम से विख्यात् तीर्थ हुआ।

कार्त्तिके बिन्दुतीर्थे यो ब्रह्मचर्यपरायणः ।
स्नास्यत्यनुदिते भानौ भानुजात्तस्य भीः कुतः[५] ॥

जो ब्रह्मचर्यपूर्वक कार्तिक मास में सूर्योदय के पूर्व ही काशी के बिन्दु तीर्थ में स्नान कर लेगा, उसे यमराज का भय कहाँ?

अपि पापसहस्राणि कृत्वा मोहेन मानवः ।
ऊर्जे धर्मनदे स्नातो निष्पापो जायते क्षणात्[६] ॥

जिसने मोहवश हजारों पाप किये हों, ऐसा मनुष्य भी यदि कार्त्तिक मास में श्रद्धापूर्वक धर्म नदी (गंगा) में स्नान करता है, तो उसके सम्पूर्ण पापसमूह का तत्काल विनाश हो जाता है।

---

१. का० ख० ५९।११७; २. वही—५९।११९; ३. वही—५९।१२१।
४. वही—५४।८३; ५. वही—६०।७३; ६. वही ६०।१७४।

येऽत्र पञ्चनदे स्नात्वा गत्वा देशान्तरेष्वपि ।
नराः पञ्चत्वमापन्ना मुक्तिं तेभ्योऽपि वै दिश[1] ॥

जो लोग पञ्चनद तीर्थ में स्नान कर देशान्तर में जाकर मर भी जाते हैं, उनकी मुक्ति इस तीर्थ के स्नानजनित प्रभाव से वहाँ भी हो जाती है ।

तत्र स्नात्वा विधानेन भवानीं परिपूज्य च ।
दुकूलै रत्ननेपथ्यैर्नैवेद्यैर्बहुविस्तरैः ।
पुष्पैर्धूपैः प्रदीपैश्च भवानीशौ प्रपूज्य च[2] ॥

विष्णु भगवान् अग्निबिन्दु से कहते हैं कि मणिकर्णिका तीर्थ में स्नान कर विधिपूर्वक दुपट्टा, रत्न, आभूषणों से भवानी की पूजा करनी चाहिए तथा पुष्प, धूप, दीप तथा नैवेद्य से भी शङ्कर, भवानी की पूजा करनी चाहिए ।

ज्येष्ठवाप्यां नरः स्नात्वा तर्पयित्वा पितामहान् ।
ज्येष्ठेश्वरं समालोक्य न भूयो जायते भुवि[3] ॥

स्कन्द जी अगस्त्य जी से कहते हैं कि ज्येष्ठ वापी में स्नान कर पूर्वजों का तर्पण कर जो मनुष्य ज्येष्ठेश्वर भगवान् का दर्शन एवं पूजन करता है, उस व्यक्ति का पृथ्वी पर पुनर्जन्म नहीं होता ।

इत्येतदुत्तमं क्षेत्रमविमुक्ते महाफलम् ।
मणिकर्णीह्रदे स्नात्वा दृष्ट्वा विश्वेश्वरं विभुम्[4] ॥

काशी क्षेत्र अत्युत्तम है । इस अविमुक्त क्षेत्र में निवास का बहुत बड़ा फल होता है । मणिकर्णिका घाट पर स्थित चक्रपुष्करिणी कुण्ड में स्नान करने से तथा व्यापक विश्वनाथ जी का दर्शन करने से बहुत पुण्य होता है ।

उपास्य सन्ध्यां ज्ञानोदे यत्पापं काललोपजम् ।
क्षणेन तदपाकृत्य ज्ञानवान् जायते द्विजः[5] ॥

ज्ञानोद तीर्थ (ज्ञानवापी) में विधिवत् सन्ध्या करने से पूर्व समय में काल-लोप (समय के पश्चात्) सन्ध्या करने से काललोपजनित जो पाप होता है, वह क्षणमात्र में नष्ट होकर पापरहित होकर मनुष्य ज्ञानवान् हो जाता है ।



१. का० ख० ६०।६४; २ वही—६१।१२४ ; ३. वही—६३।१२ ।
४. वही—७४।४६; ५. वही—३३।४४ ।

।। तृतीय अध्याय ।।

कलौ विश्वेश्वरो देवः कलौ वाराणसी पुरी ।
कलौ भागीरथी गङ्गा दानं कलियुगे महत् ।।

कलियुग में देवता विश्वनाथ जी हैं, कलियुग में मुक्तिपुरी वाराणसी है, कलियुग में गङ्गा जी भागीरथी हैं और कलियुग में दान देना ही महान् यज्ञ है ।

गोभूहिरण्यदानेन भक्त्या गङ्गातटे शुभे ।
नरो न जायते भूयः संसारे दुःखसङ्कटे ।।
दीर्घायुष्यश्च वासोभिर्ज्ञानं पुस्तकदानतः ।
अन्नदानेन सम्पत्ति कीर्त्ति कन्याप्रदानतः[1] ।।

भक्तिपूर्वक पवित्र गङ्गातट पर गो, भूमि और सुवर्ण आदि के दान करने से मनुष्य संसार में दुःख, संकट का भागी नहीं होता है। जो नर-नारी वस्त्र का दान करते हैं, उनको दीर्घायु की प्राप्ति होती है और पुस्तक-दान करने वाले व्यक्ति को ज्ञान की प्राप्ति होती है एवं अन्न-दान करने वाले सज्जन को ऐश्वर्य तथा सम्पत्ति की प्राप्ति होती है और कन्यादान करने वाले विद्वानों को सम्मान एवं कीर्ति तथा प्रतिष्ठा की प्राप्ति होती है । अतः प्रेरणा करके सत्पात्र को दान दिलाने वाले सज्जन को भी वही फल मिलता है ।

दत्वा दानानि भूरीणि मखानिष्ट्वा तु भूरिशः[2] ।
वाराणसीजाह्नवोभ्यां सङ्गमे लोकविश्रुते ।।
दत्वान्नं च विधानेन न स भूयोऽभिजायते[3] ।।

जिस मनुष्य ने काशी में अनेकों प्रकार का दान दिया है, उसने मानो बहुत-सा यज्ञ सम्पादित किया है। संसार में प्रसिद्ध काशी के गङ्गा और वाराणसी के संगम पर विधिपूर्वक अन्न आदि दान करने वाले व्यक्ति का पुनर्जन्म नहीं होता है ।

---

१ का० ख० २७।११०-१११; २. वही—८४।९८; ३. लिङ्गपुराण ।

अन्यत्र ब्राह्मणानां तु कोटिं सम्भोज्य यत्फलम् ।
वाराणस्यां मुदैकेन भोजितेन तदाप्यते[1] ॥

काशी से अन्यत्र एक कोटि ब्राह्मणों को भोजन कराने से जो फल मिलता है, वही फल काशी में केवल श्रद्धा-भक्ति से युक्त होकर एक भी ब्राह्मण को भोजन कराने से प्राप्त होता है।

काश्यामन्नप्रदानादिदानान्यघहराणि वै ।

काशी में विधिपूर्वक अन्नदानादि सम्पूर्ण दान पापनाशक होते हैं।

कृते काश्यां ज्ञाननिष्ठाः वसन्ति त्रेतायां यज्ञभाजःप्रधानाः ।
पूजा दानं द्वापरे तु प्रकुर्वन्ति कलौ दानं केवलं मोक्षहेतुः ॥

सतयुग में काशी में ज्ञाननिष्ठ मोक्ष-कामना से निवास करते थे, त्रेता में यज्ञ-निष्ठ, द्वापर में भगवान् की पूजा में निष्ठायुक्त तथा दानी निवास करते थे; परन्तु कलियुग में तो केवल दान ही मोक्ष का हेतु है।

ध्यानमध्ययनं दानं सर्वं भवति चाक्षयम् ।
जन्मान्तरसहस्रेण यत्पापं पूर्वसञ्चितम्[2] ॥

विश्वनाथ जी कहते हैं कि काशी में ध्यान, अध्ययन, दान ये सब अक्षय होते हैं। हजारों जन्मों के पूर्व-सञ्चित पाप यहाँ नष्ट होते हैं।

जप्तं दत्तं हुतं चेष्टं तपस्तप्तं कृतं च यत् ।
ध्यानाध्ययनसम्पन्नं कथं भवति चाक्षयम्[3] ॥

काशी में जप, दान, हवन, यज्ञ, किया हुआ तप, पुण्य, ध्यान तथा अध्ययन की सम्पन्नता अक्षयपूर्वक कैसे होती है ?

दानान्यपि स्वस्ववित्तानुसारेण कृतानि वै ।
दूर्वापत्रं पुष्पजातं शिवेऽर्पितममोघकृत् ॥

मनुष्यों को अपनी-अपनी शक्ति के अनुसार प्रतिदिन दान करना चाहिए; क्योंकि दूर्वापत्र, पुष्प आदि वस्तु भी शिवार्पण करने से अमोघ अनन्त फल प्राप्त होता है।

एवमेव महामन्त्रं जीवानां च तनुत्यजाम् ।
काश्यां संश्राव्य मरणे दत्ते मुक्तिं परां शिवः[4] ॥

शिव-पञ्चाक्षरी महामन्त्र समस्त देह-त्यागियों के लिए अत्यन्त उपयोगी है।

---

१. का० रह० २।६६ ; २. म० पु० १८१।१७; ३. वही—१८१।९।
४. शिवपुराण—१३।६२ ।

काशी में अन्न आदि दान की घोषणा करने पर भी मुक्ति मिलती है, अर्थात् जो व्यक्ति काशी में अन्न आदि क्षेत्र खोलने की बात करते हुए भी शरीर-त्याग करता है, वह मुक्त हो जाता है।

तत्र दत्वा महादानं तत्र कृत्वा महद्व्रतम्।
तत्राधीत्याखिलं वेदं च्यवते न नरो दिवः॥

अविमुक्त नामक इस वाराणसी क्षेत्र में महादान देकर, महाव्रत कर तथा समस्त वेदों को पढ़कर मनुष्य स्वर्ग से नहीं गिरता है, अर्थात् मोक्ष की प्राप्ति करता है।

प्रातः समर्च्य मां भक्त्या भोजयित्वा द्विजानपि।
दत्वा गाः काञ्चनं भूमिं न भूयो भूमिभाग्भवेत्[1]॥

बिन्दु तीर्थ (पञ्चगङ्गा) में स्नान करके प्रातः मेरी पूजा कर भक्ति से ब्राह्मणों को भोजन कराकर सुवर्ण, गौ तथा भूमि दान देने वाला व्यक्ति फिर पृथ्वी पर जन्म नहीं लेता है।

स्नानेन दानेन परिक्रमेण शिवार्चनेनापि सतोऽर्चनेन।
दिने दिने सा सुकृतेऽस्य बुद्धिर्यया जनः कृतकृत्यः सदा भवेत्[2]॥

स्नान, दान, परिक्रमा (पञ्चक्रोशी आदि), शिव जी की पूजा तथा सन्तों की सेवा करने से बुद्धि पुण्य कार्य करने में लग जाती है, जिससे मनुष्य का जीवन कृतार्थ हो जाता है।

कथयामास सुकथां काशिवासिजनप्रियाम्।
गङ्गास्नानं विश्वनाथानुवृत्तिस्तत्तत्तीर्थस्नानदेवार्चनञ्च।
दानं शक्त्या सत्कथा सत्प्रसङ्गः पापात्त्रासः कीर्तनं शम्भुनाम्नाम्[3]॥

काशीवासियों के प्रति प्रिय, सुन्दर कथा के प्रसङ्ग में आया है कि गङ्गास्नान, विश्वनाथ (भगवान् शङ्कर) की भक्ति, काशी के विभिन्न तीर्थों में स्नान, देवार्चन, यथाशक्ति दान, सत्कथा, सत्सङ्ग, पाप से त्रास (भय) एवं शम्भु का कीर्तन मोक्ष के हेतु कहे गये हैं।

शैवाः पूज्याः प्रयत्नेन काश्यां मोक्षमभीप्सुभिः।
तेष्वर्चितेष्वपि शिवः प्रीतो भवत्यसंशयः॥
सर्वेषामिह पापानां प्रायश्चित्तचिकीर्षया[4]॥

---

१. का० ख० ६१।१४७; २. का० रह० १४।६२; ३. वही—१२।१३१, १४६।
४. का० ख० ७५।४२-४३।

काशी में सम्पूर्ण पापों के नाश को इच्छा रखने वाले व्यक्ति को निरन्तर प्रयत्नपूर्वक शिवभक्तों का पूजन करना चाहिए; क्योंकि इससे शिव को प्रसन्नता तथा कृपा से मोक्ष प्राप्त होता है ।

वस्त्रपूतजलैर्लिङ्गं स्नापयित्वा ममामराः ।
लक्षाश्वमेधजनितं पुण्यमाप्नोति सत्तमः[1] ॥

हे देवतागण ! वस्त्रपूत (वस्त्र से छाना हुआ) जल से शिवलिङ्ग का पूजन करने वाले नर-नारियों को लक्ष (एक लाख) अश्वमेध यज्ञ का पुण्य प्राप्त होता है ।

शिवलिङ्गार्चनायैकमनोदेहसमर्पणः ।
शिवभक्तो मनोह्लादकारो व्रतपरायणः ॥

एक शिवलिङ्ग की अर्चना के लिए जिसने मन और देह को समर्पित कर दिया है, वह शिवभक्त मन को हर्षित करने वाला है और व्रत करने वाला है । वह शिव-भक्त योगी, जीवन्मुक्त माना जाता है ।

पूजामात्रं विधायास्य लिङ्गराजस्य भक्तितः ।
सहस्रहेमकमलपूजाफलमवाप्यते[2] ॥

स्कन्द जी अगस्त्य ऋषि से कहते हैं कि भक्तिपूर्वक शिवलिङ्ग का कमल के पुष्प से पूजन करने मात्र से हजारों सुवर्ण-पुष्पों से पूजा करने का फल प्राप्त होता है ।

यत्र तिष्ठति निर्विघ्नं शिवलिङ्गं वरानने ।
तत्र देवालयः कार्यः पूजा भवति यत्र च[3] ॥

जहाँ पर शिवलिङ्ग निर्विघ्न रूप में स्थित हो, वहाँ मन्दिर बनवा देना चाहिए । इसी प्रकार जहाँ पूजा होती हो वहाँ भी मन्दिर बनवा देना चाहिए । इसी का नाम जीर्णोद्धार है । जीर्ण-शीर्ण मन्दिर को नया मन्दिर बना देना ही जीर्णोद्धार है । मन्दिर जीर्णोद्धार करने वाले मनुष्यों को इस लोक में सुख, सम्पत्ति और शान्ति प्राप्त होती है तथा मरने के पश्चात् वे शिवलोक में वास करते हैं ।

अविमुक्तं समासाद्य लिङ्गमर्चयते नरः ।
कल्पकोटिशतैश्चापि नास्ति तस्य पुनर्भवः[4] ॥

जो मनुष्य अविमुक्त (काशी) क्षेत्र में आकर शिवलिङ्ग की पूजा करता है, उसका सैकड़ों करोड़ कल्पों में भी पुनर्जन्म नहीं होता ।

---

१ का० ख० ९९।३० ; २ वही – ९९।२८; ३. का० रह० १२।९ ।
४. म० पु० १८५।५७ ।

अविमुक्ते महादेवमर्चयन्ति स्तुवन्ति वै ।
सर्वपापविनिर्मुक्तास्ते तिष्ठन्त्यजरामराः[1] ॥

जो अविमुक्त (काशी) क्षेत्र में महादेव को पूजा और स्तुति करते हैं, वे सभी पापों से विनिर्मुक्त होकर अजर-अमर हो जाते हैं।

तुलसोदलमात्रेण यः करोति शिवार्चनम् ।
कुलैकविंशमुद्धृत्य शिवलोके महीयते[2] ॥

विष्णु भगवान् नारद जो से कहते हैं कि जो नर-नारो मात्र तुलसीदल (तुलसी के पत्ते) से शङ्कर जो का पूजन करते हैं, वे नर-नारो अपनो इक्कोस पीढ़ियों के पूर्वजों का उद्धार करके शिवलोक में निवास करते हैं।

स्फुटं निर्वहते यस्य यावज्जोवं शिवार्चनम् ।
मनुष्यचर्मणा नद्धः स रुद्रो नात्र संशयः ॥

जब तक मनुष्य के शरोर में जोव रहता है, तब तक यदि उसका शिव-पूजन कर्म बराबर बना रहता है, तो उस शिवपूजन करने वाले पुरुष का कभी भी नाश नहीं होता, अर्थात् वह पुरुष कभी भो परमार्थ से भ्रष्ट नहीं होता, वह साक्षात् शिवरूप हो जाता है, इसमें कुछ सन्देह नहों है।

वरं प्राणपरित्यागः शिरसो वापि कर्तनम् ।
न त्वसम्पूज्य भुञ्जोत भगवन्तं त्रिलोचनम् ॥

प्राणों का निकल जाना और सिर का कट जाना भी अच्छा है; परन्तु शिव-पूजन किये विना भोजन करना अच्छा नहीं है ।

विशेष—अपने हाथ के अंगुष्ठ के बराबर नर्मदेश्वर शिवलिङ्ग को प्रत्येक परिवार में अपने-अपने घर के कमरे में अथवा जहाँ सुविधा हो रखना चाहिए एवं उस कमरे को या उस जगह को सजाना चाहिए ।

प्रतिदिन घर के मालिक को स्वयं शिवपूजन करना चाहिए, किसी कारण से स्वयं पूजा करने में असमर्थ हो तो घर के किसी भी सदस्य को स्नान करके शुद्ध वस्त्र, भस्म या श्रीखण्ड चन्दन त्रिपुण्ड्, ऊर्ध्वपुण्ड्र अथवा टीका लगा करके रुद्राक्ष की माला या तुलसो की माला गले में धारण करके नर्मदेश्वर को स्नान कराकर पूजन करना चाहिए तथा नैवेद्य प्रसाद समर्पण प्रसाद निर्माल्य वितरण करने के पश्चात् स्वयं प्रसाद ग्रहण करना चाहिए ।

---

१. म० पु० १८५।५९; २. नारदपुराण ।

प्रतिमायां प्रयत्नेन कृतया साङ्गपूजया ।
यत्फलं तत्फलं प्राप्यं व्यङ्गया लिङ्गपूजया[1] ॥

शिवरहस्य में कहा गया है कि सावधानी के साथ प्रतिमा में साङ्गोपाङ्ग पूजा करने से जो फल प्राप्त होता है, वही फल शिवलिङ्ग की पूजा करने से भी प्राप्त होता है।

योऽर्चायामर्चयेद्भक्त्या पूर्णवर्षशतं नरः ।
लिङ्गस्यैकदिनं पूज्यं समेतं न हि संशयः ॥
शम्भोर्लिङ्गं समभ्यर्च्य पुरुषार्थचतुष्टयम् ।
प्राप्नोत्यत्र पुमान्सद्यो नात्र कार्या विचारणा[2] ॥

स्कन्दपुराण में कहा गया है कि अन्य देवताओं के भक्तिपूर्वक सौ वर्ष पूजन करने से जो फल होता है, वह फल मात्र एक दिन के शिवपूजन से होता है, इसमें सन्देह नहीं है। शिवलिङ्ग का पूजन करने से धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष इन चारों पदार्थों को मनुष्य प्राप्त कर लेता है[2]।

अयमेव परो धर्मस्त्विदमेव परं तपः ।
इदमेव परं ज्ञानं शिवलिङ्गं यदर्च्यते[3] ॥

वायुपुराण में कहा गया है कि यही एक बड़ा धर्म है, यही बड़ा तप तथा यही परमज्ञान है कि सदैव शिवलिङ्ग का पूजन करते रहें। अर्थात् सदा-सर्वदा शिव जी का पूजन करना चाहिए।

एककालं महाविष्णुर्भक्त्या शुद्धं च पार्थिवम् ।
चारुचित्तं समभ्यर्च्य लब्धवान्परमं पदम् ॥

रुद्र के मनोहर और शुद्ध पार्थिव शिवलिङ्ग का पूजन करने से विष्णु भगवान् भी परम पद को प्राप्त हुए थे।

एककालं द्विकालं वा त्रिकालमथवा नरः ।
लिङ्गं महीजं सम्पूज्य शिवसायुज्यमाप्नुयात् ॥

दिन में एक या दो बार अथवा त्रिकाल पार्थिव शिवलिङ्ग का नियम से पूजन करने वाले मनुष्य शिवसायुज्य मुक्ति को प्राप्त करते हैं।

यस्येन्द्रियाणि पूजार्थं भवन्ति शुभदेहिनः ।
कदाचिदपि वा विप्र सफलं तस्य जीवितम् ॥

हे विप्र ! जिन उत्तम देहधारी नर-नारियों की इन्द्रियाँ सदैव शिवपूजा के लिए

---

१. शिवरहस्य; २. स्कन्दपुराण; ३. वायुपुराण।

सन्नद्ध रहती हैं, उन्हीं का जीना सफल है। शिवपूजा करने वाला ही उत्तम अनन्य भक्त है।

विशेष—जहाँ शङ्कर जी का पूजन अभीष्ट हो, वहाँ पूजनकर्ता गङ्गा की बालू या सादी मिट्टी लेकर शिवलिङ्ग बनावे, तदनन्तर शिवलिङ्ग को बायें हाथ पर रखकर 'ॐ शिवाय नमः' इस मन्त्र से पूजनादि सब कार्य करे। किसी आचार्य का मत है—

हरो महेश्वरश्चैव शूलपाणिः पिनाकधृक्।
रुद्रः पशुपतिश्चैव महादेव इति क्रमः ॥

'ॐ हराय नमः' इस मन्त्र से मिट्टी लेकर, 'ॐ महेश्वराय नमः' इस मन्त्र से पानी डालकर सानें और लिङ्ग बनावें। बाद में 'ॐ शूलपाणये नमः' से स्नान तथा 'ॐ पशुपतये नमः' से पूजन और 'ॐ महादेवाय नमः' से विसर्जन कर मूर्ति को बहते हुए जल में छोड़ दें।

[शिव-पार्थिवपूजा-विधि 'नित्यकर्मपद्धति' में विस्तार से वर्णित है।]

पत्रं पुष्पं फलं तोयमन्नपानाद्यमौषधम्।
अनिवेद्य न भुञ्जीत यदा हराय कल्पितम्[1] ॥

स्कन्दपुराण में कहा गया है कि पत्र, पुष्प, फल, जल, अन्न, पान तथा औषधि आदि सभी पदार्थों को शिवार्पण किये विना नहीं ग्रहण करना चाहिए।

विशेष—मनुष्य मात्र को अपने घर के उत्तर-पूर्व के कोने के कमरे में पूजा-मन्दिर बनाकर पूजागृह को सजाकर नर्मदेश्वर को स्थापित कर प्रतिदिन स्नान कराकर पूजा करने के पश्चात् नैवेद्य अर्पित करके प्रसाद बाँटकर अन्त में स्वयं प्रसाद ग्रहण करना चाहिए। सभी वस्तुओं को शिवार्पण करके भोजन करना उत्तम है।

एकं विल्वदलं रम्यं मद्भक्तेनार्पितं मयि।
अनन्ताघहरं नूनं सत्यमेवोच्यते मया ॥

मेरे भक्त द्वारा मेरे लिए अर्पित एक ही विल्वपत्र अनन्त पापों का नाश करता है। मैं यह निश्चय ही सत्य कहता हूँ।

पञ्चाक्षरेण मन्त्रेण विल्वपत्रैः शिवार्चनम्।
करोति श्रद्धया यस्तु स गच्छेदैश्वरं पदम् ॥

शिवपुराण में कहा गया है कि जो पुरुष पञ्चाक्षर मन्त्र पढ़कर विल्वपत्रों से शिवपूजन करता है, वह (भक्त) शिव-पद को प्राप्त करता है।

१. स्कन्दपुराण।

शुष्कैः पर्युषितैः पत्रैरपि बिल्वस्य नारद ।
पूजयेद् गिरिजानाथमलाभे यत्नतो नरः ॥

शिवरहस्य में कहा गया है कि हे नारद ! नवीन बिल्वपत्र न हो तो मनुष्यों को यत्नपूर्वक सूखे या बासो बिल्वपत्र से ही शिव जी का पूजन करना चाहिए ।

त्रिदलं त्रिगुणाकारं त्रिनेत्रञ्च त्र्यायुधम् ।
त्रिजन्मपापसंहारं बिल्वपत्रं शिवार्पणम् ॥

शुद्ध त्रिदल सतोगुण, रजोगुण, तमोगुण रूप, सदाशिव के तीनों नयन तथा तीन आयुध के समान और तीन जन्म के पापों का संहारक है। यह त्रिदल श्रीमहादेवजी को अर्पण कर रहे हैं ।

वर्ज्यं पर्युषितं पुष्पं वर्ज्यं पर्युषितं जलम् ।
अवर्ज्यं जाह्नवीतोयं तुलसीपद्मबिल्वकम् ॥

बासी फूल और वासी जल वर्जित है ; किन्तु गङ्गाजल, तुलसीदल, कमल का पुष्प और बिल्वपत्र ये बासी भी वर्जित नहीं हैं ।

बिल्वपत्रैर्महादेवं स्वाहृतैरेव कोमलैः ।
यः पूजयति यत्नेन पदं प्राप्नोति शाङ्करम्[1] ॥

जो पुरुष स्वयं गृहीत कोमल बिल्वपत्रों से यत्नपूर्वक शिव जी का पूजन करते हैं, वे शिवपद को अवश्य प्राप्त करते हैं ।

एकं वाऽपि तु धत्तूरं कार्तिके सोमवासरे ।
यदि दद्यान्मम प्रीत्या मयि लीनो भविष्यति[2] ॥

जो पुरुष कार्तिक के महीने में सोमवार को मेरी प्रीति के लिए धतूरे का एक पुष्प भी मुझे अर्पित करता है, वह मनुष्य मुझमें अर्थात् शिवरूप में लीन हो जाता है ।

उपवीतन्तु यो दद्याद् ब्रह्मवेतृत्वमेव च ।
भूषणानि च यो दद्याद् नापदं सोऽवाप्नुयात् ॥

स्कन्दपुराण में कहा गया है कि जो मनुष्य यज्ञोपवीत शिव जी को अर्पित करता है, वही व्यक्ति ब्रह्मवेत्ता होता है और जो नर-नारी आभूषण चढ़ाते हैं, वे सभी प्रकार की आपत्तियों से छुटकारा पा जाते हैं ।

---

१. शिवरहस्य ; २. वही ।

मृदुसूत्रं सपीतञ्च पट्टसूत्रादिनिर्मितम् ।
दत्त्वोपवीतं रुद्राय भवेद्वेदान्ततः सुखी ॥

जो भक्त उपासक बनते हुए कोमल, पीत वर्ण और उत्तम सूत्र से बना यज्ञोपवीत शिव जी को चढ़ाता है, वह मनुष्य सब प्रकार से सुखी रहता है।

दत्वा वै चमरं देवं वीज्यते यः शिवःपुरे ।
युगकोटिशतं भुक्त्वा चान्ते राज्यमवाप्नुयात् ॥

जो मनुष्य शिव जी के लिए चँवर अर्पण करता है और उसी चँवर से पुजारी प्रतिदिन पूजन करता है, वह चँवर अर्पित करने वाला व्यक्ति एक अरब युग तक सुख भोगकर अन्त में राजा होता है।

एकमाम्रफलं पक्वं यः शम्भुं विनिवेदयेत् ।
वर्षाणामयुतं भोगैः क्रीडते स शिवे पुरे ॥

जो मनुष्य एक भी आम का पका हुआ फल शिव जी को अर्पित करता है, वह दश हजार वर्ष तक शिवलोक में विहार करता है।

यो दाडिमफलं चैकं दद्याद् विकसितं नवम् ।
शिवाय गुरवे वापि तस्य पुण्यफलं शृणु ॥
यावत्तद्बीजसंख्यानं शोभनं परिकीर्तितम् ।
तावदष्टायुतान्युच्च शिवलोके महीयते ॥

स्कन्दपुराण में कहा गया है कि जो मनुष्य नवीन विकसित और पका हुआ केवल एक अनार का फल भी शिव जी को या गुरु जी को अर्पित करता है, वह मनुष्य उस अनार में जितने बीज होते हैं, उनके आठ हजार गुने वर्षों तक शिवलोक में निवास करता है।

ये दीपमालां कुर्वन्ति कार्तिक्यां श्रद्धयान्विताः ।
यावत्कालं प्रज्वलन्ति दीपास्ते लिङ्गमग्रतः ॥
तावद्युगसहस्राणि दाता स्वर्गे महीयते ॥

जो पुरुष कार्तिक की पूर्णिमा एवं अमावास्या तिथि को परम श्रद्धा से शिवमन्दिर में अर्थात् शिव जी के आगे दीपों की पंक्ति बनाकर प्रकाश करते हैं, वे दीपक प्रकाश करते हुए जितने काल तक प्रकाशित रहते हैं, वे दीपक दान करने वाले स्त्री-पुरुष उतने सहस्र युग तक स्वर्ग में निवास करते हैं।

सेवन्तिकावकुलचम्पकपाटलाब्जैः पुन्नागजातिकरवीररसालपुष्पैः ।
बिल्वप्रवालतुलसीदलमञ्जरीभिस्त्वां पूजयामि जगदीश्वर मे प्रसीद ॥

साम्ब सदाशिव जी सर्वोपचार-पूजनोपरान्त विविध सेवन्तिका, वकुल, चम्पा, पाटल, कमल, पुन्नाग, जूही, करवीर, रसाल पुष्पों से तथा बेल-पत्ती, प्रवाल, तुलसी-दल एवं पुष्पमञ्जरी की पुष्पाञ्जलि अर्पित करते हुए श्रीविश्वनाथ जी मैं आपकी पूजा करता हूँ, मुझ दीन पर आप अवश्य प्रसन्न हों।

पूजयित्वा महादेवं लिङ्गरूपिणमव्ययम् ।
प्रदक्षिणात्रयं कृत्वा प्रणमेद्दशपञ्च च ॥

शिवमन्दिर में शिवलिङ्गरूप अविनाशी शिव को पूजा करके तीन बार परिक्रमा करने के पश्चात् पन्द्रह बार नमस्कार करने वाले नर-नारी के रोग तथा संकट दूर हो जाते हैं।

लिङ्गं समर्चितं दृष्ट्वा यः कुर्यात् प्रणतिं सकृत् ।
सन्देहो जायते तस्य पुनर्देहनिबन्धने ॥

काशीखण्ड में कहा गया है कि शिवलिङ्ग का पूजन करने के पश्चात् पुनः शिवलिङ्ग का दर्शन करते हुए जो मनुष्य एक बार भी शिवलिङ्ग को नमस्कार करता है, उसका पुनर्जन्म होने में सन्देह है, अर्थात् वह मोक्ष को प्राप्त होता है।

आगतं शिवनैवेद्यं गृहीत्वा शिरसा मुदा ।
भक्षणीयं प्रयत्नेन शिवस्मरणपूर्वकम् ॥

यदि शिव-नैवेद्य मिल जाता है, तो उसको आदरपूर्वक ग्रहण कर प्रणाम करते हुए तथा शिव जी का स्मरण करते हुए प्रयत्नपूर्वक खाने से पाप एवं दुर्गुण भाग जाते हैं।

निर्माल्यं देवदेवस्य चान्द्रायणशताद्वरम् ।
मदीयभुक्तं निर्माल्यं पादाम्बु कुसुमं जलम् ॥
धर्ममर्थञ्च कामं च मोक्षं च ददते क्रमात् ।
मल्लिङ्गधारिणो लोके दशैका मत्परायणाः ॥
मदेकशरणास्तेषां भोग्यं नैवान्यजन्तुषु[1] ॥

शङ्कर भगवान् नारद जी से कहते हैं कि हे नारद! देवाधिदेव शिव जी का निर्माल्य सैकड़ों चान्द्रायण व्रत से भी श्रेष्ठ है। मुझे अर्पण किया हुआ निर्माल्य,

---

१. स्कन्दपुराण।

चरणोदक, पुष्प और जल क्रमशः धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष इन चारों पदार्थों को देने वाला है। जो मनुष्य त्रिपुण्ड्र लगाकर मेरे परायण होकर एकमात्र मेरी शरण में आते हैं, उन्हें किसी और योनि में नहीं जाना पड़ता है, मैं उन्हें मुक्त कर देता हूँ।

शिवदीक्षान्वितो भक्तो महाप्रसादसंज्ञकम्।
सर्वेषामपि वै दत्तं नैवेद्यं भक्षयेच्छुभम्॥

शिवदीक्षा ग्रहण किये हुए स्त्री-पुरुष भक्तों को सब प्रकार के शिव-मन्दिरों के महाप्रसादसंज्ञक नैवेद्य का भक्षण अवश्य करना चाहिए; क्योंकि शिव जी का प्रसाद बड़ी ही पवित्र वस्तु है।

यावत्फलं समाख्यातमुभयोर्विनिवेदितम्।
तावद्युगसहस्राणि रुद्रलोके महीयते॥

जो नर-नारी पके हुए अंगूर के फल शिव जी को अथवा शिवभक्तों को दान करते हैं, उन फलों की संख्या के हजार गुना वर्ष तक वे रुद्रलोक में वास करते हैं।

यो नारङ्गफलं पक्वं शिवाय विनिवेदयेत्।
अष्टलक्षं महाभोगैः क्रीडते स शिवे पुरे॥
निवेद्य भक्त्या शर्वाय प्रत्येकं च फले फले।
दशवर्षसहस्राणि रुद्रलोके महीयते॥

जो स्त्री-पुरुष पके हुये नारंगी के फल शिव जी को अर्पित करते हैं, वे विविध प्रकार के भोगों को भोगते हुए आठ लाख वर्षों तक शिवलोक में आनन्द करते हैं। इसी तरह कोई भी शिव जी को ऋतुफल अर्पण करने वाला व्यक्ति दश हजार वर्षों तक रुद्रलोक में सुख भोगता है।

भक्षिते शिवनैवेद्ये शिवसायुज्यमाप्नुयात्।
दृष्टेऽपि शिवनैवेद्ये यान्ति पापानि दूरतः॥
भक्षिते शिवनैवेद्ये पुण्यान्यायान्ति कोटिशः॥

ब्रह्माण्डपुराण में कहा गया है कि शिवनैवेद्य के भक्षण मात्र से प्राणी शिव-सायुज्य मुक्ति को प्राप्त करता है। शिव-नैवेद्य का दर्शन करने मात्र से भी पाप दूर भाग जाते हैं और शिव-नैवेद्य के भक्षण से तो करोड़ों पुण्य भी स्वतः दौड़ आते हैं।

(शिवलिङ्ग और जलधारी के अन्दर चढ़ा हुआ शिव-नैवेद्य एक पत्ते में अलग

रखकर सबको प्रसाद वितरित करना चाहिए। जलधारी से बाहर रखा हुआ प्रसाद वैष्णव, शैव, शाक्त सबके लिये अमृततुल्य होता है)।

चान्द्रायणसमं प्रोक्तं शम्भोर्नैवेद्यभक्षणम् ॥
ब्रह्महापि शुचिर्भूत्वा निर्माल्यं यस्तु धारयति।
भक्षयित्वा द्रुतं तस्य सर्वपापं प्रणश्यति ॥

शिव-मन्दिरों में अर्पित नैवेद्य खाने का फल चान्द्रायण व्रत के समान कहा गया है। ब्रह्महत्यारा हो क्यों न हो, यदि वह व्यक्ति पवित्र होकर शिव जी को अर्पित किये गये निर्माल्य को शरीर में धारण करता है और शिवनैवेद्य का भक्षण करता है, तो उसके समग्र पाप नष्ट हो जाते हैं।

काश्यां विश्वेश्वरो देवः संसारभयनाशनम्।
अनेकजन्मकृतं पापं दर्शनेन विनश्यति[1] ॥

स्कन्द जी अगस्त्य जी से कहते हैं कि काशी में विश्वेश्वर देवता हैं, जो जन्म-मरणरूप संसार के भय के नाशक हैं। उनके दर्शन से अनेक जन्मों का किया हुआ पाप विनष्ट हो जाता है।

सत्यं सत्यं पुनः सत्यं सत्यं सत्यं पुनः पुनः।
दृश्यो विश्वेश्वरो नित्यं स्नातव्या मणिकर्णिका[2] ॥

वेदव्यास जी सूत जी से कहते हैं कि बार-बार त्रिसत्य यही है कि काशी में मणिकर्णिका में स्नान तथा भगवान् विश्वनाथ जी का श्रद्धा-भक्ति से युक्त होकर दर्शन-पूजन करना चाहिए; क्योंकि विश्वनाथ जी के दर्शन-पूजन से ही मनोवाञ्छित फल प्राप्त होता है।

यः स्नात्वोत्तरवाहिन्यां याति विश्वेशदर्शने।
श्रद्धया परया तस्य श्रेयसोऽन्तो न विद्यते[3] ॥

काशी में जो उत्तरवाहिनी गङ्गा जी में स्नान करके परम श्रद्धा से विश्वनाथ जी का दर्शन करता है, वह अनन्त पुण्य को प्राप्त करता है।

यन्नामाकर्णनादेव क्षीयन्ते पापराशयः।
प्राप्यते पुण्यसम्भारः काश्यां निर्वाणकारणम्[4] ॥

शङ्कर जी पार्वती जी से कहते हैं कि काशी में विश्वनाथ जी का नाम श्रवण-

१. स्कन्दपुराण; २. का० ख० १००।१०५; ३. वही—३।८७; ४. वही—७३।१८।

मात्र करने से सभी पापसमूह क्षीण हो जाते हैं। मोक्ष के उपायभूत जितने पुण्य हैं, वे सभी काशी में प्राप्त होते हैं।

येषां स्मरणतोऽप्यत्र भवेत् पापस्य संक्षयः।
दर्शनस्पर्शनाभ्याञ्च स्यातां स्वर्गापवर्गकौ[1] ॥

पार्वती जी शङ्कर भगवान् से कहती हैं कि काशी के विश्वेश्वर शिव के स्मरण करने मात्र से पापों का विनाश होता है तथा दर्शन एवं स्पर्शन से स्वर्ग एवं मोक्ष की प्राप्ति होती है।

स्वयम्भुवोऽस्य लिङ्गस्य मम विश्वेशितुः सुराः।
राजसूयसहस्रस्य फलं स्यात्स्पर्शमात्रतः[2] ॥

शङ्कर भगवान् देवताओं से कहते हैं कि काशी में विश्वेश्वर के स्वयं प्रादुर्भूत शिवलिङ्ग का स्पर्श करने वाले नर-नारियों को हजारों राजसूय यज्ञ करने का फल प्राप्त होता है।

लिङ्गं महानन्दकरं विश्वेशाख्यं सनातनम्।
नमस्कृत्य विमुच्येत पुरुषः प्राकृतैर्गुणैः[3] ॥

सनातन विश्वेश्वर नामक शिवलिङ्ग महानन्दप्रद है। उसे नमस्कार करके मनुष्य प्राकृतिक गुणों से मुक्त हो जाता है।

काशीविश्वेश्वरं लिङ्गं ज्योतिर्लिङ्गं तदुच्यते।
तद्दृष्ट्वा परमं ज्योतिराप्नोति मनुजोत्तमः[4] ॥

काशी में स्थित विश्वेश्वर शिवलिङ्ग ज्योतिर्लिङ्ग है, उसी का दर्शन करके उत्तम पुरुष परम ज्योति को प्राप्त करते हैं।

दैनन्दिनी विधातव्या महाफलमभीप्सुभिः।
ततो वैश्वेश्वरी यात्रा कार्या सर्वार्थसिद्धिदा[5] ॥

महान् फलों की कामना करने वाले व्यक्तियों को सभी सिद्धियों के दाता भगवान् विश्वेश्वर के दर्शनार्थ प्रतिदिन यात्रा करनी चाहिए।

आदित्यं द्रौपदीं विष्णुं दण्डपाणिं महेश्वरम्।
नमस्कृत्य ततो गच्छेद् द्रष्टुं ढुण्ढिविनायकम्[6] ॥

आदित्य, द्रौपदी, विष्णु, दण्डपाणि, महेश्वर आदि को नमस्कार करके ढुण्ढि-विनायक के दर्शनार्थ प्रस्थान करना चाहिए।

---

१. का० ख० ७३।१४; २. वही—९९।२६; ३. ब्र० वै० पुराण।
४. ना० पु०, त्रि० से०; ५. का० ख० १००।४१; ६. वही—१००।३८।

ढुण्ढिराज गणेश जी के दर्शनोपरान्त भगवान् विश्वनाथ के दर्शन हेतु जाना चाहिए ।

काश्यां श्रीदेवदेवस्य विश्वनाथस्य पूजनम् ।
सर्वपापहरं पुंसामनन्ताभ्युदयावहम्[१] ॥

काशी जी में देवाधिदेव महादेव विश्वनाथ जी का पूजन करने वाले नर-नारियों के सभी पापसमूह नष्ट हो जाते हैं तथा काशी अनन्त अभ्युदयों को प्रदान करती है।

न वन्ध्यं दिवसं कुर्याद्विना यात्रां क्वचित्कृती ।
यात्राद्वयं प्रयत्नेन कर्त्तव्यं प्रतिवासरम् ॥
आदौ स्वर्गतरङ्गिण्यास्ततो विश्वेशितुर्ध्रुवम्[२] ॥

हे भवानि ! काशीवास करने वाले सभी पुण्यवान् प्राणियों को नित्य दर्शन किये विना कोई भी दिन व्यर्थ नहीं करना चाहिए। प्रतिदिन प्रयत्नपूर्वक जो भक्त दो यात्राएँ करते हैं—पहली यात्रा गङ्गा-दर्शन और स्नान तथा दूसरी भगवान् विश्वनाथ जी का दर्शन—उनको मैं सुखपूर्वक काशीवास कराता हूँ और अन्त में मुक्ति प्रदान करता हूँ।

अनुग्रहश्च वैश्वेशः काशीप्राप्तिकरः परः ।
काशीप्राप्त्या भवेज्ज्ञानं ज्ञानान्निर्वाणमृच्छति[३] ॥

भगवान् विश्वनाथ की कृपा से ही काशीवास सम्भव है । काशी-प्राप्ति (वास) से ज्ञान प्राप्त होता है तथा ज्ञान से मुक्ति प्राप्त होती है ।

वाराणस्यां विशेषेण गङ्गा त्रिपथगामिनी ।
प्रविष्टा नाशयेत्पापं जन्मान्तरशतैः कृतम्[४] ॥

वाराणसी में गङ्गा त्रिपथगामिनी हैं । सैकड़ों जन्मों के किये हुये पापों को गङ्गा जी काशी में प्रवेश करते ही नष्ट कर देती हैं ।

यस्य विश्वेश्वरस्तुष्टस्तस्य स्याच्छ्रवणे रतिः ।
जायते पुण्ययुक्तानां महानिर्मलचेतसाम्[५] ॥

सूत जी कहते हैं कि जिन पुण्यशाली निर्मल चित्त वालों के ऊपर विश्वनाथ जी प्रसन्न होते हैं, उन्हीं का काशी की कथा श्रवण करने में मन लगता है ।

---

१. शिवपुराण ; २. का० ख० १०० १०१-१०२ ; ३. वही—३६।७९-८० ।
४. पद्मपुराण—३३२।३६; ५. का० रह० २६।९३ ।

एतच्छ्रवणतः पुंसां सर्वत्र विजयो भवेत् ।
सौभाग्यञ्चापि सर्वत्र प्राप्नुयान्निर्मलाशयः[1] ॥

इस प्रकार काशी-माहात्म्य सुनने से निर्मल-चित्त मनुष्य सर्वत्र विजयी तथा सौभाग्यशाली होता है ।

सर्वेषां मङ्गलानाञ्च मङ्गलं परमं स्मृतम् ।
गृहेऽपि लिखितं पूज्यं सर्वमङ्गलसिद्धये[2] ॥

सूत जी कहते हैं कि सभी मङ्गलों का परम मङ्गल काशी-क्षेत्र कहा गया है । सभी प्रकार के मङ्गलों की सिद्धि के लिये घर पर भी शिवलिङ्ग का पूजन अवश्य करना चाहिए ।

जय विश्वेश्वर विश्वाधार विश्वरूप विष्णुप्रिय वामदेव महादेव देवाधिदेव दिव्यरूप दीनानाथैकशरण शरणागतवज्रपञ्जर साधिताखिल-कार्य कार्यातीत कारणकारण कामादितृणदाहन दानवान्तकर दारिताखिल-दारिद्र्य जितेन्द्रियप्रिय जितेन्द्रियैकगम्य काशीस्थस्थावरजङ्गमनिर्वाण-दायक त्रिदशनायक काशिकाप्रिय ! नमस्ते नमस्ते[3] ।

हे विश्वेश्वर ! विश्वाधार ! विश्वरूप ! विष्णुप्रिय ! वामदेव ! महादेव ! देवाधिदेव ! दिव्यरूप ! दीनानाथ ! एकमात्र रक्षक ! शरणागत-वज्रपञ्जर ! साधिताखिलकार्य ! कार्यातीत ! कारणों के कारण ! कामरूपी तृण को जलाने वाले ! दानवों के विनाशक ! अखिल दरिद्रता को दलित करने वाले ! जितेन्द्रियों के प्रिय ! जितेन्द्रियों के द्वारा जानने योग्य ! काशी स्थित चराचर को मोक्ष देने वाले ! देवताओं के स्वामी ! काशीप्रिय ! आपको बार-बार नमस्कार है ।

स्नात्वा विशालतीर्थे वै विशालाक्षीं प्रणम्य च ।
विशालां लभते लक्ष्मीं परत्रेह च शर्मदाम्[4] ॥

विशाल तीर्थ (मीरघाट) पर गङ्गा जी में स्नान एवं विशालाक्षी को प्रणाम करने से मानव उस विशाल लक्ष्मी को प्राप्त करते हैं, जो लक्ष्मी यहां एवं दूसरे लोकों में भी सुख देने वाली होती हैं ।

---

१. का० ख० २६।९३ ; २. वही—२६।९४ ; ३. ब्र० वै० पु० ।
४. का० ख० ७०।५ ।

अष्टौ प्रदक्षिणा देयाः प्रत्यहं तुष्टितत्परैः ।
नमनीयौ प्रयत्नेन भवानीशङ्करौ सदा ॥
भक्तानां कामदा नित्यं भवानी वाससंप्रदा ।
अतो भवानी सम्पूज्या काश्यां तीर्थनिवासिभिः[१] ॥

सन्तोषपरायण मनुष्यों को प्रतिदिन भवानी तथा भगवान् शङ्कर की आठ प्रदक्षिणा करनी चाहिए और सदैव प्रयत्नपूर्वक भवानी और शङ्कर को प्रमाण करना चाहिए। भक्तों के मनोरथ को पूर्ण करने वाली भवानी ही स्थिर वास करने देती हैं, इसलिए काशी में तीर्थवास करने वालों को भवानी का पूजन अवश्य करना चाहिए।

योगक्षेमं सदा कुर्याद्भवानी काशिवासिनाम् ।
तस्माद्भवानी संसेव्या सततं काशिवासिभिः ॥
भिक्षणीया सदा भिक्षा भिक्षुणा मोक्षकाङ्क्षिणा ।
यतो भिक्षाप्रदा काश्यां विश्वेशस्य कुटुम्बिनी[२] ॥

विष्णु भगवान् अग्निबिन्दु ऋषि से कहते हैं कि भवानी ही काशी-वासियों का सदा योगक्षेम करती रहती हैं। अतः भवानी की सेवा, दर्शन-पूजन काशीवासियों को सदैव करना चाहिए। मोक्षाभिलाषी भिक्षुक को काशी-क्षेत्र में भिक्षा देने वाली विश्वेश्वर की कुटुम्बिनी भवानी से ही (मोक्ष की) भिक्षा माँगनी चाहिए।

गृहमेध्यत्र विश्वेशो भवानी तत्कुटुम्बिनी ।
सर्वेभ्यः काशिसंस्थेभ्यो मोक्षभिक्षां प्रयच्छति ॥
दुष्प्रापमपि यत्किञ्चित्काशीक्षेत्रनिवासिनाम् ।
तत्सुप्राप्यं करोत्येव भवानी पूजिता नृभिः[३] ॥

काशी-क्षेत्र में भगवान् विश्वेश्वर (विश्वनाथ जी) गृहस्थ हैं तथा उनकी कुटुम्बिनी भवानी हैं, अतः वही समस्त काशीवासियों को मोक्ष की भिक्षा प्रदान करती हैं। काशीवासियों के लिए यदि कुछ दुर्लभ भी हो, तो पूजन-अर्चन मात्र करने से ही भवानी उसे सुलभ कर देती हैं।

---

१. का० ख० ६१।१२८-१२९ ; २. वही—६१।१३०-१३१ ।
३. वही—६१।१३२-१३३ ;

कुर्याज्जागरणं रात्रौ महाष्टम्यां व्रती नरः।
प्रातर्भवानीमभ्यर्च्य प्राप्नुयाद् वाञ्छितं फलम् ॥
शुक्रेशात्पश्चिमाशायां भवानीं योऽभिवीक्षते।
सर्वे मनोरथास्तस्य सिद्ध्यन्तीह न संशयः[1] ॥

जो मनुष्य चैत्र मास की महाष्टमी में समग्र रात्रि भर जागरण कर प्रातः-काल भवानी की पूजा करता है, उसको मनोवाञ्छित समस्त फल प्राप्त हो जाते हैं। शुक्रेश्वर से पश्चिम दिशा में विराजमान भवानी का दर्शन करने वाले मनुष्यों के समग्र मनोरथ निःसन्देह सिद्ध हो जाते हैं।

विश्वां गौरीं च तदनु पूजयित्वाऽतिभक्तितः।
विश्वस्य पूज्यो भवति ततो विश्वमयो भवेत्[2] ॥

जो व्यक्ति भक्तिपूर्वक विश्वा-नामक गौरी जी की पूजा करता है, वह व्यक्ति विश्व का पूज्य होकर विश्वमय हो जाता है।

तत्र जागरणं कृत्वाऽशोकाष्टम्यां मधौ नरः।
न जातु शोकं लभते सदानन्दमयो भवेत्[3] ॥

चैत्र मास के शुक्लपक्ष की अष्टमी तिथि के दिन रात्रि में अन्नपूर्णा जी में जागरण करने से मनुष्य कभी भी शोकग्रस्त नहीं होता और आनन्दमय हो जाता है।

माता च पार्वती देवी पिता देवो महेश्वरः।
बान्धवाः शिवभक्ताश्च स्वदेशो भुवनत्रयम्[4] ॥

माता देवी पार्वती (अन्नपूर्णा जी) हैं और पिता भगवान शङ्कर (विश्वनाथ जी) हैं तथा शिवभक्त बान्धव हैं। इस प्रकार तीनों लोक अपना ही देश है। माता अन्नपूर्णा जी की महिमा तो यहाँ तक कही गयी है—

चराचरविधायिनी सकलसम्पदां दायिनी।
शिवार्द्धतनुभासिनी सुरसरितटे वासिनी ॥
समस्तभयहारिणी स्तुतिनुतां मनोमोदिनी।
यथाभिलषितप्रदा भवतु सान्नपूर्णा सदा ॥

---

१. का० ख० ६१।१३४-१३५ ; २. वही—६१।११४।
३. वही—९७।१५० ; ४. अन्नपूर्णास्त्रोत।

आधिव्याधिविनिर्मुक्ता यथाभीष्टफला जनाः।
अन्नपूर्णाप्रसादेन भवन्तु सुखिनः सदा[1]॥

चर-अचर की सृष्टि करने वाली, सकल सम्पत्ति प्रदान करने वाली, शिव के अर्ध-देह रूप में शोभित होने वाली, गङ्गा के किनारे निवास करने वाली, समस्त भय को हरने वाली, स्तुति करने वालों को अभिलषित (मनोवाञ्छित) वस्तु प्रदान करने वाली अन्नपूर्णा जी हैं। इतना ही नहीं, आधि-व्याधि से छुटकारा पाकर और अभिलषित फल प्राप्त कर माता अन्नपूर्णा की कृपा से सब लोग सुखी होते हैं।

अन्नपूर्णे सदा पूर्णे शङ्करप्राणवल्लभे।
ज्ञानवैराग्यसिद्ध्यर्थं भिक्षां देहि च पार्वति[2]॥

हे अन्नपूर्णे! तुम सदा पूर्ण हो, तुम शङ्कर की प्राणप्रिया हो, तुम मुझे ज्ञान, वैराग्य की सिद्धि के लिए भिक्षा दो।

दीनं वदान्यं महदल्पकं वा पुण्यं महापातकसंयुतं वा।
आराधिता सा समतां विधत्ते दयापरा भोगमोक्षैकहेतुः[3]॥

दीन हो या वदान्य हो, महत् हो या अल्प हो, पुण्यात्मा हो या महापापी हो, उपासना करने पर भवानी सभी के प्रति समान भाव दिखलाती हैं, आप परमदयामयी तथा भोग, मोक्ष देने वाली हैं।

वाराणस्यां भैरवो देवः संसारभयनाशनम्।
अनेकजन्मकृतं पापं दर्शनेन विनश्यति॥

वाराणसी के भैरव देव संसार के भय से मनुष्य मात्र को अभय दिलाते हैं एवं अनेक जन्मों में किये हुए पापों का दर्शनमात्र से ही विनाश कर देते हैं।

असिताङ्गो रुरुश्चण्डः क्रोध उन्मत्तसंज्ञकः।
कपाली भीषणश्चैव संहारश्चाष्टमः स्मृतः[4]॥

असिताङ्ग, रुरु, चण्ड, क्रोध, उन्मत्त, कपाली, भीषण तथा संहार नामक आठ भैरव हैं। इन भैरवों का दर्शन-यात्रा करने से किये हुए पापों का प्रायश्चित्त हो जाता है।

दृष्ट्वा च भैरवं कालं कलिकालञ्च सञ्जयेत्।
अनेकजन्मनियुतैर्यत्कृतं जन्तुभिस्त्वघम्॥
तत्सर्वं विलयत्याशु कालभैरवदर्शनात्[5]॥

---

१. अन्नपूर्णास्तोत्र; २. वही; ३. ब्रह्मवैवर्त-पुराण।
४. तन्त्रसार; ५. का० ख० ३१।१४५।

काशी में कालभैरव का दर्शन कर मनुष्य कलि-काल पर विजय प्राप्त कर लेता है। अनेक जन्मों के एकत्रित पाप भैरव-दर्शन से विनष्ट हो जाते हैं।

श्रीमतः कालराजस्य कलिकालार्तिहारिणः।
निजभक्तं जनं पाति यः पापात्पापभक्षणः[1] ॥

कलिकाल की पीड़ा हरण करने वाले, पाप का भक्षण (नाश) करने वाले श्रीकालभैरव अपने भक्तों की रक्षा करते रहते हैं।

तस्मिन्नामर्दके पीठे जप्त्वा स्वाभीष्टदेवताम्।
षण्मासं सिद्धिमाप्नोति साधको भैरवाज्ञया[2] ॥

साधक पुरुष आमर्दक पीठ पर छः मासपर्यन्त अपने इष्टदेवता का जप करने से भैरव की आज्ञानुसार सिद्धि को प्राप्त करता है।

भौमे भैरवयात्रा च कार्या पातकहारिणी[3]।
अष्टम्याञ्च चतुर्दश्यां रविभूमिजवासरे।
यात्राञ्च भैरवीं कृत्वा कृतैः पापैः प्रमुच्यते[4] ॥

मंगलवार के दिन भैरव यात्रा करने वाले यात्रियों के महापापों का भी हरण (नाश) हो जाता है। अष्टमी एवं चतुर्दशी तिथि तथा रविवार और मंगलवार को कालभैरव का दर्शन, यात्रा अवश्य करनी चाहिए। इस महाभयनाशक दर्शन से अपने किये हुए पापों की शान्ति होती है और मनुष्य भैरवी यातना से मुक्त हो जाता है।

यत्किञ्चिदशुभं कर्म कृतं मानुषबुद्धितः।
तत्सर्वं विलयं याति कालभैरवदर्शनात्[5] ॥

मनुष्य बुद्धि से जो कुछ अशुभ कर्म किया गया हो वह सब कालभैरव के दर्शन से भस्म (समाप्त) हो जाता है।

मार्गशीर्षाऽसिताऽष्टम्यां कालभैरवसन्निधौ।
उपोष्य जागरं कुर्वन् महापापैः प्रमुच्यते[6] ॥

अगहन मास की कृष्ण अष्टमी के दिन कालभैरव की सन्निधि में उपवासपूर्वक व्रत रहकर रात्रि में जागरण करने से मनुष्य महापापों से भी मुक्त हो जाता है।

---

१. का० ख० ३३।१६१; २. वही—३१।१५२; ३. वही—१००।७४।
४. वही—३१।१४७; ५. वही—३१।१४४; ६. वही—३१।१४३।

कृत्वा च विविधां पूजां महासम्भारविस्तरैः ।
नरो मार्गासिताष्टम्यां वार्षिकं विघ्नमुत्सृजेत्[1] ॥

विविध पूजा सामग्री द्वारा अगहन मास की कृष्णाष्टमी (भैरवाष्टमी) तिथि को विविध प्रकार से पूजा करने से एक वर्ष के विघ्न, जो आने वाले हैं, समाप्त हो जाते हैं।

अष्टौ प्रदक्षिणीकृत्य प्रत्यहं पापभक्षणम् ।
नरो न पापैर्लिप्येत मनोवाक्कायसम्भवैः[2] ॥

पापों का भक्षण करने वाले पापभक्षण (कालभैरव = आमर्दक) की प्रतिदिन आठ परिक्रमा करने वाले व्यक्ति के मन, वाणी और शरीर से जो पाप होते हैं, वे भैरव के दर्शन और परिक्रमा के प्रभाव से नष्ट हो जाते हैं।

गौरीकुण्डं यथा तत्र हंसतीर्थं च निर्मलम् ।
यथा मधुस्रवा गङ्गा काश्यां तदखिलं तथा[3] ॥

हिमालयस्थ केदारखण्ड में जैसे गौरीकुण्ड एवं निर्मल हंसतीर्थ है तथा मधुस्रवा अमृतवाहिनी मन्दाकिनी है, वैसे ही यहाँ काशी में सब तीर्थ अर्थात् गौरीकुण्ड, हंसतीर्थ एवं मन्दाकिनी विद्यमान हैं।

तुषाराद्रिं समारुह्य केदारं वीक्ष्य यत्फलम् ।
तत्फलं सप्तगुणितं काश्यां केदारदर्शने[4] ॥

हिमालय पर कई हजार वर्गफुट चढ़कर श्रीकेदार के दर्शन से जो फल प्राप्त होता है, उससे भी सात गुना अधिक फल काशी में केदार जी के दर्शन से प्राप्त होता है।

धर्मार्थकाममोक्षाणां काश्यां केदारभूमिका ।
सस्यवृद्धिकरी जाता विश्वेशनगरीबलात्[5] ॥

धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की प्राप्ति का एकमात्र स्थल काशी में स्थित केदारभूमि ही है। विश्वनाथ की नगरी के बल से यह मुक्ति-क्षेत्र को बढ़ाती है।

केदारं यातुकामस्य पुंसो निश्चितचेतसः ।
आजन्मसञ्चितं पापं तत्क्षणादेव नश्यति[6] ॥

केदारेश्वर की यात्रा करने का निश्चित संकल्प मात्र करने से मनुष्यों के आजन्म संचित सभी पाप नष्ट हो जाते हैं।

---

१. का० ख० ३१।१४६ ; २. वही—३१।१५१; ३. वही—७७।४७।
४. वही—७७।४६ ; ५. केदारमाहात्म्य ; ६. का० ख० ७७।४।

दृष्ट्वा केदारशिखरं पीत्वा तत्रत्यमम्बु च ।
सप्तजन्मकृतात्पापान्मुच्यते नात्र संशयः[1] ॥

केदारेश्वर-दर्शन तथा वहाँ पर आचमन करने से सात जन्मों के पापों से मुक्ति होती है, इसमें संशय नहीं है ।

गृहाद् विनिर्गते पुंसि केदारमभिनिश्चितम् ।
जन्मद्वयार्जितं पापं शरीरादपि निर्व्रजेत्[2] ॥

केदारेश्वर भगवान् के दर्शन के लिए जो नर-नारी पूजा की सामग्री साथ में लेकर अपने घर से निकलते हैं, उनके दो जन्मों के संचित सभी पाप नष्ट हो जाते हैं, पश्चात् मुक्ति भी मिलती है ।

तस्य संदर्शनाद्देवि कैवल्यं ज्ञानमाप्नुयात्[3] ।

केदारेश्वर के दर्शन से कैवल्य ज्ञान की प्राप्ति होती है ।

केदारेशं सकृद् दृष्ट्वा देवि मेऽनुचरो भवेत् ।
तस्मात् काश्यां प्रयत्नेन केदारेशं विलोकयेत्[4] ॥

केदारेश्वर शिवलिङ्ग का एक वार दर्शन करने से हे देवि ! वह व्यक्ति मेरा भृत्य (सेवक) हो जाता है । इसलिए काशी में प्रयत्नपूर्वक केदारेश्वर शिवलिङ्ग का दर्शन करना चाहिए ।

मम केदारलिङ्गे यः पत्रं वा पुष्पमेव वा ।
एकद्वित्रिचतुर्वापि चुलुकोदकमेव वा ॥
अर्पयेत् स समस्ताघमुक्तः सर्वाधिपो भवेत् ॥

मेरे केदारेश्वर शिवलिङ्ग में जो पत्र, पुष्प या एक-दो-तीन-चार चुलुक जल ही अर्पित करता है, उसके समस्त पाप दूर हो जाते हैं और वह सर्वाधिप होता है ।

केदारेश्वरलिङ्गस्य श्रुत्वोत्पत्तिं कृती नरः ।
शिवलोकमवाप्नोति निष्पापो जायते क्षणात्[5] ॥

केदारेश्वर शिवलिङ्ग की उत्पत्ति की कथा सुनकर बुद्धिमान् व्यक्ति कृतकृत्य हो जाता है । उसे शिवलोक की प्राप्ति होती है तथा वह व्यक्ति तत्क्षण निष्पाप हो जाता है ।

---

१. का० ख० ७७।८ ; २. वही—७७।५ ; ३. केदारमाहात्म्य ।
४. का० ख० ७७।६६ ; ५. वही—७७।७४ ।

कृत्याकृत्यविवेकशासनविधेर्मुक्तो हि कोऽत्र शृणु ।
श्रीकेदारमहीविसृष्टतनुकान्नास्त्येव तच्छासनम् ॥

कौन व्यक्ति कृत्याकृत्य-विवेक नियमों से छुटकारा पा जाता है, इसे सुनो ! जो केदार-भूमि में अपने देह का परित्याग कर देता है, उसे कृत्याकृत्य-विवेक शासन से मुक्ति मिल जाती है ।

ओङ्कारेशस्य लिङ्गस्य कथमत्र समागमः ।
अतिपुण्यतमात्तस्मात् क्षेत्रादमरकण्टकात् ॥
किमात्मकोऽयमोङ्कारो महिमाऽस्य च को हर[1] ! ॥

हे हर ! आप यह बतायें कि ओंकारेश्वर लिङ्ग का अतिपुण्यतम अमरकण्टक क्षेत्र से यहाँ कैसे आगमन हुआ ? इस ओंकारेश्वर शिवलिङ्ग का स्वरूप क्या है तथा इसकी महिमा क्या है ?

ओङ्कारं प्रणवं सारं परंब्रह्मप्रकाशकम् ।
शब्दब्रह्मत्रयोरूपं नादबिन्दुकलालयम् ॥
सदक्षरं चादिरूपं विश्वरूपं परावरम्[2] ॥

श्री गर्ग ऋषि जी स्कन्द जी से कहते हैं कि ओंकार प्रणव है, परमतत्त्व है, ब्रह्म का प्रकाशक है, शब्दब्रह्म है। ऋग्यजु:सामवेदरूप, नाद, बिन्दु तथा कला का आधार है। सत् है, अक्षर है, आदिरूप, विश्वरूप एवं परममहत् तथा परमह्रस्व-रूप भी है।

उकारमथ तस्याग्रे रजोरूपं यजुर्जनिम् ।
विधातारं समस्तस्य स्वाकारमिव बिम्बितम्[3] ॥

ॐ इस आकार में स्थित उकार यजुर्वेद का क्षेत्र है। यह रजोगुणरूप है । स्वाकार, ज्ञानाकार के समान बिम्बित समस्त लोक का निर्माता है ।

स्वात्मारामनन्तं च सर्वगं सर्वदर्शिनम् ।
सर्वदं सर्वभोक्तारं सर्वं सर्वसुखास्पदम्[4] ॥

ॐ स्वातमाराम है, अनन्त है, सर्वगामी और सर्वद्रष्टा है। सब कुछ प्रदान करने वाला, सभी का भोक्ता, सभी सुखों का आधार एवं सर्वस्व वही ओंकारेश्वर हैं।

---

१. का० ख० ७३।७३-७४; २. वही—७४।८३-८४ ।
३. वही – ७३।८३]; ४. वही—७४।८८ ।

अकाराख्यमिदं लिङ्गमुकाराख्यमिदं परम् ।
मकाराख्यमेतच्च नादाख्यं बिन्दुसंज्ञकम्[१] ।।

यह ओंकार नामक शिवलिङ्ग अकार, उकार, मकार, नाद और बिन्दु से परिपूर्ण ॐकारात्मक है।

अकारं सत्त्वसम्पन्नमृक्क्षेत्रं सृष्टिपालकम् ।
ओङ्कारेश्वरनामैतदस्तु भक्तैकमुक्तिदम्[२] ।।

अकार सत्त्वगुण सम्पन्न है, ऋग्वेद का क्षेत्र और सम्पूर्ण सृष्टि का पालक है। यह ओंकारेश्वर नाम भक्तों के लिये एकमात्र मुक्ति प्रदान करने वाला है।

नम ओङ्काररूपाय नमोऽक्षरवपुर्धृते ।
नमोऽकारादिवर्णानां प्रभवाय सदाशिव ।।
अकारस्त्वमुकारस्त्वं मकारस्त्वमनाकृते ।
ऋग्यजुःसामरूपाय रूपातीताय ते नमः[३] ।।

ॐकार रूप के लिये नमस्कार है। अकार, उकार आदि अक्षररूप शरीर को धारण करने वाले अविनश्वर ऊँकार को नमस्कार है। अकारादि वर्णों की उत्पत्ति के कारण सदाशिवरूप आपको नमस्कार है।

हे निराकार ! आप ही अकार, उकार और मकार हैं। रूप (आकार) से परे निर्गुण, निराकार, ऋग्, यजुः एवं सामवेदरूप आपको नमस्कार है।

ओङ्कारदर्शनादेव वाजिमेधफलं लभेत् ।
तस्मात्काश्यां प्रयत्नेन दृश्य ओङ्कार ईश्वरः[४] ।।

ओंकारेश्वर के दर्शनमात्र से अश्वमेध यज्ञ का फल प्राप्त होता है। इसलिए काशी में प्रयत्नपूर्वक ओंकारेश्वर का दर्शन करना चाहिए।

कृत्वाऽपि मोहात्पापानि भूरीण्येव महान्त्यपि ।
काश्यामोङ्कारमालोक्य कुतस्त्रस्यति वै यमात्[५] ।।

अज्ञानता के कारण बड़े से बड़े अनेक पापों के करने के पश्चात् भी यदि काशी में ओंकारेश्वर का दर्शन करता है, तो उस जीव को यमराज से भला कहां भय हो सकता है ?

---

१. का० ख० ७३।१५३ ; २. वही—७३।८२ ; ३. वही—७३।१०१-१०२ ।
४. वही—७३।१६३ ; ५. वही—७३।१६६ ।

नामश्रवणतोऽपीह यल्लिङ्गानां शुभानने ।
वृजिनानि क्षयं यान्ति वर्धन्ते पुण्यराशयः ॥
ओङ्कारः प्रथमं लिङ्गं द्वितीयं च त्रिलोचनम् ।
तृतीयश्च महादेवः कृत्तिवासाश्चतुर्थकम् ॥
रत्नेशः पञ्चमं लिङ्गं षष्ठं चन्द्रेश्वराभिधम् ।
केदारः सप्तमं लिङ्गं धर्मेशश्चाष्टमं प्रिये ॥
वीरेश्वरं च नवमं कामेशं दशमं विदुः ।
विश्वकर्मेश्वरं लिङ्गं शुभमेकादशं परम् ॥
द्वादशं मणिकर्णीशमविमुक्तं त्रयोदशम् ।
चतुर्दशं महालिङ्गं मम विश्वेश्वराभिधम् ॥
प्रिये चतुर्दशैतानि श्रियो हेतूनि सुन्दरि ।
एतेषां समवायोऽयं मुक्तिक्षेत्रमिहेरितम्[1] ॥

देवाधिदेव भगवान् शङ्कर पार्वती जी से कहते हैं कि हे शुभानने ! जिन लिङ्गों के केवल नाम भी सुन पाने से पापसमूह का क्षय (नाश) और पुण्यराशियों की वृद्धि होती है, उनमें सर्वप्रथम ओङ्कारेश्वर, २. त्रिलोचन, ३. महादेव, ४. कृत्तिवासेश्वर, ५. रत्नेश्वर, ६. चन्द्रेश्वर, ७. केदारेश्वर, ८. धर्मेश्वर, ९. वीरेश्वर, १०. कामेश्वर, ११. विश्वकर्मेश्वर, १२. मणिकर्णिकेश्वर, १३. अविमुक्तेश्वर तथा १४. विश्वेश्वर महालिङ्ग को समझना चाहिए ।

हे प्रिये ! उपर्युक्त ये चौदह लिङ्ग ही मोक्षश्री के हेतु हैं । हे सुन्दरि ! इन्हीं के जमावड़े को मुक्तिक्षेत्र कहा गया है ।

तस्मात्सर्वप्रयत्नेन काशीफलमभोप्सुभिः ।
पूज्यान्येतानि लिङ्गानि भक्त्या परमया मुने[2] ॥

स्कन्द जी अगस्त्य मुनि से कहते हैं कि हे मुने ! इसीलिए काशी के फलों को चाहने वालों को सब प्रयत्न उठाकर बड़ी भक्ति के साथ इन लिङ्गों का पूजन करना चाहिए ।

---

१. का० ख० ७३।३१-३६ ; २ वही—७३।४१ ।

अन्यान्यपि च विन्ध्यारे देव्यै प्रोक्तानि शम्भुना ।
स्वभक्तानां हितार्थाय तान्यथाऽऽकर्णयाऽग्रज ॥
शैलेशः सङ्गमेशश्च स्वर्लीनो मध्यमेश्वरः ।
हिरण्यगर्भ ईशानो गोप्रेक्षो वृषभध्वजः ॥
उपशान्तशिवो ज्येष्ठो निवासेश्वर एव च ।
शुक्रेशो व्याघ्रलिङ्गं च जम्बुकेशं चतुर्दशम् ॥
मुने चतुर्दशैतानि महान्त्यायतनानि वै ।
एतेषामपि सेवातो नरो मोक्षमवाप्नुयात्[1] ॥

स्कन्द जी अगस्त्य मुनि से कहते हैं कि हे अग्रजन्मन् ! विन्ध्यमानभञ्जक अगस्त्य ! भगवान् शङ्कर ने अपने भक्तों के कल्याणार्थ अन्यान्य भी जिन-जिन लिङ्गों को देवी से कहा था, उनके नाम भी श्रवण करो—

शैलेश्वर, संगमेश्वर, स्वर्लीनेश्वर, मध्यमेश्वर, हिरण्यगर्भेश्वर, ईशानेश्वर, गोप्रेक्षेश्वर, वृषभध्वजेश्वर, उपशान्त शिव, ज्येष्ठेश्वर, निवासेश्वर, शुक्रेश्वर, व्याघ्रेश्वर तथा जम्बुकेश्वर ये चतुर्दश लिङ्ग हैं ।

हे मुने ! ये चौदहों महायतन हैं, इन लिङ्गों के सेवन से भी मनुष्यों को मोक्ष-प्राप्ति होती है ।

चैत्रकृष्णप्रतिपदं समारभ्य प्रयत्नतः ।
आचतुर्दशि पूज्यानि लिङ्गान्येतानि सत्तमैः ॥
एतेषां वार्षिकी यात्रा सुमहोत्सवपूर्वकम् ।
कार्या मुमुक्षुभिः सम्यक् क्षेत्रसंसिद्धिदायिनी[2] ॥

उत्तम मनुष्यों को प्रयत्नपूर्वक चैत्रमास की कृष्णप्रतिपदा तिथि से आरम्भ कर चतुर्दशीपर्यन्त इन (उपर्युक्त चतुर्दश) लिङ्गों का पूजन करना चाहिए तथा मोक्षार्थी लोगों को चाहिए कि इन लिङ्गों की वार्षिक यात्रा बड़े उत्सव के साथ सम्पन्न करें। उसके द्वारा सम्पूर्ण रीति से क्षेत्र की सिद्धि प्राप्त होती है ।

स्नात्वा मत्स्योदरीतीर्थे विलोक्योङ्कारमीश्वरम् ।
न जातु जायते जन्तुर्जननीजठरे क्वचित्[3] ॥

कोई भी जीव मत्स्योदरीतीर्थ में स्नान करने के पश्चात् यदि ओङ्कारेश्वर का

---

१. का० ख० ७३।५९-६२ ; २. वही—७३।६३-६४ ; ३. वही—७३।१५५ ।

दर्शन करता है, तो उसे पुनः कभी भी जननी के जठर का दुःख नहीं भोगना पड़ता, अर्थात् उसकी मुक्ति हो जाती है।

एतन्नादेश्वरं लिङ्गमेतल्लिङ्गं सुदुर्लभम् ।
रम्ये मत्स्योदरीतीरे दृष्टं स्पृष्टं विमुक्तिदम्[1] ॥

यही (उपर्युक्त) नादेश्वरलिङ्ग है—यह लिङ्ग अत्यन्त ही दुर्लभ है, सुरम्य मत्स्योदरी के तीर पर दर्शन और स्पर्शन करने से यह विशेष मुक्ति प्रदान करता है।

दुर्लभं मानवं जन्म चतुर्वर्गैकसाधनम् ।
जलबुद्बुदवत्तस्यान्नादेशो येन नेक्षितः[2] ॥

जो कोई नादेश्वर का दर्शन नहीं कर सका, उसका दुर्लभ मनुष्यजन्म चतुर्वर्ग का एकमात्र साधन होने पर भी जल के बुल्ले-सा व्यर्थ हो हो जाता है।

रुद्राणां नियुतं जप्त्वा यत्फलं सम्यगाप्यते ।
तत्फलं लभते नूनं भक्त्योङ्कारविलोकनात्[3] ॥

एक लाख रुद्रजप करने से जो फल प्राप्त होता है, भक्तिपूर्वक ओङ्कारेश्वर का दर्शन करने से भी वही फल अवश्य प्राप्त होता है।

केवलं भूमिभाराय जन्मिनो यस्य तस्य वै ।
येनाऽऽनन्दवने दृष्टो नोङ्कारः सर्वकामदः[4] ॥

जिसने आनन्दवन (काशी-क्षेत्र) में सर्वाभीष्टदायक ओङ्कारेश्वर का दर्शन नहीं किया, उस जन्मधारी की उत्पत्ति केवल पृथिवी का बोझ बढ़ाने के लिए ही हुई है।

एकमोङ्कारमालोक्य समस्ते क्षोणिमण्डले ।
लिङ्गजातानि सर्वाणि दृष्टानि स्युर्न संशयः[5] ॥

एकमात्र ओङ्कारेश्वर के दर्शन करने से ही समस्त भूमण्डल के समग्र लिङ्ग-समूहों के दर्शन करने का पुण्य निश्चय ही प्राप्त हो जाता है।

प्रणवेशं प्रणम्याथ यद्यन्यत्र विपद्यते ।
स्वर्गलोकमवाप्याथ काश्यां मुक्तिमवाप्नुयात्[6] ॥

ओङ्कारेश्वर के प्रणाम करने के पश्चात् यदि मनुष्य किसी अन्य स्थान पर

१. का० ख० ७३।१५६; २. वही—७३।१६४। ३. वही—७३।१६९।
४. वही—७३।१७०; ५. वही—७३।१७१; ६. वही—७३।१७२।

जाकर मृत्यु को प्राप्त हो जाता है, तो वह स्वर्गलोक में पहुँचकर पुनः काशी में मोक्ष को प्राप्त करता है।

अस्मिँल्लिङ्गे सदा ब्रह्मन् स्थास्यामीति विनिश्चितम्।
दास्यामि च सदा मोक्षमेतल्लिङ्गार्चकाय वै॥
ओङ्कारं सकृदप्यत्र नरो नत्वा प्रयत्नतः।
कृतकृत्यो भवेन्नूनं परमान्मदनुग्रहात्[1]॥

देवाधिदेव भगवान् शङ्कर ब्रह्मा जी से कहते हैं कि हे ब्रह्मन्! मैं इस (ओङ्कारेश्वर) लिङ्ग में सर्वदैव स्थित रहूँगा, यह निश्चित है और इस लिङ्ग के अर्चकों को सदा मोक्ष दिया करूँगा। जो मनुष्य प्रयत्न करके एक बार भी यहाँ पर ओङ्कारेश्वर को प्रणाम कर लेगा, वह मेरे परम अनुग्रह से अवश्यमेव कृतकृत्य हो जायेगा।

ओङ्कारपश्चिमे भागे तारतीर्थमनुत्तमम्।
कृतोदकक्रियस्तत्र नरस्तरति दुर्गतिम्[2]॥

ओङ्कारेश्वर के पश्चिम भाग में उत्तम तारतीर्थ है, वहाँ पर स्नानादि जलक्रियाओं के करने से मनुष्य दुर्गति से निस्तार प्राप्त करता है।

ओङ्कारेशस्य ये भक्ता ज्ञेयास्ते नैव मानवाः।
मनुष्यचर्मणा नद्धास्ते रुद्रा मोक्षगामिनः[3]॥

जो मनुष्य ओङ्कारेश्वर के भक्त हैं, उनको कदापि मनुष्य नहीं समझना चाहिए। वे तो मनुष्य के चमड़े से मढ़े हुए मोक्षगामी (जीवन्मुक्त) साक्षात् रुद्र ही हैं।

अपि काश्यां वसेद्यस्तु सर्वाशी सर्वविक्रयी।
स यां गतिं लभेन्मर्त्यो यज्ञैर्दानैर्न साऽन्यतः[4]॥

काशीवासी मनुष्य सर्वभक्षी और सर्वविक्रयी होने पर भी जिस गति को प्राप्त करता है, वह गति दूसरे किसी स्थान में विविध यज्ञ और दानों के करने पर भी नहीं प्राप्त हो सकती।

रागबीजसमुद्भूतः संसारविटपो महान्।
दीर्घस्वापकुठारेण छिन्नः काश्यां न वर्धते[5]॥

---

१. का० ख० ७३।१७३-१७४; २. वही—७३।१७५; ३. वही—७३।१७६।
४. वही—७४।३८; ५ वही—७४।३९।

राग रूप बीज से उत्पन्न हुआ विशाल संसाररूपी वृक्ष काशी में महानिद्रा-रूपी कुल्हाड़ी से कट जाने पर पुनः नहीं पनपने पाता।

विभूतिः सर्वलोकानां सत्यादीनां सुभङ्गुरा।
अभङ्गुराऽविमुक्तस्य सा तु लभ्या शिवाज्ञया॥
कृमिकीटपतङ्गानामविमुक्ते तनुत्यजाम्।
विभूतिर्दृश्यते या सा क्वास्ति ब्रह्माण्डमण्डले[1]॥

सत्यादि समग्र लोगों का ऐश्वर्य क्षणभंगुर है; पर स्थिर सम्पत्ति तो मात्र अविमुक्त-क्षेत्र की है। वह भी भगवान् शिव की आज्ञा होने पर ही प्राप्त हो सकती है। इस अविमुक्त-क्षेत्र में कृमि, कीट एवं पतंग आदि को भी शरीर त्यागने से जैसी विभूति दिखाई पड़ती है, भला ब्रह्माण्डमण्डल भर में वैसी और कहाँ है?

वाराणसीं यदा प्राप्तः कदाचित्कालपर्ययात्।
स उपायो विधातव्यो येन नो निष्क्रमो बहिः[2]॥

यदि कालक्रम से मनुष्य कदाचित् वाराणसीपुरी में पहुँच जाता है, तो उसे ऐसा उपाय करना चाहिए, जिससे उसे वहाँ से कभी भी बाहर न निकलना पड़े।

पूर्वतो मणिकर्णीशो ब्रह्मेशो दक्षिणे स्थितः।
पश्चिमे चैव गोकर्णो भारभूतस्तथोत्तरे॥
इत्येतदुत्तमं क्षेत्रमविमुक्ते महाफलम्।
मणिकर्णीह्रदे स्नात्वा दृष्ट्वा विश्वेश्वरं विभुम्॥
क्षेत्रं प्रदक्षिणीकृत्य राजसूयफलं लभेत्।
तत्र श्राद्धप्रदातुश्च मुच्यन्ते प्रपितामहाः॥
अविमुक्तसमं क्षेत्रमपि ब्रह्माण्डगोलके।
न विद्यते क्वचित्सत्यं सत्यं साधकसिद्धिदम्[3]॥

पूर्व में—मणिकर्णिकेश्वर, दक्षिण में—ब्रह्मेश्वर, पश्चिम में—गोकर्णेश्वर तथा उत्तर में—भारभूतेश्वर, इतना स्थान अविमुक्त-क्षेत्र में सर्वश्रेष्ठ तथा महाफल-दायक है। जो काई व्यक्ति मणिकर्णिकाकुण्ड में स्नान और भगवान् विश्वेश्वर का

१. का० ख० ७४।४२-४३; २. वही—७४।४४; ३. वही—७४।४५-४८।

दर्शन करने के पश्चात् इस कथित क्षेत्र (अन्तर्गृह) की प्रदक्षिणा करता है, उसे राजसूय यज्ञ करने का फल प्राप्त होता है और वहाँ पर श्राद्ध करने से पितरों का उद्धार हो जाता है। ब्रह्माण्डमण्डल में अविमुक्त-क्षेत्र के समान साधकों का सिद्धिदायक दूसरा कोई भी क्षेत्र कहीं नहीं है। यह बात सर्वथा सत्य है।

ब्रह्माण्डोदरमध्ये तु यानि तीर्थानि सर्वतः।
तानि वैशाखभूतायामायान्त्योङ्कृतिदर्शने[1] ॥

ब्रह्माण्ड के भीतर सर्वत्र जितने भी तीर्थ हैं, वे सभी वैशाख मास की शुक्ला चतुर्दशी को ओङ्कारेश्वर के दर्शनार्थ (काशी में) आते हैं।

लिङ्गाग्रे श्रीमुखीनाम्नी गुहाऽस्ति परमोत्तमा।
पातालस्य च तद्द्वारं तत्र सिद्धा वसन्ति हि ॥
तिष्ठेयुः पञ्चरात्रं ये गुहायां तत्र सुव्रताः।
ते नागकन्याः पश्यन्ति ब्रूयुस्ताश्च शुभाशुभम्[2] ॥

(ओङ्कारेश्वर) लिङ्ग के सन्मुख श्रीमुखी नाम की परमोत्तम गुफा है। वह पाताल (जाने) का द्वार है तथा उसमें सिद्ध लोग निवास करते हैं। जो लोग उत्तम व्रत धारण करके पाँच रात्रि उस गुफा में निवास करते हैं, उनको नागों की कन्यायें दिखाई पड़ती हैं तथा वे सभी शुभाशुभ (कर्मों को) कह देती हैं।

कन्दरोत्तरदिग्भागे तत्र कूपो रसोदकः।
आषण्मासं च तत्पीत्वा पिबेद् ब्रह्मरसायनम्[3] ॥

उस (श्रीमुखी नाम्नी) गुफा के उत्तर-भाग में एक रसोदक नामक कूप है, छः मासपर्यन्त उस कूप का जल पीने से साक्षात् ब्रह्मरसायन पान करने का स्वाद मिलने लगता है।

तत्र मत्स्योदरीं स्नात्वा स्वर्धुनीं वरुणाप्लुताम्।
कृतकृत्यो भवेज्जन्तुर्नैव शोचति कुत्रचित्[4] ॥

वहाँ पर (ओङ्कारेश्वर के समीप) गङ्गा और वरुणा के जल से परिपूर्ण मत्स्योदरी तीर्थ में स्नान करके मनुष्य कृतकृत्य हो जाता है और उसे पुनः कभी (कहीं पर भी) शोक नहीं करना पड़ता।

---

१. का० ख० ७४।१००; २. वही—७४।१०१-१०२; ३. वही—७४।१०३।
४. वही—७४।१०५।

असंख्याता गताः सिद्धिमोङ्कारेश्वरसेवकाः ।
पार्थिवेनैव देहेन दिव्यभूतेन तत्क्षणात्[1] ॥

ओङ्कारेश्वर के असंख्य सेवक लोग इसी पार्थिव शरीर से दिव्यरूप होकर तत्काल परमसिद्धि को प्राप्त हो गये हैं।

अविमुक्तं परं क्षेत्रं ब्रह्माण्डादपि सर्वतः ।
ततोऽपि पर ओङ्कार उक्तो मत्स्योदरीतटे[2] ॥

(प्रथमतया तो) समग्र ब्रह्माण्ड भर में अविमुक्त-क्षेत्र सबसे प्रधान है। उसमें भी मत्स्योदरी के तीर पर ओङ्कारेश्वर का स्थान तो और भी श्रेष्ठ है।

प्रणवेशोऽङ्क्ष यैः काश्यां न नतो नापि चर्चितः ।
किमर्थं ते समुत्पन्ना मातृतारुण्यहारिणः[3] ॥

ओहो! जिन लोगों ने काशी में ओङ्कारेश्वर को न तो प्रणाम ही किया और न पूजन ही किया, वे सभी अपनी माता की तरुणाई बिगाड़ने के लिए क्यों उत्पन्न हुए?

अपि वार्धकमासाद्य यैः काशी नैव शीलिता ।
मानुषे दुर्लभे नष्टे कुतस्तेषां महासुखम्[4] ॥

जिन लोगों ने वृद्धावस्था में भी काशी का सेवन (काशीवास) नहीं किया, वे सब इस परम-दुर्लभ मनुष्य जन्म के बीत जाने पर फिर कहाँ से महासुख प्राप्त कर सकते हैं?

यावन्नेन्द्रियवैकल्यं यावन्नैवायुषः क्षयः ।
तावत्सेव्यं प्रयत्नेन शम्भोरानन्दकाननम्[5] ॥

जब तक इन्द्रियाँ विकल (शिथिल) नहीं हो जातीं, किं वा आयुष्य का क्षय नहीं हो जाता, तभी तक भगवान् शङ्कर जी का आनन्दकानन (काशी-क्षेत्र) प्रयत्न-पूर्वक सेवनीय है।

य आनन्दवनं शम्भोः शिश्रियुः श्रीनिकेतनम् ।
अचला श्रीर्न मुञ्चेत्तान् महासौख्यैकशेवधीन्[6] ॥

जो लोग श्री के मन्दिर, महादेव के आनन्दवन (काशी-क्षेत्र) में आश्रय ले

---

१. का० ख० ७४।१०६; २. वही—७४।१०७; ३. वही—७४।१०८।
४. वही—७४।११३; ५. वही—७४।११४; ६. वही—७४।११५।

लेते हैं, उन सभी महासुखों के प्रधान अवलम्बनरूप लोगों को लक्ष्मी आचल होकर कभी छोड़ती ही नहीं हैं।

इल्वलारे परं स्थानमोङ्कारमविमुक्तके।
तत्र सिद्धिं परां जग्मुः साधका बहुशो मुने[1] ॥

स्कन्द जी अगस्त्य मुनि से कहते हैं कि हे इल्वलरिपो! अविमुक्त-क्षेत्र में ओङ्कारेश्वर एक प्रधान स्थान है; क्योंकि हे मुने! वहाँ पर बहुत से साधक लोग परमसिद्धि को प्राप्त कर चुके हैं।

कलौ कलुषचित्तानां पुरो नाख्येयमेव हि।
प्रणवेश्वरमाहात्म्यं नास्तिकानां विशेषतः[2] ॥

कलियुग में पाप हृदय और विशेष करके नास्तिक लोगों के सामने इन ओङ्कारेश्वर के माहात्म्य को कभी नहीं कहना चाहिए।

ओङ्कारसदृशं लिङ्गं न क्वचिज्जगतीतले।
इति गौर्यै समाख्यातं देवदेवेन निश्चितम्[3] ॥

भूतल में ओङ्कारेश्वर के समान दूसरा कोई भी लिङ्ग नहीं है, यह बात निश्चितरूप से श्रीमहादेव ने गौरीदेवी से कही है।

---

१. का० ख० ७४।११८; २. वही—७४।११९। ३. वही—७४।१२१।

।। चतुर्थ अध्याय ।।

यत्र रत्नमयं लिङ्गमाविर्भूतं स्वयं मुने ।
तस्य स्फुरत्प्रभाजालैस्ततमम्बरमण्डलम्[1] ।।

हे मुने ! काशी में स्वयं रत्नमय शिवलिङ्ग आविर्भूत हुआ है । इस देदीप्यमान (चमकते हुये) प्रभाशील लिङ्ग की प्रभा से सम्पूर्ण आकाशमण्डल भासित होता रहता है ।

काश्यां विश्वेश्वरो देवः संसारभयनाशनम् ।
अनेकजन्मकृतं प्रापं दर्शनेन विनश्यति ।।

काशी में विश्वेश्वर देवता हैं जो जन्म-मरणरूप संसार के भय के नाशक हैं, जिनके दर्शन से अनेक जन्मों का किया हुआ पाप विनष्ट हो जाता है ।

भद्रेश्वराद्यातुधान्यामुपशान्तशिवो मुने ।।
तस्य लिङ्गस्य संस्पर्शात्परां शान्ति स मृच्छति ।
उपशान्तशिवं लिङ्गं दृष्ट्वा जन्मशतार्जितम्[2] ।।

हे मुने ! भद्रेश्वर से यातुधानी दिशा अर्थात् दक्षिण में उपशान्तीश्वर शिव हैं । उस लिङ्ग के स्पर्श से परम शान्ति की प्राप्ति होती है । उपशान्तीश्वर नामक शिवलिङ्ग के दर्शन से सैकड़ों जन्मों के अर्जित पाप नष्ट होते हैं ।

(भद्रेश्वर उपशान्तेश्वर के मन्दिर में जोर(बुखार)हरेश्वर के नाम से प्रसिद्ध हैं ।)

निशामय मुने तं तु भक्तानां हितकाम्यया ।।
लिङ्गं यः पार्वतीशाख्यं काश्यां सम्पूजयिष्यति ।
तद्देहावसिंति प्राप्य काशोलिङ्गं भविष्यति[3] ।।

भक्तों की हितकामना से हे मुने ! सुनो, जो काशो में पार्वतीश्वर नाम के शिवलिङ्ग की पूजा करेगा वह देहावसान के बाद काशो के शिवलिङ्ग में लीन हो जायेगा, अर्थात् शिवमय हो जायेगा ।

---

१. का० ख० ६७।८ ; २. वही—९७।४८-४९ ; ३. वही—९०।२०-२१ ।
का० मा०—२६

त्रिपुण्ड्रितमहाभाला लसद्रुद्राक्षमालिनः ।।
विभूतिधारिणो भक्त्या रुद्रसूक्तजपप्रियान् ।
लिङ्गाराधनसंसक्तान् शिवनामकृतादरान् ।।
एक एव हि विश्वेशो मुक्तिदो नान्य एव हि[1] ।

स्कन्द जी वेदव्यास जी से कहते हैं कि जो व्यक्ति मस्तक पर त्रिपुण्ड्र लगाते हैं, रुद्राक्ष को माला धारण करते हैं तथा भस्म लगाते हैं और भक्तिपूर्वक रुद्र-सूक्तों का जप एवं शिवलिङ्गाराधन करते हुए शिव-नामों का आदरपूर्वक स्मरण करते हैं, उन्हें मुक्ति देने वाले एकमात्र भगवान् विश्वनाथ जी ही हैं ।

वीरभद्रेश्वरं लिङ्गं ध्यायेदद्यापि निश्चलः ।
तस्य दर्शनमात्रेण वीरसिद्धिः प्रजायते[2] ।।

आज भी जो लोग वीरभद्रेश्वर शिवलिङ्ग का निश्चलरूप से ध्यान करते हैं, उनके दर्शनमात्र से वे लोग वीरसिद्धि को प्राप्त करते हैं ।

आषाढिनार्ऽचितं लिङ्गमाषाढीश्वरसञ्ज्ञिकम् ।
दृष्ट्वाऽऽषाढ्या नरो भक्त्या सर्वैः पापैः प्रमुच्यते[3] ।।

आषाढ़ीगण से अर्चित शिवलिङ्ग आषाढ़ीश्वर के नाम से विख्यात है, उसके दर्शन से सभी पापों से मुक्ति हो जाती है । (आषाढ़ीश्वर भूतभैरव के उत्तर पार्श्व में काशीपुरा में स्थित हैं ।)

सङ्गमेशं महालिङ्गं प्रतिष्ठाप्यादिकेशवः ।
दर्शनादघहं नृणां भुक्तिं मुक्तिं दिशेत्सदा[4] ।।

विष्णु भगवान् कहते हैं कि आदिकेशव द्वारा प्रतिष्ठित सङ्गमेश्वर महाशिवलिङ्ग के दर्शन से ही मनुष्यों को भुक्ति तथा मुक्ति मिलती है । (वरणा-गङ्गा सङ्गम पर स्थित आदिकेशव वसन्त कालेज परिसर में हैं ।)

भागीरथीश्वरं लिङ्गं स्वर्गद्वारस्य सन्निधौ ।
दर्शनाद् ब्रह्महत्यायाः पुरश्चरणमुच्यते[5] ।।

स्वर्ग द्वार के समीप में भागीरथीश्वर शिवलिङ्ग है । उनके दर्शन से ही ब्रह्म-हत्या का पुरश्चरण हो जाता है, अर्थात् ब्रह्महत्या का प्रायश्चित्त होता है ।

---

१. का० ख० ९५।७-९; २. वही—५५।४ ; ३. वही – ५५।२७ ।
४. वही—६१।६; ५. वही—६१।१५८ ।

त्रिसन्ध्येश्वरमालोक्य कृतसन्ध्यस्त्रिकालतः ।
त्रिवेदावर्तजं पुण्यं प्राप्नुयाच्छ्रद्धया द्विजः[1] ॥

द्विजों को त्रिकाल सन्ध्या कर त्रिसन्ध्येश्वर के दर्शन से ऋक्-यजुः-साम के तीन बार पाठ करने का पुण्य होता है। (त्रिकाल सन्ध्या समय पर न करने का जो दोष है, उसका दर्शन-पूजन से हो प्रायश्चित्त हो जाता है।)

आदौ काश्यां धर्ममार्गेण वासः पापत्यागः काशिमाहात्म्यदृष्टिः ।
देहं गेहं पुत्रमित्रादि यस्य सर्वं तुच्छं सोऽधिकारी महात्मा[2] ॥

जो व्यक्ति काशी में पहले धर्ममार्ग से निवास करता है, पाप करना छोड़ देता है, काशी की महिमा पर दृष्टि देता है, देह, घर तथा पुत्र, मित्र आदि सबको तुच्छ समझता है, वही महात्मा काशी में रहने का अधिकारी है।

संसारदावनिर्दग्धजीवभूरुहजीवनम् ।
दुःखार्णवौघपतितप्राणिनिर्वाणकारणम्[3] ॥

यह काशी संसाररूपी वनाग्नि से जले हुये जीवरूपी वृक्षों के जीवन का दुःख-समुद्र से उद्धार कर मोक्ष को प्रदान करती है और मोक्ष का कारण बनती है।

व्याधिभिर्नाभिभूयन्ते नोपसर्गैश्च कैश्चन ।
शोकाग्निना न दह्यन्ते ह्यरुणादित्यसेवनात् ॥
केशवादित्यमाराध्य वाराणस्यां नरोत्तमः ।
परं ज्ञानमवाप्नोति येन निर्वाणभाग् भवेत्[4] ॥

अरुणादित्य की पूजा से किसी भी भाँति की व्याधि और बाधायें नहीं होती हैं। शोकाग्नि भी अरुणादित्य का पूजन करने वाले का कदापि दहन नहीं कर सकता। (अरुणादित्य की मूर्ति 'त्रिलोचन मन्दिर' में है।)

उत्तम मनुष्य वाराणसी पुरी में 'केशवादित्य' के आराधन से उस परमतत्त्व ज्ञान को प्राप्त करता है, जिसके द्वारा अन्त में निर्वाणपद का भागी होता है। (केशवादित्य 'आदिकेशव' मन्दिर में हैं।)

तल्लिङ्गदर्शनात्पुंसां पापं जन्मशतार्जितम् ।
तमोऽर्कोदयमाप्येव तत्क्षणादेव नश्यति[5] ॥

सूर्य के प्रकाश फैलने से जिस तरह अन्धकार दूर हो जाता है, उसी भाँति उस

१. का० ख० ६१।१७५ ; २. त्रि० टे०; पृ० ११४; ३. लिङ्गपुराण।
४. का० ख० ५१।२३,७४; ५. वही—६३।११।

लिङ्ग (ज्येष्ठेश्वर) के दर्शन होते ही लोगों के सैकड़ों जन्म के संचित पाप क्षणमात्र में विलीन (नष्ट) हो जाते हैं।

ज्येष्ठवाप्यां नरः स्नात्वा तर्पयित्वा पितामहान् ।
ज्येष्ठेश्वरं समालोक्य न भूयो जायते भुवि[1] ॥

जो लोग ज्येष्ठवापी में स्नान करके पितरों का तर्पण करते हैं तथा तत्पश्चात् ज्येष्ठेश्वर का दर्शन करते हैं, उन्हें पुनः भूमि पर उत्पन्न नहीं होना पड़ता।

आविरासोत्स्वयं तत्र ज्येष्ठेश्वरसमीपतः ।
सर्वसिद्धिप्रदा गौरी ज्येष्ठा श्रेष्ठा समन्ततः ॥
ज्येष्ठे मासि सिताष्टम्यां तत्र कार्यो महोत्सवः ।
रात्रौ जागरणं कार्यं सर्वसम्पत्समृद्धये[2] ॥

उसी स्थान पर ज्येष्ठेश्वर के समीप में ही सर्वसिद्धिप्रदायिनी तथा सर्वश्रेष्ठा ज्येष्ठा-गौरी स्वयं प्रकट हुई थीं। ज्येष्ठ मास की शुक्ला अष्टमी तिथि को वहाँ पर महोत्सव तथा रात्रि में जागरण—सम्पत्ति को समग्र समृद्धियों (की प्राप्ति) के लिए अवश्य करना चाहिए।

ज्येष्ठां गौरीं नमस्कृत्य ज्येष्ठवापीपरिप्लुता ।
सौभाग्यभाजनं भूयाद्योषा सौभाग्यभागपि[3] ॥

अत्यन्त ही हतभागिनी स्त्री भी ज्येष्ठा वापी में स्नान तथा ज्येष्ठा गौरी के दर्शन करने से परमसौभाग्यवती हो जाती है।

निवासं कृतवान् शम्भुस्तस्मिन् स्थाने यतः स्वयम् ।
निवासेश इति ख्यातं लिङ्गं तत्र परं ततः ॥
निवासेश्वरलिङ्गस्य सेवनात्सर्वसम्पदः ।
निवसन्ति गृहे नित्यं नित्यं प्रतिपदं पुनः[4] ॥

वहाँ (ज्येष्ठा गौरी के समीप ही) महादेव के स्वयं निवास करने के कारण निवासेश्वर नामक एक दूसरा लिङ्ग भी उसी स्थान पर प्रसिद्ध हो गया है। उस निवासेश्वर लिङ्ग के सेवन (पूजन-अर्चन) से गृह में समग्र सम्पत्तियाँ सर्वदैव निवास करती रहती हैं।

---

१. का० ख० ६३।१२; २. वही—६३।१३-१४।
३. वही—६३।१५; ४. वही—६३।१६-१७।

कृत्वा श्राद्धं विधानेन ज्येष्ठस्थाने नरोत्तमः ।
ज्येष्ठां तृप्तिं ददात्येव पितृभ्यो मधुसर्पिषा[1] ।।

जो उत्तम मनुष्य ज्येष्ठेश्वर के समीप में घृत तथा मधु आदि वस्तुओं के साथ विधानपूर्वक श्राद्ध करता है, वह पितरों को सर्वज्येष्ठ तृप्ति से सन्तुष्ट कर देता है।

ज्येष्ठेश्वरोऽर्च्यः प्रथमं काश्यां श्रेयोऽर्थिभिर्नरैः ।
ज्येष्ठा गौरी ततोऽभ्यर्च्या सर्वज्येष्ठमभीप्सुभिः[2] ।।

कल्याण या मोक्ष को चाहने वाले मनुष्य काशी में सर्वप्रथम ज्येष्ठेश्वर महादेव की पूजा-अर्चना करें। उसके पश्चात् सर्वथा सर्वोत्तम होने के लिए ज्येष्ठा-गौरी की पूजा करें। (ज्येष्ठेश्वर काशी देवी जी के बगल में सप्तसागर मोहल्ले में हैं।)

ज्येष्ठेश्वरस्य परितो यानि लिङ्गानि कुम्भज ।
तानि पञ्चसहस्राणि मुनीनां सिद्धिदान्यलम्[3] ।।

स्कन्द जी अगस्त्य मुनि से कहते हैं कि हे कुम्भसम्भव ! ज्येष्ठेश्वर की चारों ओर पाँच सहस्र शिवलिङ्ग हैं, वे सभी मुनियों के लिए बड़े ही सिद्धिदायक हैं।

पराशरेश्वरं लिङ्गं ज्येष्ठादुत्तरे महत् ।
तस्य दर्शनमात्रेण निर्मलं ज्ञानमाप्यते ।।
तत्रैव सिद्धिदं लिङ्गं माण्डव्येश्वरसंज्ञितम् ।
न तस्य दर्शनाज्जातु दुर्बुद्धिं प्राप्नुयान्नरः[4] ।।

पराशरेश्वर नामक एक महालिङ्ग ज्येष्ठेश्वर के उत्तर भाग में विराजमान है, उसके दर्शन मात्र से ही निर्मल ज्ञान प्राप्त किया जाता है। उसी स्थान पर माण्डव्येश्वर नामक एक दूसरा लिङ्ग भी है, उसके दर्शन से मनुष्यों को कभी भी दुर्बुद्धि नहीं होने पाती।

लिङ्गं च शङ्करेशाख्यं तत्रैव शुभदं सदा ।
भृगुनारायणस्तत्र भक्तानां सर्वसिद्धिदः ।।
जबालीश्वरसंज्ञं च लिङ्गं तत्रातिसिद्धिदम् ।
तस्य संदर्शनाज्जातु न जन्तुर्दुर्गतिं व्रजेत्[5] ।।

वहीं पर (ज्येष्ठेश्वर के समीप ही) सदैव शुभदायक शङ्करेश्वर लिङ्ग है,

---

१. का० ख० ६३।१८; २. वही—६३।२०; ३. वही—६५।१।
४. वही—६५।२-३; ५. वही—६५।४-५।

जिसके समीप में ही भक्तों के सर्वसिद्धिदायक भृगुनारायण सुशोभित रहते हैं। उसी स्थल में अतिसिद्धिप्रद जाबालीश्वर नामक एक लिङ्ग है, उसके दर्शनमात्र से मनुष्य कभी दुर्गति में नहीं पड़ता।

सुमन्तुमुनिना श्रेष्ठस्तत्रादित्यः प्रतिष्ठितः।
तस्य सन्दर्शनादेव कुष्ठव्याधिः प्रशाम्यति[1]॥

स्कन्द जी कहते हैं कि सुमन्तु मुनि ने श्रेष्ठ विमलादित्य सूर्य नामक शिवलिङ्ग की प्रतिष्ठा की है, जिसके दर्शन मात्र से ही कुष्ठ रोग नष्ट हो जाता है। (हरिकेशेश्वर के बगल में विमलादित्य 'खारीकुवाँ' में स्थित हैं।)

भैरवी भीषणा नाम तत्र भीषणरूपिणी।
क्षेत्रस्य भीषणं सर्वं नाशयेद् भावतोऽर्चिता॥
तत्रोपजंघने लिङ्गं कर्मबन्धविमोक्षणम्।
नृभिः संसेवितं भक्त्या षण्मासात्सिद्धिदं परम्[2]॥

और वहीं पर भीषणरूपिणी भीषणा नामक भैरवी हैं। भक्तिभाव से उनका पूजन-अर्चन करने से वे क्षेत्र के सम्पूर्ण भय को दूर कर देती हैं। उसी स्थान के समीप में ही एक कर्मबन्धविमोक्षक लिङ्ग भी है, वह मनुष्यों के छः मासपर्यन्त सेवन (पूजन) करने से ही परमसिद्धि को प्रदान करता है।

भारद्वाजेश्वरं लिङ्गं लिङ्गं माद्रीश्वरं वरम्।
एकत्र संस्थिते द्वे तु द्रष्टव्ये सुकृतात्मना॥
अरुणिस्थापितं लिङ्गं तत्रैव कलशोद्भव।
तस्य लिङ्गस्य सेवातः सर्वामृद्धिमवाप्नुयात्॥
लिङ्गं वाजसनेयाख्यं तत्रास्त्यतिमनोहरम्।
तस्य संदर्शनात्पुंसां वाजपेयफलं भवेत्[3]॥

वहाँ एक ही स्थान पर भारद्वाजेश्वर तथा माद्रीश्वर लिङ्ग हैं। दोनों भी वहीं विद्यमान हैं, पुण्यात्मा मनुष्यों को ही उनका दर्शन प्राप्त होता है।

हे अगस्त्य! वहीं पर अरुण द्वारा स्थापित एक शिवलिङ्ग है, जिसको सेवा (पूजा) से सम्पूर्ण समृद्धियाँ प्राप्त हो जाती हैं। वहीं पर वाजसनेय नामक एक अत्यन्त मनोहर लिङ्ग है, उसके दर्शनमात्र से ही लोगों को वाजपेय यज्ञ का फल प्राप्त होता है।

---

१. का० ख० ६५।६; २. वही—६५।७-८; ३. वही—६५।९-११।

कण्वेश्वरं शुभं लिङ्गं लिङ्गं कात्यायनेश्वरम् ।
वामदेवेश्वरं लिङ्गमौतथ्येश्वरमेव च ॥
हारीतेश्वरसंज्ञं च लिङ्गं वै गालवेश्वरम् ।
कुम्भेर्लिङ्गं महापुण्यं तथा वै कौसुमेश्वरम् ॥
अग्निवर्णेश्वरं चैव नैध्रुवेश्वरमेव च ।
वत्सेश्वरं महालिङ्गं पर्णादिश्वरमेव च ॥
सक्तुप्रस्थेश्वरं लिङ्गं कणादेशं तथैव च ।
अन्यत्तत्र महालिङ्गं माण्डूकाय निरूपितम् ॥
बाभ्रवेयेश्वरं लिङ्गं शिलावृत्तीश्वरं तथा ।
च्यवनेश्वरलिङ्गं च शालङ्कायनकेश्वरम्[1] ॥

इसी प्रकार कण्वेश्वर, कात्यायनेश्वर, वामदेवेश्वर, तथ्येश्वर, हारीतेश्वर, गालवेश्वर, कुम्भेश्वर, कौसुमेश्वर, अग्निवर्णेश्वर, नैध्रुवेश्वर, वत्सेश्वर, पर्णादिश्वर, सक्तुप्रस्थेश्वर, कणादेश्वर, माण्डूकेश्वर, बाभ्रवेश्वर, शिलावृत्तीश्वर, च्यवनेश्वर तथा शालंकायनेश्वर लिङ्ग भी ज्येष्ठेश्वर के समीप ही हैं।

कलिन्दमेश्वरं लिङ्गं लिङ्गमक्रोधनेश्वरम् ।
लिङ्गं कपोतवृत्तीशं कङ्केशं कुन्तलेश्वरम् ॥
कण्ठेश्वरं कहोलेशं लिङ्गं तुम्बुरुपूजितम् ।
मतङ्गेशं मरुत्तेशं मगधेयेश्वरं तथा ॥
जातूकर्णेश्वरं लिङ्गं जम्बुकेश्वरमेव च ।
जारुधीशं जलेशं च जाल्मेशं जालकेश्वरम् ॥
एवमादीनि लिङ्गानि अयुतार्द्धानि कुम्भज ।
स्मरणाद्दर्शनात्स्पर्शादर्चनान्नमनात्स्तुतेः ॥
न जातु जायते जन्तोः कलुषस्य समुद्भवः ।
एतेषां शुभलिङ्गानां ज्येष्ठस्थानेऽतिपावने[2] ॥

कलिन्दमेश्वर, अक्रोधनेश्वर, कपोतवृत्तीश्वर, कंकेश्वर, कुन्तलेश्वर, कण्ठेश्वर, कहोलेश्वर, तुम्बुर्वीश्वर, मतङ्गेश्वर, मरुत्तेश्वर, मगधेश्वर, जातूकर्णेश्वर, जम्बुकेश्वर,

---

१. का० ख० ६५।१२-१६; २. वही—६५।१७-२१।

जारुधीश्वर, जलेश्वर, जाल्मेश्वर तथा जालकेश्वर प्रभृति पाँच सहस्र शिवलिङ्ग विराजमान हैं। अत्यन्त पवित्र ज्येष्ठ स्थान में इन समस्त शुभप्रद लिङ्गों के दर्शन, स्पर्शन, पूजन, प्राणायाम, प्रणमन तथा स्तवन करने से किसी प्राणी को पाप कदापि नहीं स्पर्श कर सकता है।

कन्दुकेश्वरभक्तानां मानवानां निरेनसाम्।
योगक्षेमं सदा कुर्याद् भवानी भयनाशिनी॥
मृडानी तस्य लिङ्गस्य पूजां कुर्यात्सदैव हि।
तत्रैव देव्याः सान्निध्यं पार्वत्या भक्तसिद्धिदम्[1]॥

समस्त भयनाशिनी स्वयं भवानी ही कन्दुकेश्वर के निष्पाप भक्त लोगों का सदैव योगक्षेम (कल्याण) करती रहती हैं। पार्वती देवी प्रतिदिन उस लिङ्ग (कन्दुकेश्वर) की पूजा करती हैं तथा वहाँ पर वर्तमान रहकर भक्तलोगों को सिद्धि प्रदान करती रहती हैं।

कन्दुकेशं महालिङ्गं काश्यां यैर्न समर्चितम्।
कथं तेषां भवानीशौ स्यातां सर्वेप्सितप्रदौ॥
द्रष्टव्यं च प्रयत्नेन तल्लिङ्गं कन्दुकेश्वरम्।
सर्वोपसर्गसंघातविघातकरणं परम्[2]॥

जिन लोगों ने कन्दुकेश्वर नामक महालिङ्ग का पूजन ही नहीं किया, तो भला शिव और पार्वती उन सबके अभीष्ट फल को कैसे प्रदान कर सकते हैं। समस्त उपसर्गों की राशि के परमविनाशक कन्दुकेश्वर लिङ्ग का दर्शन सभी लोगों को प्रयत्नपूर्वक अवश्य करना चाहिए।

कन्दुकेश्वरनामाऽपि श्रुत्वा वृजिनसन्ततिः।
क्षिप्रं क्षयमवाप्नोति तमः प्राप्योष्णगुं यथा[3]॥

कन्दुकेश्वर का नाम श्रवण करने मात्र से ही पापसमूह ऐसे शीघ्र क्षय होने लगते हैं, जैसे सूर्य के उदय होते ही अन्धकार विलीन (नष्ट) हो जाता है।

शैलेश्वरं ये द्रक्ष्यन्ति वरणायाः सुरोधसि।
तेषां काश्यां निवसतां दुःखं नाभिभविष्यति[4]॥

काशी में वरणा के सुरम्य तट पर स्थित शैलेश्वर शिवलिङ्ग का जो लोग दर्शन

१. का० ख० ६५।३९-४०; २. वही—६५।४१-४२;
३. वही—६५।४३। ४. वही—६६।१४६।

करते हैं, काशी में रहते हुए उन लोगों को कभी भी दुःख अभिभूत (पीड़ित) नहीं करते हैं। (शैलपुत्री के मन्दिर में शैलेश्वर स्थित हैं।)

यानि ब्रह्माण्डमध्येऽत्र सन्ति लिङ्गानि पार्वति।
तैरर्चितानि सर्वाणि रत्नेशो यैः समर्चितः॥
प्रमादेनापि यैर्गौरि लिङ्गं रत्नेशमर्चितम्।
ते भवन्त्येव नियतं सप्तद्वीपेश्वरा नृपाः[1]॥

भगवान् शङ्कर पार्वती जी से कहते हैं कि हे पार्वति! ब्रह्माण्डमण्डल में जितने भी शिवलिङ्ग हैं, उन सबके पूजन करने का फल इस एक ही रत्नेश्वर लिङ्ग का पूजन करने से प्राप्त हो जाता है। हे गौरि! जो लोग प्रमादवश भी रत्नेश्वर का समर्चन (पूजन-अर्चन) करते हैं, वे अवश्य ही सातों द्वीपों के स्वामी होते हैं।

त्रैलोक्ये यानि वस्तूनि रत्नभूतानि तानि तु।
रत्नेश्वरं समभ्यर्च्य सकृत्प्राप्नोति मानवः॥
पूजयिष्यन्ति ये लिङ्गं रत्नेशं कामवर्जिताः।
ते सर्वे मद्गणा भूत्वा प्रान्ते द्रक्ष्यन्ति मामिह[2]॥

विश्वनाथ जी कहते हैं कि रत्नेश्वर की पूजा कर मनुष्य त्रिलोकी में कहीं भी रहने वाली अभीप्सित रत्नोपम वस्तु को प्राप्त कर सकता है।

जो निष्काम भाव से रत्नेश्वर की पूजा करेंगे, वे सभी लोग मेरे गण होकर मेरे पास ही रहते हुए मेरे दर्शन करते रहेंगे।

केदारं गन्तुकामस्य बुद्धिर्देया नरैरियम्।
काश्यां स्पृशंस्त्वं केदारं कृतकृत्यो भविष्यसि[3]॥

केदारेश्वर शिवलिङ्ग की यात्रा करने वाला इस प्रकार की भावना करे कि श्री काशी केदारेश्वर को स्पर्श करके मनुष्य सम्पूर्ण पुण्यों का भागी बनता है। (केदारघाट पर स्थित केदारेश्वर स्वयंभू शिवलिङ्ग हैं।)

बृहस्पतीश्वरं लिङ्गं रुद्रकुण्डाच्च पश्चिमे।
गुरुपुष्यसमायोगे दृष्ट्वा दिव्यां लभेद् गिरम्[4]॥

रुद्रकुण्ड के पश्चिम में बृहस्पतीश्वर शिवलिङ्ग है। गुरुवार के दिन यदि पुष्य नक्षत्र हो तो उस दिन इनका दर्शन करने से मनुष्य दिव्य वाणी प्राप्त करता है।

---

१. का० ख० ६७।२८-२९; २. वही—६७।३०-३१।
३. वही—७७।६०; का० मा०—२७ ४. वही—९७।९५।

अविमुक्तं सदा लिङ्गं योऽत्र द्रक्ष्यति मानवः ।
न तस्य पुनरावृत्तिः कल्पकोटिशतैरपि[१] ॥

अविमुक्त सदाशिव लिङ्ग का जो मनुष्य दर्शन करेगा, उसका सैकड़ों कोटि कल्प तक पुनर्जन्म नहीं होगा।

गवां कोटिप्रदानेन सम्यग्दत्तेन यत्फलम् ।
तत्फलं सम्यगाप्येत विश्वेश्वरविलोकनात्[२] ॥

विधिवत् करोड़ों गायों के दान से जो फल मिलता है ; वही फल विश्वेश्वर शिवलिङ्ग के दर्शन से प्राप्त होता है। अस्तु श्रद्धा और अनन्य भक्ति से युक्त होकर दर्शनमात्र करने से भी वही फल प्राप्त होता है।

यस्तु विश्वेश्वरं दृष्ट्वा ह्यन्यत्रापि विपद्यते ।
तस्य जन्मान्तरे मोक्षो भवत्येव न संशयः[३] ॥

जो व्यक्ति विश्वेश्वर के दर्शन करके अन्यत्र भी फँस जाता है, तो जन्मान्तर में उसका मोक्ष होना अवश्यम्भावी है। इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है।

अर्चन्ति विश्वे विश्वेशं विश्वेशोऽर्चति विश्वकृत् ।
अविमुक्तेश्वरं लिङ्गं भुक्तिमुक्तिप्रदायकम्[४] ॥

संसार में जो विश्वेश्वर भगवान् की पूजा करते हैं, विश्वरचयिता विश्वेश उनकी पूजा करते हैं। अविमुक्तेश्वर नामक शिवलिङ्ग भोग और मुक्ति दोनों के देने वाले हैं। अर्थात् अविमुक्तेश्वर संसार में भोग एवं मुक्ति प्रदान करते हैं।

कपर्दीशं समभ्यर्च्य न नरो निरयं व्रजेत् ।
न पिशाचत्वमाप्नोति कृत्वात्राप्यघमुत्कटम्[५] ॥

इस काशी नगरी में कपर्दीश्वर भगवान् की पूजा करने वाले मनुष्य नरक में नहीं जाते। यहाँ पर उत्कट पाप करने वाला भी पिशाचत्व को प्राप्त नहीं होता है। अतः पिशाचमोचन तीर्थ में स्नान करके कपर्दीश्वर के दर्शन-पूजन करने के पश्चात् यथाशक्ति अन्न, वस्त्र, द्रव्य आदि दान करने वाले नर-नारी पिशाच योनि से मुक्त हो जाते हैं।

तस्मात्सर्वप्रयत्नेन काश्यां कामेश्वरः सदा ।
पूजनीयः प्रयत्नेन महाकामाभिलाषुकैः[६] ॥

बड़ी कामना के अभिलाषुक व्यक्तियों का परम कर्तव्य है कि वे सभी प्रकार

१. लिङ्गपुराण ; २. त्रि० से०; ३. का० ख०; ४. वही। ५. वही ; ६. वही।

से प्रयत्नपूर्वक कामेश्वर भगवान् की पूजा करें। कामेश्वर सभी कामनाओं को पूर्ण करते हैं। (कामेश्वर मछोदरी पार्क के पूर्व बगल में 'दुर्वासेश्वर मन्दिर' में हैं।)

यो यस्य मनसा कामस्तं तमाप्नोति निश्चितम्[1] ॥

जिसके मन में जो कामना होती है, वह उस-उस कामना को निश्चित ही प्राप्त करता है। अस्तु, कामेश्वर के दर्शन-पूजन करने वाले स्त्री-पुरुषों के सभी मनोरथ पूर्ण होते हैं।

यदत्र दास्यन्ति हि धर्मपीठे नरा द्युनद्यां कृतमज्जनाश्च ।
तदक्षयं भावियुगान्तरेष्वपि कृतप्रणामास्तव धर्मलिङ्गे ॥
तद्दर्शनात्स्पर्शनतोऽर्चनाच्च सिद्धिर्भविष्यत्यचिरेण पुंसाम्[2] ॥

इस काशी में गङ्गा जी में स्नान कर धर्म-कूप में धर्मेश्वर का दर्शन-पूजन करके धर्मेश्वर में जो भी व्यक्ति जो कुछ भी दान देंगे और धर्मेश्वर लिङ्ग को प्रणाम करेंगे, तो युगान्तर में भी वे सब उनके अक्षय ही होंगे और उनके दर्शन, स्पर्श तथा पूजन से मनुष्यों को शीघ्र ही सिद्धि प्राप्त होगी। (धर्मेश्वर 'विशालाक्षी मन्दिर' के बगल में मीरघाट में हैं।)

न गर्भमाविशेद् भूयो भवेत्सौभाग्यभाजनम् ।
पार्वतीशस्य लिङ्गस्य नाम्नाऽपि परिगृह्णतः ॥
अपि जन्मसहस्रस्य पापं क्षयति तत्क्षणात्[3] ॥

कार्तिकेय जी अगस्त ऋषि से कहते हैं कि पार्वतीश्वर शिवलिङ्ग के नाम उच्चारण (ग्रहण) मात्र से मनुष्य सौभाग्य का पात्र हो जाता है, उसका पुनः गर्भवास नहीं होता। साथ ही साथ उसी क्षण में हजारों जन्मों के पाप नष्ट हो जाते हैं। अतः प्रयत्नपूर्वक पार्वतीश्वर का दर्शन करना चाहिए। (पार्वतीश्वर 'आदिमहादेव मन्दिर' के बगल में त्रिलोचन घाट के ऊपर हैं।)

ब्रह्महत्यादयः पापा विनश्यन्त्यस्य पूजनात् ।
पिशाचमोचने कुण्डे स्नातः स्यात्प्रशमो यतः[4] ॥

कपर्दीश्वर के पूजन से ब्रह्महत्या आदि पाप दूर हो जाते हैं। यदि वह पिशाच-मोचन कुण्ड में स्नान करके दर्शन करता है, तो उस व्यक्ति के पितृगण मुक्त हो जाते हैं।

---

१. लिङ्गपुराण। २. का० ख०।
३. वही—९०।२४; ४. पद्मपुराण—३५।१४;

स्मृत्वा लिङ्गप्रतिष्ठायाः काश्यां लोकोत्तरं फलम् ।
गङ्गया स्थापितं लिङ्गं विश्वेशात्पूर्वतः शुभम्[1] ॥

मार्कण्डेय जी स्कन्द जी से कहते हैं कि काशी में विश्वेश्वर के पूर्व में गङ्गा जी ने गङ्गेश्वर नामक शिवलिङ्ग की स्थापना की है। उस लिङ्ग प्रतिष्ठा के स्मरण-मात्र से लोकोत्तर फल की प्राप्ति होती है। अर्थात् 'गङ्गेश्वराय नमः' उच्चारण करने मात्र से गङ्गास्नान का फल प्राप्त होता है। (गङ्गेश्वर मणिकर्णिकाघाट पर श्मशान के उत्तर बगल के शङ्कर जी के मन्दिर में हैं।)

गङ्गेश्वरस्य लिङ्गस्य काश्यां दृष्टिः सुदुर्लभा ।
तिथौ दशहरायाञ्च यो गङ्गेशं समर्चयेत् ॥
तस्य जन्मसहस्रस्य पापं संक्षीयते क्षणात् ।
कलौ गङ्गेश्वरं लिङ्गं गुप्तप्रायं भविष्यति[2] ॥

काशी में गङ्गेश्वर शिवलिङ्ग का दर्शन अत्यन्त ही दुर्लभ है। आश्विन मास को शुक्ला दशमी तिथि (दशहरा) को जो लोग गङ्गेश्वर का दर्शन-पूजन करते हैं, उनके सहस्रों जन्म के संचित पाप क्षणमात्र में ही नष्ट हो जाते हैं। यतः कलियुग में गङ्गेश्वर शिवलिङ्ग गुप्तप्राय ही है, अतः प्रयत्नपूर्वक इनका दर्शन-पूजन अवश्य करना चाहिए।

शृणुष्व विष्णो ! शृणु सृष्टिकर्तः ! शृण्वन्तु देवर्षिगणाः ! समस्ताः ।
इदं हि लिङ्गं परसिद्धिदं सतां भेदो मनागत्र न मत्सकाशतः[3] ॥

विश्वनाथ जी कहते हैं कि हे विष्णु, हे ब्रह्मा, हे समस्त देवर्षिगण ! सज्जनों को यह विश्वेश्वर शिवलिङ्ग परम सिद्धि प्रदान करने वाला है; क्योंकि यहाँ मेरे समीप किसी प्रकार का भेद नहीं है।

अस्मिन् हि लिङ्गेऽखिलसिद्धिसाधने समर्पितं यैः सुकृतार्जितं वसु ।
तेभ्योऽतिमात्राखिलसौख्यसाधनं ददामि निर्वाणपदं सुनिर्भयम् ॥
उत्क्षिप्य बाहुं त्वसकृद् ब्रवीमि त्रयीमयेऽस्मिंस्त्रयमेव सारम् ।
विश्वेशलिङ्गं मणिकर्णिकाम्बु काशीपुरी सत्यमिदं त्रिसत्यम्[4] ॥

भगवान् शिव का कथन है कि सम्पूर्ण सिद्धियों के साधनभूत इस विश्वेश्वर शिवलिङ्ग में श्रद्धा-भक्ति के साथ जो लोग सुकृतार्जित (पुण्य मार्ग द्वारा अर्जित)

---

१. का० ख० ९१।४ ; २. वही ९१।५-६ ।
३. वही —९९।५९ ; ४. वही—९९।६०-६१ ।

धन समर्पित करते हैं, उनको मैं समग्र सौख्य के साधनरूप अत्यन्त निर्भय निर्वाण (मोक्ष) पद को प्रदान करता हूँ।

पुनश्च महादेव का कथन है कि मैं ऊर्ध्वबाहु होकर (हाथों को ऊपर उठाकर) बार-बार कहता हूँ कि इस संसार में मात्र तीन ही वस्तुयें सारभूत (तत्त्वभूत) हैं—प्रथमतया विश्वेश्वर शिवलिङ्ग तथा दूसरी मणिकर्णिका का जल एवं तीसरी काशीपुरी, यह निश्चय ही सत्य है।

महापापौघशमनं महापुण्यप्रवर्धनम्।
महाभीतिप्रशमनं महाभक्तिविवर्धनम्[1]॥

विश्वनाथ जी जैगीषव्य ऋषि से कहते हैं कि जैगीषव्येश्वर नामक यह शिवलिङ्ग महापापों के समूह को नष्ट करने वाला है, उत्तमोत्तम पुण्यों को वृद्धि प्रदान करता है, महाभीतिनाशक है, अर्थात् अकाल मृत्यु से रक्षा करता है तथा दृढ़ भक्ति को बढ़ाता है।

साम्बकुण्डे नरः स्नात्वा रविवारेऽरुणोदये।
साम्बादित्यञ्च सम्पूज्य व्याधिभिर्नाभिभूयते॥
न स्त्री वैधव्यमाप्नोति साम्बादित्यस्य सेवनात्।
वन्ध्या पुत्रं प्रसूयेत शुद्धरूपसमन्वितम्[2]॥

जो मनुष्य आदित्यवार (रविवार) के अरुणोदय काल में (भक्तिपूर्वक) साम्बकुण्ड में स्नान कर साम्बादित्य का पूजन-अर्चन करता है, वह कदापि रोगों से पीड़ित नहीं होता। उन साम्बादित्य के सेवन (पूजन-अर्चन) करने से स्त्रियाँ कभी भी विधवा नहीं होतीं तथा वन्ध्या स्त्री भी शुद्ध (सच्चरित्र) और रूपवान् पुत्र को उत्पन्न करती है। (साम्बादित्य सूर्य 'द्वितुण्ड-विनायक' के बगल में सूर्यकुण्ड मुहल्ले में हैं।)

शुक्लायां द्विजसप्तम्यां माघे मासि रवेर्दिने।
महापर्वं समाख्यातं रविपर्वसमं शुभम्॥
महारोगात्प्रमुच्येत तत्र स्नात्वाऽरुणोदये।
साम्बादित्यं प्रपूज्यापि धर्ममक्षयमाप्नुयात्[3]॥

स्कन्द जी अगस्त्य जी से कहते हैं कि हे द्विजवर! (शास्त्र का कथन है कि) माघ मास की शुक्ला सप्तमी तिथि को रविवार दिन होने पर सूर्यग्रहण के समान

---

१. का० ख० ६३।८८; २. वही—४८।४८-४९; ३. वही—४८।५०-५१।

अत्यन्त शुभप्रद एक महापर्व का दिन हो जाता है। उस दिन अरुणोदय काल में उक्त साम्बकुण्ड में स्नान करके साम्बादित्य का दर्शन-पूजन करने से अत्युत्कट रोगों की भी शान्ति हो जाती है और अनन्त पुण्यलाभ भी होता है।

सन्निहत्यां कुरुक्षेत्रे यत्पुण्यं राहुदर्शने।
तत्पुण्यं रविसप्तम्यां माघे काश्यां न संशयः[1]॥

सूर्यग्रहण के समय पुण्यसरोवर कुरुक्षेत्र में स्नान करने से जो पुण्य प्राप्त होता है, माघ मास की शुक्ला सप्तमी तिथि को रविवार पड़ने पर काशी के सूर्यकुण्ड में स्नान करने से भी वही पुण्य प्राप्त हो जाता है। इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है।

मधौ मासि रवेर्वारे यात्रा सांवत्सरी भवेत्।
अशोकैस्तत्र सम्पूज्य कुण्डे स्नात्वा विधानतः॥
साम्बादित्यं नरो जातु न शोकैरभिभूयते।
संवत्सरकृतात् पापाद् बहिर्भवति तत्क्षणात्[2]॥

चैत्र मास के रविवार को साम्बादित्य की वार्षिक यात्रा होती है। उस दिन जो लोग विधानपूर्वक सूर्यकुण्ड में स्नान करके अशोक के पुष्पों से साम्बादित्य का पूजन करते हैं, वे मनुष्य कभी भी शोकसागर में नहीं पड़ते और उसी क्षण वर्ष भर के किये हुए पापों से बाहर (मुक्त) हो जाते हैं।

विश्वेशात्पश्चिमाशायां साम्बेनात्र महात्मना।
सम्यगाराधिता मूर्तिरादित्यस्य शुभप्रदा[3]॥

काशी-क्षेत्र में भगवान् विश्वेश्वर से पश्चिम दिशा में महात्मा साम्ब के द्वारा अच्छी रीति से आराधना की गयी जो सूर्य की मूर्ति है, वह बड़ी ही मंगलदायिनी है।

इयं भविष्या तन्मूर्तिरगस्ते त्वत्पुरोऽकथि।
तामभ्यर्च्य नमस्कृत्य कृत्वाऽष्टौ च प्रदक्षिणाः॥
नरो भवति निष्पापः काशीवासफलं लभेत्॥
साम्बादित्यस्य माहात्म्यं कथितं ते महामते।
यच्छ्रुत्वाऽपि नरो जातु यमलोकं न पश्यति[4]॥

स्कन्द जी कहते हैं कि हे अगस्त्य! मैंने आपसे यह होने वाली सूर्य की मूर्ति का वर्णन किया है, जिसके पूजन-अर्चन करने तथा आठ बार प्रदक्षिणा करने से मनुष्य

१. का० ख० ४८।५२; २. वही—४८।५३-५४; ३. वही—४८।५५।
४. वही—४८।५६-५७।

पापरहित हो जाते हैं और (पूर्णरूपेण) काशीवास करने का फल प्राप्त करते हैं। हे महामते ! साम्बादित्य का यह जो माहात्म्य मैंने आपसे वर्णन किया है, इसके श्रवण करने मात्र से भी मनुष्य कभी यमलोक को नहीं देख सकता, अर्थात् मोक्ष को प्राप्ति करता है ।

लिङ्गं महेश्वरक्षेत्रादिह दीप्तेशसंज्ञितम् ॥
उपोमापति तिष्ठेत दीप्त्यै चेह परत्र च ।
भुक्तिमुक्तिप्रदं लिङ्गं दीप्तेशं काशिमध्यगम्[1] ॥

महेश्वरक्षेत्र में दीप्तेश्वर-संज्ञक शिवलिङ्ग है जो काशी के मध्य भाग में स्थित है तथा उमापति के समीप में ही व्यवस्थित यह शिवलिङ्ग इस लोक और परलोक में भी अन्धकार को दूर करता है एवं यह सिद्ध शिवलिङ्ग भोग और मोक्ष दोनों को प्रदान करता है । (दीप्तेश्वर अन्नपूर्णा गली में यन्त्रेश्वर के पश्चिम बगल में 'शिवरात्रेश्वर' के नाम से प्रसिद्ध हैं ।)

तस्य संदर्शनं पुंसां जायते पुण्यहेतवे ।
दृष्टं गङ्गेश्वरं लिङ्गं येन काश्यां सुदुर्लभम्[1] ॥

काशी में जिसने गङ्गेश्वर शिवलिङ्ग का दर्शन किया, उसका दर्शन लोगों के लिए पुण्यकारक माना गया है । अतः गङ्गेश्वर का दर्शन-पूजन तथा उपासना करने वाले व्यक्ति के दर्शन होते ही पुण्य का उदय होता है ।

ततोऽपि दुर्लभं काश्यां लिङ्गं गङ्गेश्वराभिधम् ।
यस्य संदर्शनं पुंसां भवेत्पापक्षयाय वै[3] ॥

काशी में दुर्लभ गङ्गेश्वर नामक शिवलिङ्ग है, जिसके दर्शन से मनुष्यों के पाप नष्ट हो जाते हैं ।

भविष्यति न सन्देहः सतीश्वरसमर्चनात् ।
सतीश्वरं समभ्यचर्य यो यो यं यं समीहते ॥
तस्य तस्य स स क्षिप्रं भविष्यति मनोरथः[4] ॥

स्कन्द जी अगस्त्य ऋषि से कहते हैं कि सतीश्वर के पूजन से समस्त कार्यों की सिद्धि होगी, जो व्यक्ति जिसकी अभिलाषा करेगा, उसका वह मनोरथ तत्क्षण पूर्ण होगा । अतः प्रयत्नपूर्वक सतीश्वर का दर्शन करना चाहिए । (सतीश्वर मृत्युञ्जय सड़क पर रत्नेश्वर के बगल में हैं ।)

---

१. का० ख० ६९।११४-११५ ; १. वही—९१।७; २. वही—९१।१०;
३. वही—९३।२३॥

स्नातव्यं मणिकर्ण्याञ्च द्रष्टव्यः करुणेश्वरः ।
क्षेत्रोपसर्गजा भीतिर्हातव्या परया मुदा[1] ॥

मणिकर्णिका में स्नान करना चाहिए और करुणेश्वर का दर्शन करना चाहिए। इनके दर्शन से आनन्दपूर्वक क्षेत्रोपसर्ग से उत्पन्न भय नष्ट हो जाते हैं, अर्थात् काशी-क्षेत्र में मन, वाणी और शरीर द्वारा किये गये पाप शान्त हो जाते हैं।

मोक्षद्वारेश्वरञ्चैव स्वर्गद्वारेश्वरं तथा ।
उभौ काश्यां नरो दृष्ट्वा स्वर्गं मोक्षञ्च विन्दति[2] ॥

काशीपुरी में मनुष्य मोक्षद्वारेश्वर तथा स्वर्गद्वारेश्वर इन दोनों शिवलिङ्गों का दर्शन-पूजन कर स्वर्ग और मोक्ष को प्राप्त करता है। (स्वर्गद्वारेश्वर ब्रह्मनाल मुहल्ला में हैं तथा मोक्षद्वारेश्वर ललिताघाट पर करुणेश्वर के मन्दिर में हैं।)

ज्योतीरूपेश्वरं लिङ्गं काश्यामन्यत्प्रकाशते ।
तस्य सम्पूजनाद्भक्ता ज्योतीरूपा भवन्ति हि[3] ॥

काशी में एक ज्योतीरूपेश्वर (मणिकर्णिकेश्वर) नामक अन्य शिवलिङ्ग भी प्रकाशित है। उसकी भक्तिपूर्वक पूजा करने से मनुष्य ज्योतिरूप को प्राप्त करते हैं। (मणिकर्णिकेश्वर गढ़वासी टोला में गोमठ के पास में हैं।)

कोटीश्वरं तु तद्याम्यां लिङ्गं शाश्वतसिद्धिदम् ॥
कोटितीर्थे ह्रदे स्नात्वा कोटीशं परिपूज्य च ।
गवां कोटिप्रदानस्य फलमाप्नोति मानवः[4] ॥

निरन्तर सिद्धिप्रद कोटीश्वर नामक शिवलिङ्ग जो विश्वनाथ जी से दक्षिण में स्थित हैं, वहाँ कोटि तीर्थ (दशाश्वमेधघाट) है। रुद्र-सरोवर में स्नान कर तथा कोटीश्वर शिवलिङ्ग की पूजा करके मनुष्य करोड़ों गायों के दान देने का फल प्राप्त करता है। (कोटिलिङ्गेश्वर साक्षीविनायक मुहल्ला में हैं।)

सिद्धकुण्डे नरः स्नात्वा दृष्ट्वा सिद्धेश्वरं महत् ।
सर्वासामेव सिद्धीनां पारं गच्छति मानवः[5] ॥

सिद्धकुण्ड में स्नान कर तथा सिद्धेश्वर भगवान् का दर्शन करने वाले मनुष्य सभी सिद्धियों में पारङ्गत हो जाते हैं। (सिद्धेश्वर चन्द्रकूप के बगल में सिद्धेश्वरी मुहल्ले में हैं।)

---

१. का० ख० ९४।२२; २. वही—९४।२९; ३. वही—९४।३०।
४. वही—९७।६२-६३; ५. वही—९७।२५४-२५५।

लिङ्गं दक्षेश्वराह्वञ्च ततः कूपादुदिग्दशि ।
अपराधसहस्रं तु नश्येत्तस्य समर्चनात्[१] ॥

धन्वन्तरी अमृतकूप के उत्तर बगल में दक्षेश्वर नामक शिवलिङ्ग हैं, उनका दर्शन-पूजन करने से हजारों जन्मों के अपराध नष्ट हो जाते हैं।

घण्टाकर्णह्रदे स्नात्वा व्यासेशपरिदर्शनात् ।
यत्र तत्र मृतो वापि वाराणस्यां मृतो भवेत्[२] ॥

घण्टाकर्ण सरोवर में स्नान कर व्यासेश्वर के दर्शन से व्यक्ति जहाँ कहीं भी मरता है, तो उसे वाराणसी में मृत्यु का फल प्राप्त होता है। (वेदव्यासेश्वर प्रथम कर्णघण्टा सरोवर (कुण्ड) के अन्दर हैं। कुण्ड के पूर्व बगल में शङ्कर जी के मन्दिर में द्वितीय वेदव्यासेश्वर की स्थापना की गयी है। रामेश्वर के नाम से पुजारी लोग इनकी पूजा करते हैं।)

तैः स्थापितं तु यल्लिङ्गं तत्सिद्धेश्वरमीरितम् ।
तस्य सन्दर्शनादेव सर्वाः स्युः सिद्धयोऽमलाः[३] ॥

सिद्ध लोगों के द्वारा जो शिवलिङ्ग स्थापित है, वह सिद्धेश्वर हैं। उनके दर्शन से समस्त निर्मल (स्वच्छ) सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं।

एतल्लिङ्गं समुद्दिश्य गृहान्निष्क्रमणक्षणात् ।
विलीयते महापापमपि जन्मत्रयार्जितम्[४] ॥

कार्तिकेय जी अगस्त्य ऋषि से कहते हैं कि विश्वनाथ जी के शिवलिङ्ग के दर्शनार्थ घर से जो नर-नारी निकलते हैं, उनके तीन जन्मों के संचित पाप क्षणमात्र में नष्ट हो जाते हैं।

सर्वाधिपूगध्वंसीनि तथा लिङ्गान्यपि प्रिये ।
विश्वेशादीन्यनेकानि सर्वपापहराणि वै[५] ॥

समस्त मनोव्यथा समूह का ध्वंस करने वाले अन्य शिवलिङ्ग भी दर्शन-पूजन करने वाले स्त्री-पुरुषों के पापों का नाश करते हैं। उनमें विश्वेश्वर प्रधान हैं, वे सब पापों को हर लेते हैं।

---

१. का० ख० ९७।१३०; २. वही—९७।१४५; ३. वही—९७।१६४। ४. वही—९९।२४; ५. का० मूलरहस्य।

विश्वेशाख्या तु जिह्वाग्रे विश्वनाथकथा श्रुतौ ।
विश्वेशशीलनं चित्ते यस्य तस्य जनिः कुतः[1] ॥

भगवान् विश्वेश (विश्वनाथ) का नाम जिसके जिह्वाग्र पर रहता है तथा विश्वनाथ की कथा का जो निरन्तर श्रवण करता है एवं चित्त में विश्वेश्वर का जो निरन्तर चिन्तन करता है, उसका कभी भी पुनर्जन्म नहीं होता है ।

तत्रेशाग्रे कृतस्येह जागरे शिवरात्रिजे ।
रत्नभूतस्य लिङ्गस्य काश्यां रत्नेश्वरस्य वै ।
नित्यं सन्दर्शनं प्राप्य वक्ष्याम्यपि वचो मुखे[2] ॥

इस काशी में भगवान् विश्वेश्वर के आगे शिवरात्रि में जागरण करने पर तथा रत्नभूत रत्नेश्वर शिवलिङ्ग का नित्य दर्शन कर प्रबुद्ध लोग कृतकृत्य हो जाते हैं। अस्तु भक्ति, ज्ञान की प्राप्ति होती है । (रत्नेश्वर मृत्युञ्जय की सड़क पर हैं ।)

क्षेत्रस्य मध्यमे भागे मध्यमेश्वर एष वै ।
मध्याऽधोलोकयोर्मध्ये न वसेद्यस्य वीक्षणात्[3] ॥

काशी-क्षेत्र के मध्य में मध्यमेश्वर भगवान् स्थित हैं, जिनके दर्शन-पूजन करने से जीव मध्यलोक या अधोलोक को नहीं प्राप्त करता, अर्थात् सीधा देवकोटि में होकर स्वर्गलोक में जाता है ।

योऽत्र रत्नेश्वरं नत्वा मृतो देशान्तरेष्वपि ।
न स स्वर्गादिहागच्छेत्कल्पकोटिशतैरपि[4] ॥

जो यहाँ काशी में रत्नेश्वर का दर्शन कर किसी अन्य देश में भी शरीर छोड़ता है, वह करोड़ों-करोड़ों कल्पों तक भी स्वर्ग से स्खलित नहीं होता है । अर्थात् सदा-सर्वदा स्वर्गलोक में निवास करता है ।

ये काश्यां विघ्नहर्तारो ये काश्यां धर्मबुद्धयः ।
तं दृष्ट्वा वृषरुद्रं वै पूजयित्वा तु भक्तितः ॥
महामहोपचारैश्च न विघ्नैरभिभूयते[5] ॥

वे धर्मबुद्धि वाले लोग कभी भी पीड़ित नहीं होते हैं, जो भक्तिपूर्वक वृषेश्वर की पूजा, दर्शन तथा महोपचार से आराधना करते हैं । अतः प्रयत्नपूर्वक वृषेश्वर रुद्र

---

१. का० ख० ९९।४३ ; २. वही—६७।३८,४४ ; ३. वही—६७।१७७ ।
४. वही—६७।२१६ ; ५. वही—६८।७९-८१ ।

का दर्शन-पूजन करना चाहिए। (वृषेश्वर मैदागिन से उत्तर बगल में गोरखनाथ जी के मठ में हैं।)

उज्जयिन्या महाकालः स्वयमत्रागतो विभुः।
यन्नामस्मरणादेव न भयं कलिकालतः[1]॥

उज्जयिनी के विभु परमप्रभु महाकालेश्वर काशी में स्वयं आकर वृद्धकालेश्वर के बगल में माहाकालेश्वर के रूप में विराजमान हैं, जिनके स्मरण मात्र से जोव को कलि-काल के भय से मुक्ति मिल जातो है। (महाकालेश्वर दारानगर मुहल्ले में हैं।)

मुने निशामयेदानीं गङ्गेश्वरसमुद्भवम्।
यं श्रुत्वा यत्र कुत्रापि गङ्गास्नानफलं लभेत्[2]॥

मार्कण्डेय जी स्कन्द जो से कहते हैं कि हे मुने! सम्प्रति गङ्गेश्वर की महिमा सुनें, जिसके सुनने मात्र से मनुष्य जहाँ कहीं भी हो गङ्गा-स्नान करने का फल प्राप्त करता है।

प्रत्यक्षरूपिणी गङ्गा तेन दृष्टा न संशयः।
कलौ सुदुर्लभा गङ्गा सर्वकल्मषहारिणी[3]॥

कलियुग में समस्त पापहारिणी गङ्गा अतीव दुर्लभ हैं; किन्तु जिसने गङ्गेश्वर का दर्शन कर लिया, उसने प्रत्यक्ष गङ्गा का दर्शन कर लिया, इसमें कोई सन्देह नहीं है।

तत्रेदं विमलं लिङ्गमोङ्कारं नाम शोभनम्।
यस्य स्मरणमात्रेण मुच्यते सर्वपातकैः[4]॥

वाराणसी में ओङ्कार नाम का विमल और शोभन लिङ्ग है, जिसके स्मरण से समस्त पातक नष्ट होते हैं। (ओङ्कारेश्वर मच्छोदरी के उत्तर बगल छितवनपुरा मुहल्ले में हैं।)

गायन्ति सिद्धाः किल गीतकानि वाराणसीं ये निवसन्ति विप्राः।
तेषामथैकेन भवेद्विमुक्तिर्ये कृत्तिवासं शरणं प्रपन्नाः[5]॥

सिद्ध लोग गीत गाया करते हैं कि जो ब्राह्मण वाराणसी में निवास करते हैं और कृत्तिवासेश्वर के शरण में आये हुए हैं—कृतिवासेश्वर का दर्शन, पूजन और उपासना करके वे एक ही जन्म में मुक्ति प्राप्त करते हैं।

---

१. का० ख० ६९।१८-१९; २. वही—९१।१-२; ३. वही—९१।८।
४. पद्मपुराण—३४।१; ५. वही—३४।२२।

काश्यां सिद्धिप्रदं नृणां कलौ गुप्तं भवेत्पुनः ।
अमृतेश्वरसंस्पर्शान्मृता जीवन्ति तत्क्षणात् ।
अमृतत्वं भजन्तेऽत्र जीवन्तः स्पर्शमात्रतः[१] ॥

काशी में मनुष्यों को सिद्धि प्रदान करने वाला अमृतेश्वर शिवलिङ्ग है, जो कलियुग में गुप्त है। अमृतेश्वर के स्पर्श से मृतक मनुष्य भी जीवित हो जाते हैं; क्योंकि इनके स्पर्शमात्र से लोग अमृतत्व प्राप्त करते हैं। (अमृतेश्वर नीलकण्ठेश्वर के पूर्व बगल में नीलकण्ठ मुहल्ला में विराजमान हैं।)

नर्मदेशस्य माहात्म्यं कथयामि मुने ! तव ।
यस्य स्मरणमात्रेण महापातकसंक्षयः[२] ॥

हे मुने ! आपको मैं नर्मदेश्वर की महिमा सुनाता हूँ, जिसके स्मरण मात्र से बड़े से बड़े पापों का नाश होता है। (त्रिलोचनेश्वर के पूर्व बगल में नर्मदेश्वर त्रिलोचन मुहल्ला में हैं।)

अत्र ज्येष्ठेश्वरक्षेत्रे त्वल्लिङ्गं सर्वसिद्धिदम् ।
नाशयेदघसङ्घानि दृष्टं स्पृष्टं समर्चितम्[३] ॥

विश्वनाथ जी का कथन है कि यहाँ ज्येष्ठेश्वर क्षेत्र में जैगीषव्येश्वर शिवलिङ्ग सभी सिद्धियों को प्रदान करने वाला है। दर्शन, स्पर्शन तथा पूजन से यह शिवलिङ्ग भक्तों के सभी पापों को दूर करता है। (जैगीषव्येश्वर भूत-भैरव के पश्चिम बगल के शिव-मन्दिर में हैं।)

अस्मिन् ज्येष्ठेश्वरक्षेत्रे सम्भोज्य शिवयोगिनः ।
कोटिभोज्यफलं सम्यगेकैकपरिसंख्यया[४] ॥

विश्वनाथ जी कहते हैं कि शिव-साक्षात्कार के इच्छुक योगीगण इस ज्येष्ठेश्वर क्षेत्र में शिवभक्तों को भोजन कराकर (भण्डारा कर) सभी सुख-समृद्धि, सिद्धियाँ प्राप्त कर लेते हैं तथा एक-एक शिवयोगी के भोजन कराने से कोटि-कोटि जन के भोजन कराने का पूर्ण फल प्राप्त करते हैं।

जयन्तेश्वरमालोक्य स्नात्वा गङ्गाजले शुभे ।
प्राप्नुयाद्वाञ्छितां सिद्धिं सर्वत्र विजयी भवेत्[५] ॥

काशी में पवित्र गङ्गाजल में स्नान करके जयन्तेश्वर का दर्शन-पूजन

---

१. का० ख० ९४।१६-१७; २. वही—९२।१; ३. वही—६३।८३।
४. वही—६३।८४; ५. वही—६९।७२।

कराने वाला व्यक्ति अभीष्ट सिद्धि को प्राप्त करता है और सर्वत्र विजयी होता है। (जयन्तेश्वर स्वप्नेश्वर के मन्दिर में छोटे हनुमान् जी के बगल में शिवाला मुहल्ला में हैं।)

इति प्रसाद्य देवेशमाज्ञां प्राप्य महेशितुः।
लिङ्गं संस्थापितं गौर्या महादेवसमोपतः॥
तल्लिङ्गदर्शनात्पुसां ब्रह्महत्यादिपातकम्।
विलीयेत न सन्देहो देहबन्धोऽपि नो पुनः[1]॥

भगवती गौरी ने इस प्रकार शिव को प्रसन्न कर तथा उनसे आज्ञा लेकर महादेव के समोप में पार्वतीश्वर नामक शिवलिङ्ग की स्थापना की, जिसके दर्शन से मनुष्यों के ब्रह्महत्यादि पाप नष्ट होते हैं तथा मनुष्यों का कभी भी पुनर्जन्म नहीं होता, इसमें कोई सन्देह नहीं है। (पार्वतीश्वर योगेश्वर के बगल में त्रिलोचन मुहल्ला में हैं।)

महाकालेशलिङ्गं च दक्षेशात्पूर्वतो महत्।
महाकुण्डे नरः स्नात्वा महाकालं तु योऽर्चयेत्॥
अर्चितं तेन वै तत्र जगदेतच्चराचरम्[2]॥

दक्षेश्वर की पूर्व दिशा में महान् महाकालेश्वर शिवलिङ्ग है। वहाँ पर महाकुण्ड में स्नान कर महाकालेश्वर की पूजा करने वाला व्यक्ति मानो समस्त चराचर जगत् की पूजा कर लिया। (महाकालेश्वर दारानगर मुहल्ले में हैं।)

अमृतेशमुखादीनि यन्नामाप्यमृतप्रदम्[3]॥

अमृतेश्वरादि लिङ्गों का नाम-स्मरण करने वाले व्यक्ति भी अमरत्व की प्राप्ति करते हैं।

नित्यं विश्वेश विश्वेश विश्वनाथेति यो जपेत्।
त्रिसन्ध्यं तं सुकृतिनं जपाम्यहमपि ध्रुवम्[4]॥

शङ्कर जी कहते हैं कि जो नित्य विश्वेश्वर! विश्वेश्वर! विश्वनाथ! विश्वनाथ! ऐसा जपता है, तीनों सन्ध्याओं में मैं भी उसे जपता हूँ। अर्थात् उसको संसार-सागर से तार देता हूँ, इसमें कोई संशय नहीं है।

---

१. का० ख० ९०।१८-१९; २. वही—९७।१३१-१३२;
३ वही—९४।१; ४. पद्मपुराण।

काशीविश्वेश्वरं लिङ्गं ज्योतिर्लिङ्गं यदुच्यते ।
तद्दृष्ट्वा परमं ज्योतिराप्नोति मनुजोत्तमः[१] ॥

काशी का विश्वेश्वर शिवलिङ्ग ज्योतिर्लिङ्ग कहा जाता है, उसके दर्शन-पूजन से श्रेष्ठ मनुष्य परम ज्योति का दर्शन प्राप्त करते हैं।

सर्वलिङ्गार्चनात्पुण्यं यावज्जन्म यदर्ज्यते ।
सकृद्विश्वेशमभ्यर्च्यं श्रद्धया तदवाप्यते ॥
यज्जन्मनां सहस्रेण निर्मलं पुण्यमर्जितम् ।
तत्पुण्यपरिवर्तेन भवेद्विश्वेशदर्शनम्[२] ॥

आजन्म सम्पूर्ण शिवलिङ्गों का पूजन करने से जो पुण्य अर्जित किये जाते हैं, काशी में एक बार भी विश्वेश्वर की पूजा करके उन्हें प्राप्त किया जा सकता है। हजारों जन्मों के अर्जित पुण्य के प्रदान से भगवान् विश्वनाथ जी का दर्शन प्राप्त होता है।

निशामयाऽभिधास्यामि महापातकनाशनम् ।
धर्मपीठं तदुद्दिष्टमत्रानन्दवने मम ।
तत्पीठदर्शनादेव नरः पापैः प्रमुच्यते[३] ॥

इस मेरे आनन्दवन काशी में महापापों का नाश करने वाला धर्मपीठ उद्दिष्ट है, उसे कह रहा हूँ सुनो, धर्मपीठ और धर्मेश्वर के दर्शन-पूजन से ही मनुष्य पापों से मुक्त हो जाता है।

त्रिलोचनस्य नामापि यैः श्रुतं शुद्धबुद्धिभिः ।
सप्तजन्मार्जितात्पापात्ते पूता नात्र संशयः[४] ॥

शुद्धबुद्धि से जिसने भी त्रिलोचनेश्वर महादेव का नाम सुना, वे सप्त-जन्मार्जित पापों से मुक्त होकर, पवित्र हो जाते हैं। इसमें लेशमात्र भी सन्देह नहीं है।

सायं केदार केदार केदारेति त्रिरुच्चरन् ।
गृहेऽपि निवसन्नूनं यात्राफलमवाप्नुयात्[५] ॥

सायंकाल केदार-केदार-केदार ऐसा तीन बार उच्चारण करता हुआ यदि व्यक्ति घर में भी निवास करे, तो उसे केदारेश्वर के दर्शनार्थ यात्रा का फल प्राप्त होता है।

---

१. नारदपुराण—६२।५१; २. का० ख० ९६।३०-३१। ३ वही - ७८।१५-१६। ४. वही—; ५. वही ;

अविमुक्ते महाक्षेत्रेऽविमुक्तं विलोक्य च।
त्रिजन्मजनितं पापं हित्वा पुण्यमयो भवेत्[1] ॥

अविमुक्त नामक इस महाक्षेत्र (काशी) में अविमुक्तेश्वर भगवान् का दर्शन कर मनुष्य तीनों जन्मों के जनित पाप को त्याग कर पुण्यमय हो जाता है।

अविमुक्तं सदालिङ्गं योऽत्र द्रक्ष्यति मानवः।
न तस्य पुनरावृत्तिः कल्पकोटिशतैरपि[2] ॥

इस काशी में अविमुक्त नामक शिवलिङ्ग का जो मनुष्य सदा दर्शन करेगा, उसका सैकड़ों कोटि कल्प पर्यन्त पुनर्जन्म नहीं होगा।

सर्वपापविनिर्मुक्तो ब्रह्मभूयाय कल्पते।
दृष्ट्वा न जायते मर्त्यः संसारे दुःखसागरे[3] ॥

अविमुक्तेश्वर भगवान् का दर्शन कर मनुष्य ब्रह्मतुल्य हो जाता है, पुनः दुःख-सागर स्वरूप इस संसार में वह जन्म नहीं लेता है।

वशिष्ठवामदेवौ च मूर्त्तिरूपधरावुभौ।
द्रष्टव्यौ यत्नतः काश्यां महाविघ्नविनाशिनौ[4] ॥

इस काशी में वशिष्ठ और वामदेव साक्षात् मूर्तिमान् रूप में विराजमान हैं। महाविघ्नविनाशक इन दोनों का दर्शन प्रयत्नपूर्वक करना चाहिए। यतः वसिष्ठेश्वर और वामदेवेश्वर अज्ञान को नष्ट करते हैं।

स्थापितानि च लिङ्गानि भक्त्या चैव फलार्थिभिः।
लिङ्गानि मम सुश्रोणि! सर्वकामफलानि च[5] ॥

फल की इच्छा करने वाले भक्त लोगों ने भी भक्तिपूर्वक विभिन्न शिवलिङ्गों की स्थापना की है तथा हे सुश्रोणि! समस्त कामप्रद लिङ्गों की भी स्थापना की गयी है।

देवैः सर्वैर्महाभागैः स्थापितानि शुभार्थिभिः।
अन्यानि तत्र लिङ्गानि स्थापितानि महात्मभिः।
तानि दृष्ट्वा तु मनुजः सर्वयज्ञफलं लभेत्[6] ॥

शुभेच्छु महाभाग्यशाली सभी देवों ने तथा महात्माओं ने अन्य लिङ्गों की स्थापना की है। मनुष्य यदि उनके दर्शन करता है, तो उन्हें समस्त यज्ञों के फल प्राप्त होते हैं।

---

१. लिङ्गपुराण ; २. वही ; ३. त्रि० से०।
४. का० ख० १००।८७ ; ५. कु० क० त० ; ६. वही।

कामेन क्रोधेन लोभेन ग्रस्ता ये भुवि मानवाः ।
निष्क्रमन्ते नरा देवि ! दण्डनायकमोहिताः[१] ॥

इस पृथ्वी पर जो मनुष्य काम, क्रोध तथा लोभ से घिरे रहते हैं, हे देवि ! दण्डनायक (दण्डपाणि) को चाहने वाले वे लोग समस्त दोषों से रहित हो जाते हैं। अस्तु दण्डपाणि का दर्शन-पूजन, उपासना करने वाला व्यक्ति दोषों से रहित हो जाता है।

वाराणस्यां येऽर्चयन्ति महादेवं स्तुवन्ति वै ।
सर्वपापविनिर्मुक्तास्ते विज्ञेया गणेश्वराः[२] ॥

जो वाराणसी में महादेव का पूजन-अर्चन करते हैं, वे समस्त पापों से छुटकारा पाकर गणेश्वर हो जाते हैं।

कालेश्वरसमीपे तु दक्षिणे वरवर्णिनि ।
मृत्युना स्थापितं लिङ्गं सर्वरोगविनाशनम्[३] ॥

हे वरवर्णिनि ! महाकालेश्वर के समीप उनकी दक्षिण दिशा में मृत्यु द्वारा स्थापित मृत्युञ्जय नामक शिवलिङ्ग है, जो समग्र (रोगों) दोषों का निवारक है। (महामृत्युञ्जय दारानगर मुहल्ले में हैं।)

विनायकश्च तत्रैव पश्चिमे तु यशस्विनि ।
तस्य दर्शनमात्रेण विघ्नैर्नाभिभूयते[४] ॥

हे यशस्विनि ! उसके पश्चिम में विनायक (बड़े गणेश) प्रतिष्ठित हैं। उनके दर्शन से लोग विघ्नों से अभिभूत नहीं होते हैं, अर्थात् सभी विघ्न बड़े गणेश जी के दर्शन से दूर हो जाते हैं।

तद्दक्षिणे जम्बुकेशो तिर्यग्योनिनिवारकः[५] ॥

उनके दक्षिण में तिर्यग् योनि से निवारण करने वाले जम्बुकेश प्रतिष्ठित हैं। (जम्बुकेश्वर बड़े गणेश जी के फाटक के बाहर शङ्कर जी के मन्दिर में हैं।)

गङ्गाकेशवसंज्ञं च सर्वपातकनाशनम् ।
तत्र मे शुभदां मूर्ति मुने तत्तीर्थसंज्ञिकाम्[६] ॥

गङ्गाकेशव नामक शिवलिङ्ग सभी पातकों का नाशक है। वहां पर गङ्गाकेशव नामक शुभप्रद दिव्य मूर्ति है। अतः गङ्गाकेशव का दर्शन-पूजन करने वाले मनुष्यों के पाप नष्ट होते हैं। (ये ललिता घाट पर स्थित हैं।)

---

१. मत्स्यपुराण ; २. पद्मपुराण—३३।४० ; ३. कू० क० त० ।
४. वही ; ५. का० ख० ; ६. वही ।

करिष्याम्यत्र सान्निध्यमस्मिँल्लिङ्गे तपोधन ।
योगसिद्धिप्रदानाय साधकेभ्यः सदैव हि[1] ॥

भगवान् शिव कहते हैं कि हे तपोधन, महात्मन् ! निवासेश्वर शिवलिङ्ग में मैं सदा सर्वदा निवास करूँगा तथा इसमें निवास करता हुआ सदैव साधकों को योग-सिद्धि प्रदान करता रहूँगा।

तावद् भ्रमन्ति संसारे देवा मर्त्या महोरगाः ।
गौरि ! यावन्न पश्यन्ति काश्यां लिङ्गं त्रिलोचनम् ॥
सकृत्त्रिविष्टपं दृष्ट्वा स्नात्वा पैलिपिले ह्रदे ।
न जातु मातुस्तनपो जायते जन्तुरत्र हि[2] ॥

हे गौरि ! देवता, मनुष्य और नागलोग तभी तक संसार-चक्र में भ्रमण करते रहते हैं, जब तक काशी में त्रिलोचनेश्वर लिङ्ग का दर्शन नहीं कर पाते।

एक बार भी त्रिविष्टपेश्वर का दर्शन करने से तथा पिलपिलाह्रद में स्नान करने से मानव (जीव) पुनः जन्म लेकर माँ के स्तनों को पीने वाला नहीं होता, अर्थात् जन्म-मरण से मुक्त हो जाता है।

द्रोणेशाद्वायुदिग्भागे बालखिल्येश्वरं परम् ।
तल्लिङ्गं श्रद्धया दृष्ट्वा सर्वक्रतुफलं लभेत्[3] ॥

द्रोणेश के वायव्य कोण में बाल्यखिल्येश्वर शिवलिङ्ग है, श्रद्धापूर्वक जो इसका दर्शन करते हैं, उन्हें सभी यज्ञों के करने का फल प्राप्त होता है।

तद्वामे लिङ्गमालोक्य वाल्मीकेश्वरसंज्ञितम् ।
तस्य सन्दर्शनादेव विशोको जायते नरः[4] ॥

उसकी बायीं ओर वाल्मीकेश्वर नामक शिवलिङ्ग है। उसके दर्शन से मनुष्य सभी शोकों से मुक्त हो जाता है।

केदाराद्दक्षिणे भागे नीलकण्ठविलोकनात् ।
संसारोरगदंष्टस्य तस्य नास्ति विषाद्भयम्[5] ॥

केदार के दक्षिण में नीलकण्ठ भगवान् विराजमान हैं। उनके दर्शन से संसार-रूपी सर्प से डसा गया व्यक्ति भी संसाररूप विष से भयभीत नहीं होता, अर्थात् संसारी होता हुआ भी संसार की पीड़ा से वह मुक्त रहता है।

---

१. का० ख० ६३।८३ ; २. वही—७५।७१-७२ ; ३. वही—७५।८१ ।
४. वही—७५।८२ ; ५. वही—७७।६८ ।
का० मा०—२९

धर्मेश्वरं यः सकृदेव मर्त्यो विलोकयिष्यत्यवदातबुद्धिः ।
स्नात्वा पुरस्तेऽत्र च धर्मतीर्थे न तस्य दूरे पुरुषार्थसिद्धिः[१] ।।

निर्मल-बुद्धि जो व्यक्ति धर्मेश्वर तीर्थ (धर्म-कूप) में स्नान करके एक बार भी धर्मेश्वर का दर्शन करेगा, उससे पुरुषार्थ की सिद्धि कभी भी दूर नहीं रहेगी, अर्थात् धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष सभी पुरुषार्थ उसके समीप ही होंगे ।

तत्र लिङ्गमभूदेकं ख्यातं प्रहसितेश्वरम् ।
तल्लिङ्गदर्शनात्पुंसामानन्दः स्यात् पदे पदे[२] ।।

वहाँ प्रहसितेश्वर नाम का एक शिवलिङ्ग है । उस शिवलिङ्ग का दर्शन-पूजन करने से मनुष्यों को पुण्य एवं पद-पद पर आनन्द की प्राप्ति होती है । (प्रहसितेश्वर रामेश्वर के बगल में हनुमानघाट में हैं ।)

यस्त्वया स्थापितं लिङ्गं दुर्वासेश्वरसंज्ञितम् ।।
तदेव कामकृन्नृणां कामेश्वरमिहास्त्विति ।
यः प्रदोषे त्रयोदश्यां शनिवासरसंयुजि[३] ।।

देवाधिदेव महादेव दुर्वासा जी से कहते हैं कि जो दुर्वासेश्वर नामक शिवलिङ्ग की स्थापना आपके द्वारा की गयी है, वही मनुष्यों की इच्छा-पूर्ति करने से कामेश्वर नाम से यहाँ पुकारे जाते हैं । जो शनिवार के प्रदोष के दिन उनका दर्शन, पूजा, उपासना करता है, उसकी सभी इच्छाएँ पूर्ण होती हैं । अतः शनि-प्रदोष के दिन अपने कल्याण के लिए प्रयत्नपूर्वक इनका दर्शन करना चाहिए । (मच्छोदरी तीर्थ के पूर्व तट पर गली में कामेश्वर स्थित हैं ।)

महाकालस्य तल्लिङ्गं यैर्दृष्टं कष्टिभिः क्वचित् ।
न स्पृष्टास्ते महापापैर्न दृष्टास्ते यमोद्भटैः[४] ।।

महाकालेश्वर के शिवलिङ्ग का जो कष्ट से भी कभी दर्शन किया होगा, उसे महापाप स्पर्श नहीं करते । न तो वह यमदूतों से देखा जाता है । अस्तु, महाकालेश्वर का जिन्होंने दर्शन-पूजन कर लिया, वह व्यक्ति नरक में नहीं जाता । (महाकालेश्वर दारानगर मुहल्ला में हैं ।)

कपिलेशमिदं लिङ्गं कपिलेन प्रतिष्ठितम् ।
मुच्यन्ते कपयोऽप्यस्य दर्शनात्किमु मानवाः[५] ।।

कपिल से प्रतिष्ठित कपिलेश्वर लिङ्ग को देखकर बन्दर भी मुक्त हो जाते हैं,

---

१. का० ख० ७८।४७; २. वही—८५।२२ ; ३ वही—८५।७४-७५ ।
४. वही—७।९७; ५. वही—३३।१५८;

मनुष्यों को क्या कहा जाय। अतः कपिलेश्वर का दर्शन-पूजन करने वाले नर-नारियों को सुख-सम्पत्ति और अन्त में मुक्ति प्राप्ति होती है। (कपिलेश्वर कपिलगली दुर्गाघाट मुहल्ले में हैं।)

नरो न नरकं पश्येदपि दुष्कृतकर्मकृत्।
यानि कानि च लिङ्गानि काश्यां सन्ति सहस्रशः[1] ॥

कई सहस्र शिवलिङ्ग काशी में हैं, किसी भी लिङ्ग का दर्शन-पूजन कर अत्यन्त दुष्कृत कर्म करने वाला मनुष्य भी नरक नहीं देखता है अर्थात् मोक्ष-प्राप्ति करता है।

कृत्तिवासेश्वरस्यैषा महाप्रासादनिर्मितिः।
यां दृष्ट्वाऽपि नरो दूरात्कृत्तिवासःपदं लभेत्।
सर्वेषामपि लिङ्गानां मौलित्वं कृत्तिवाससः[2] ॥

सभी लिङ्गों में मौलिक कृत्तिवास का लिङ्ग है। कृत्तिवासेश्वर की कृपा से यह स्थापित है। मनुष्य दूर से ही कृत्तिवासेश्वर का दर्शन कर कृत्तिवास पद को प्राप्त करता है।

उपेयादीश्वरञ्चैव योगक्षेमादिसिद्धये।
ततो मध्याह्नसिद्ध्यर्थं पूर्वोक्तं स्नानमाचरेत्।
स्नात्वा माध्याह्निकीं सन्ध्यामुपासीत विचक्षणः[3] ॥

अपने योगक्षेम (कल्याण) के लिये विश्वेश्वर का दर्शन अवश्य करना चाहिए। इसके बाद मध्याह्न काल में स्नान कर मध्याह्न-संध्या करनी चाहिए।

क्व योगयुक्तिः क्व च दैवतेज्या काश्यां विनैभिः सहजेन मुक्तिः।
विश्वेशसंशीलनमेव योगस्तपश्च विश्वेशपुरीनिवासः[4] ॥

कहाँ योगयुक्ति, कहाँ देवता यज्ञादि, इन सब के बिना भी काशीपुरी का निवास तप ही है। विश्वनाथ का दर्शन ही योग है। भक्तियोग, अष्टाङ्गयोग, सिद्धियोग और ज्ञानयोग की प्राप्ति के लिये विश्वनाथ जी का दर्शन करना चाहिए।

अस्मिन् सिद्धा सदा देवि मदीयं व्रतमास्थिताः।
नानालिङ्गधरा नित्यं मम लोकाभिकाङ्क्षिणः[5] ॥

हे देवि ! मेरे इस काशी-क्षेत्र में शास्त्रोक्त व्रत (नियम) धारण किये हुये मेरे शिवलोक की कामना वाले सिद्ध लोग अनेक प्रकार के लिङ्गों (चिह्नों) को धारण किये हुये निवास और उपासना करते हैं।

---

१. का० ख० ३३।१६४; २. वही—३३।१६७; ३. वही—३५।१९१।
४. वही—४०।१६२; ५. म० पु० १८०।४८।

लिङ्गेष्वेको हि विश्वेशस्तीर्थेषु मणिकर्णिका ।
इति संव्याहरन्व्यासस्तद्द्वयं बहु मन्यते[1] ॥

काशी में शिवलिङ्गों में प्रधान विश्वेश्वर विश्वनाथ जी हैं तथा तीर्थों में मणिकर्णिका है। इन दोनों के नामग्रहणपूर्वक वेदव्यास जी इन्हें बहुत मानते हैं।

खट्वाङ्गञ्च धृतं तत्र खट्वाङ्गेशस्ततोऽभवत् ।
निष्पापो जायते मर्त्यः खट्वाङ्गेशविलोकनात्[2] ।

खट्वाङ्ग धारण करने के कारण भगवान् शिव खट्वाङ्गेश हुए। खट्वाङ्गेश्वर के दर्शन से मनुष्य निष्पाप हो जाते हैं।

तत्रैव सनकेशश्च राजसूयफलप्रदः ।
सनत्कुमारलिङ्गञ्च तत्पश्चाद्योगसिद्धिकृत्[3] ॥

वहीं पर राजसूय यज्ञ का फल देने वाले सनकेश्वर हैं। उन्हीं के पास में योग-सिद्धि प्रदान करने वाले सनत्कुमारेश्वर हैं। अतः इन दोनों शिवलिङ्गों का प्रयत्नपूर्वक दर्शन करना चाहिए। (सनकेश्वर तथा सनत्कुमारेश्वर संकटा जी के उत्तर बगल में गङ्गामहल के बगल में हैं।)

तदुत्तरे च कुण्डेशः सर्वसिद्धैर्नमस्कृतः ।
दीक्षां पाशुपतीं लब्ध्वा द्वादशाब्देन यत्फलम् ।
तत्फलं लभते विप्र ! मर्त्यः कुण्डेशदर्शनात्[4] ॥

उसी के उत्तर में कुण्डेश्वर नामक शिव हैं, जो सिद्धों द्वारा पूजित हैं। जो फल द्वादश वर्षपर्यन्त पाशुपत व्रत का पालन करने से होता है, वही फल कुण्डेश्वर के दर्शन से प्राप्त हो जाता है।

अमृतेश्वरनामेदं लिङ्गमानन्दकानने ।
एतल्लिङ्गस्य संस्पर्शादमृतत्वं लभेद् ध्रुवम् ।
अमृतेशं समभ्यर्च्य जीवत्पुत्रः स वै मुनिः[5] ॥

इस आनन्दकानन (काशी-क्षेत्र) में अमृतेश्वर नाम का शिवलिङ्ग है। इस शिवलिङ्ग के स्पर्श से अमरत्व की निश्चित ही प्राप्ति होती है। अमृतेश्वर का पूजन करने वाला मनुष्य पुत्र के जीवित होते हुये अर्थात् पुत्रवान् होने पर भी मुनि ही है।

---

१. म० पु० ९६।६ ; २. का० ख० ९७।७१; ३. वही—९७।१०१ ।
४. वही—९७।१०६; ५. वही—९४।१४ ।

विश्वतीर्थं ततो याम्यां विश्वैस्तीर्थैरधिष्ठितम् ।
तत्र स्नात्वा नरो भक्त्या विश्वनाथं विलोकयेत्[1] ।

उसके दक्षिण में विश्वतीर्थ है। स्नान करके विश्वतीर्थ में अधिष्ठित विश्वनाथ जी का दर्शन करना चाहिए, यतः दर्शन करने से मनोवाञ्छित फल प्राप्त होता है। (विश्वतीर्थ मणिकर्णिका घाट पर है।)

रुद्राणां कोटिजप्येन यत्फलं परिकीर्तितम् ।
तत्फलं लभ्यते देवि रत्नेशस्य समर्चनात् ॥
लिङ्गे चानादिसंसिद्धे यद्वृत्तं तद्ब्रवीमि ते ।
इतिहासं महाश्चर्यं सर्वपापनिकृन्तनम्[2] ॥

विश्वनाथ जो कार्तिकेय जी से कहते हैं कि जो फल करोड़ संख्या में रुद्र का जप करने से होता है, वही फल रत्नेश्वर शिवलिङ्ग की सविधि पूजा करने से होता है।

यह अनादि काल से अनादिसंसिद्ध शिवलिङ्ग माना जाता है। इसके इतिहास को मैं तुझे बतलाता हूँ। यह इतिहास सम्पूर्ण पापों को दूर करने वाला है।

दर्शनात्स्पर्शनाद्यस्य क्षणादेनोमहाबलम् ।
कपालमोचनपुरो दृष्ट्वा लिङ्गं महाबलम् ।
महाबलमवाप्नोति निर्वाणनगरं व्रजेत्[3] ॥

स्कन्द जी कहते हैं कि कपालमोचन के साथ-साथ महाबल शिवलिङ्ग का दर्शन-स्पर्शन करने से भक्त महाबली हो जाते हैं तथा अन्त में उन्हें मोक्ष प्राप्त होता है।

क्षेत्रस्य पश्चिमे भागे स देहलिविनायकः ।
सर्वान्निवारयेद्विघ्नान् भक्तानां नात्र संशयः[4] ॥

काशी-क्षेत्र की पश्चिम सीमा पर पञ्चक्रोशी मार्ग में देहलीविनायक नाम के गणेश जी हैं, वे भक्तों के सब प्रकार के विघ्नों का निवारण करते हैं।

शैलेश्वरस्य ये भक्तास्ते मे पुत्रा न संशयः ।
पापकञ्चुकमुत्सृज्य शिवलोकमवाप्नुयात्[5] ॥

शङ्कर जी पार्वती जी से कहते हैं कि जो शैलेश्वर के भक्त हैं, वे मेरे पुत्र हैं,

१. का० ख० ६१।११३; २. वही—६७।३२-३३; ३. वही—६९।१४-१६।
४. वही—५७।६२; ५. वही—६६।१४७-१४९।

इसमें संशय नहीं है। पाप के कञ्चुक को छोड़कर परमशुद्ध विग्रह वाले वे भक्त शिवलोक को प्राप्त करते हैं। (शैलेश्वर शैलपुत्री मुहल्ले में शैलपुत्री के मन्दिर में विराजमान हैं।)

चक्रपुष्करिणीतीरे ज्योतीरूपेश्वरं परम्।
समभ्यर्च्याप्नुयान्मर्त्यो ज्योतीरूपं न संशयः[1]॥

चक्रपुष्करिणी (मणिकर्णिका घाट) के किनारे परमश्रेष्ठ ज्योतीरूपेश्वर (मणिकर्णिकेश्वर) की पूजा करके मनुष्य ज्योति रूप को प्राप्त कर लेता है, इसमें कोई सन्देह नहीं है। मणिकर्णिकेश्वर की उपासना से दिव्य ज्योति का दर्शन होता है।

साम्बादित्यस्तदारभ्य सर्वव्याधिहरो रविः।
ददाति सर्वभक्तेभ्योऽनामयाः सर्वसम्पदः[2]॥

साम्बादित्य सूर्य प्रकट होने के दिन से ही सभी व्याधियों का हरण करते हैं और भक्तों को निरोग बनाते हुये सब प्रकार की सम्पत्तियों से अपने दर्शन-पूजन और उपासना करने वाले भक्तों को पूर्ण करते हैं। (साम्बादित्य सूर्य सूर्यकुण्ड मुहल्ले में हैं।)

त्रिपुरान्तकमालोक्य तत्फलं हेलयाप्यते।
विश्वेशात्पश्चिमे भागे त्रिपुरान्तकमीश्वरम्॥
सम्पूज्य परया भक्त्या न नरो गर्भमाविशेत्।
सौम्यस्थानादिहायातो भगवान्कुक्कुटेश्वरः[3]॥

त्रिपुरान्तकेश्वर का दर्शन करने वाले स्त्री-पुरुषों को अनायास समग्र पुण्यफल प्राप्त हो जाते हैं। विश्वेश्वर के पश्चिम भाग में त्रिपुरान्तकेश्वर महादेव का स्थान है, परम भक्ति से उनकी पूजा कर मनुष्य पुनः गर्भ में प्रविष्ट नहीं होता है, अर्थात् पुनः जन्म नहीं लेता। (त्रिपुरान्तकेश्वर सिगरा मुहल्ला टीला में शैलमल्लिकार्जुन नाम से प्रसिद्ध हैं।)

ज्ञानवाप्याः पुरोभागे तल्लिङ्गं तारकेश्वरम्।
तारकं ज्ञानमाप्येत तल्लिङ्गस्य समर्चनात्॥
ज्ञानवाप्यां नरः स्नात्वा तारकेशं विलोक्य च[4]॥

ज्ञानवापी के अग्रभाग में तारकेश्वर नामक शिवलिङ्ग है। इस शिवलिङ्ग के दर्शन से तारक मन्त्र का ज्ञान हो जाता है। तारक मन्त्र के ज्ञान से ही जीव मुक्त होता है।

---

१. का० ख० ९४।३१; २. वही—४८।४७।
३. वही—६९।७४-७५; ४. वही—६९।१५४।

मरण काल में भगवान् शिव तारक मन्त्र का ही उपदेश देते हैं। मणिकर्णिका-घाट एवं ज्ञानवापी में स्नान कर तारकेश्वर महादेव का दर्शन प्रयत्नपूर्वक करना चाहिए। (तारकेश्वर विश्वनाथ जी से सटे हुए पूर्व बगल में विराजमान हैं।)

तारकज्ञानदं पुंसां मुनेऽद्यापि समर्चयेत्।
तारकेश्वरलिङ्गस्य कृत्वा भक्तिं सुनिश्चलाम्।
सुखेन तारकज्ञानं लभ्यते तैर्नरोत्तमैः[1] ॥

हे मुने ! तारक ज्ञान देने वाले तारकेश्वर शिवलिङ्ग का जिन्होंने भक्तिपूर्वक अर्चन-पूजन किया है, वे मनुष्यों में उत्तम पुरुष हैं, वे तारक ज्ञानपूर्वक सुख प्राप्त करते हैं।

महादेवे महापीठं मम साधकसिद्धिदम्।
तत्पीठदर्शनादेव महापापैः प्रमुच्यते[2] ॥

विश्वनाथ जी भवानी जी से कहते हैं कि काशी के महादेव स्थान में साधकों को सिद्धि प्रदान करने वाला मेरा महापीठ है। महादेवेश्वर पीठ के दर्शन करने से ही लोग महापापों से छूट जाते हैं। (महादेवेश्वर पार्वतीश्वर के बगल में त्रिलोचनघाट में हैं।)

साम्बादित्यं नरो जातु न शोकैरभिभूयते।
संवत्सरकृतात्पापाद् बहिर्भवति तत्क्षणात्[3] ॥

साम्बादित्य का पूजन करने से मनुष्य कभी भी शोक को प्राप्त नहीं करता है तथा साम्बादित्य की कृपा से उसी क्षण वर्ष भर के किये हुए पापों से भी मुक्त हो जाता है। (साम्बादित्य सूर्यकुण्ड मुहल्ले में हैं।)

लोलार्कसङ्गमे स्नात्वा दानं होमं सुरार्चनम्।
यत्किञ्चित्क्रियते कर्म तदानन्त्याय कल्पते[4] ॥

लोलार्क कुण्ड में स्नान, दान, होम, देवार्चन जो भी किया जाता है, वह अनन्त काल तक संचित रहता है। (लोलार्क कुण्ड भदैनी मुहल्ले में है।)

प्रत्यर्कवारं लोलार्कं यः पश्यति शुचिव्रतः।
न तस्य दुःखं लोकेऽस्मिन्कदाचित्संभविष्यति ॥
न तस्य दुःखं नो पामा न दद्रुर्न विचर्चिका[5] ॥

प्रत्येक रविवार के दिन जो लोलार्क कुण्ड का दर्शन करता है, इस लोक में उसे

---

१. का० ख० ५३।१२१; २. वही—७९।९९; ३. वही—४८।५४।
४. वही—४६।५३; ५. वही—४६।५६।

कभी भी दुःख-दारिद्रय, कुष्ठ, विचर्चिका नहीं होती है। इससे चर्मरोग नष्ट होता है।

सोमवासरमासाद्य एकभक्तव्रतं चरेत्।
यष्टव्यः करुणापुष्पैर्व्रतिना करुणेश्वरः[1] ॥

सोमवार के दिन एक समय भोजन कर व्रत करने वाले व्यक्ति का परम कर्त्तव्य है कि कनैल के पुष्पों से करुणेश्वर का पूजन करें। कनैल के पुष्प से जो मनुष्य करुणेश्वर की पूजा करते हैं, उनके समग्र मनोरथ पूर्ण होते हैं। (करुणेश्वर त्रिसन्ध्येश्वर के बगल में ललिताघाट में हैं।)

घण्टाकर्णह्रदे स्नात्वा दृष्ट्वा व्यासेश्वरं नरः।
यत्र कुत्र मृतो वापि वाराणस्यां मृतोऽभवत्[2] ॥

घण्टाकर्ण सरोवर में स्नान कर तथा व्यासेश्वर का दर्शन कर मनुष्य जहाँ कहीं भी मरते हैं, वे वाराणसी में ही मरे हुए माने जाते हैं। (प्रथम वेदव्यासेश्वर कर्णघण्टा मुहल्ले में जल के अन्दर तथा द्वितीय रामेश्वर के नाम से प्रसिद्ध हैं।)

व्यासेश्वरः प्रयत्नेन द्रष्टव्यः काशिवासिभिः।
घण्टाकर्णकृतस्नानैः क्षेत्रपातकभीरुभिः[3] ॥

काशी में घण्टाकर्ण सरोवर में स्नान करने वाले तथा काशी-क्षेत्र में किये गये पापों से डरने वाले काशीनिवासियों का परम कर्त्तव्य है कि वे व्यासेश्वर का प्रयासपूर्वक दर्शन करें, यतः काशी में व्यासेश्वर का दर्शन करते ही काशी में किये गये पाप नष्ट हो जाते हैं।

कृतानि यानि पापानि नरैः संवत्सरावधि।
नश्यन्ति क्षणतस्तानि षष्ठचर्के लोलदर्शनात्[4] ॥

मार्कण्डेय जी महादेव जी से कहते हैं कि मनुष्यों के वर्ष भर के किये हुए पाप भाद्रपद शुक्लपक्ष की षष्ठी के दिन लोलार्क कुण्ड में स्नान करके लोलार्केश्वर भगवान् के दर्शन से तत्क्षण ही नष्ट हो जाते हैं।

गभस्तीश्वर इत्याख्यां ततो लिङ्गमवाप्स्यति।
अर्चयित्वा गभस्तीशं स्नात्वा पञ्चनदे नरः[5] ॥

गभस्तीश्वर नाम से भी एक शिवलिङ्ग विख्यात है। पञ्चगङ्गा में स्नान करके, गभस्तीश्वर की पूजा करने वाले मनुष्यों का पुनर्जन्म नहीं होता है। (गभस्तीश्वर मंगला गौरी से सटे हुए शिवलिङ्ग हैं।)

१. का० ख० ९४।२३; २. वही—९५।७१; ३. वही—९५।७४।
४. वही—४६।५१; ५. वही—४९।७९।

त्वदर्चनान्नृणां कश्चिन्न व्याधिः प्रभविष्यति।
भविष्यति न दारिद्रयं रविवारे त्वदीक्षणात्[1]॥

रविवार के दिन मयूखादित्य सूर्य का दर्शन-पूजन करने से मनुष्यों को किसी प्रकार की व्याधि तथा दरिद्रता नहीं होती। (गभस्तीश्वर से ही सटे हुए मयूखादित्य हैं।)

तस्य दर्शनमात्रेण सर्वपापैः प्रमुच्यते।
काश्यां पैशङ्गिले तीर्थे खखोल्कस्य विलोकनात्।
नरश्चिन्तितमाप्नोति नीरोगो जायते क्षणात्[2]॥

सिद्धलिङ्ग खखोल्कादित्य के दर्शन मात्र से ही मनुष्य सब पापों से छुटकारा पा जाता है। काशी में पैशङ्गिल तीर्थ में खखोल के दर्शन-पूजन से निश्चय ही क्षण भर में निरोग हो जाता है। अतः रोगी को प्रयत्नपूर्वक दर्शन करना चाहिए। (खखोल्कादित्य कामेश्वर से सटे हुए पूर्वाभिमुख स्थित हैं।)

वृद्धादित्यं नमस्कृत्य वाराणस्यां रवौ नरः।
लभेदभीप्सितां सिद्धि न क्वचिद्दुर्गतिं लभेत्[3]॥

काशी में रविवार के दिन वृद्धादित्य को नमस्कार करके मनुष्य अभीप्सित सिद्धि को प्राप्त करता है तथा उसकी किसी प्रकार की दुर्गति नहीं होती। (वृद्धादित्य का मन्दिर मीरघाट में है।)

भैरवी भीषणा नाम तत्र भीषणरूपिणी।
क्षेत्रस्य भीषणं सर्वं नाशयेद्भावतोऽर्चिता॥
तत्रोपजङ्घनेर्लिङ्गं कर्मबन्धविमोक्षणम्।
नृभिः संसेवितं भक्त्या षण्मासात्सिद्धिदं परम्[4]॥

स्कन्द जी कहते हैं कि वहीं भीषणरूपिणी भीषणा नामक भैरवी भगवती हैं, जो क्षेत्र के सभी अत्याहित उपद्रव का नाश करती हैं। भक्ति-भावपूर्वक पूजित भैरवी भीषण भूत-भैरव के मन्दिर में स्थिर होकर सभी भयों को दूर करती हैं। वहीं पर सभी कर्मबन्धनों को नष्ट करनेवाला शिवलिङ्ग भी है, जो छः मासपर्यन्त किसी मनुष्य से अनुष्ठानपूर्वक उपास्य होने पर उसकी समग्र कामनाओं को सिद्ध करता है।

---

१. का० ख० ४९।९४;
२. वही—५०।१५०।
३. वही—५१।४३;
 का० मा०—३०
४. वही—६५।७-८।

कन्दुकेश्वरभक्तानां मानवानां निरेनसाम् ।
योगक्षेमं सदा कुर्वाद्भवानी भयनाशिनी[१] ॥

कन्दुकेश्वर भगवान् के निष्पाप भक्तों का योगक्षेम भगवती भयनाशिनी भवानी स्वयं करती हैं। (अप्राप्त वस्तु की प्राप्ति को योग तथा प्राप्त वस्तु के संरक्षण को क्षेम कहते हैं।) अतः प्रयत्नपूर्वक कन्दुकेश्वर का दर्शन-पूजन करना चाहिए। (कन्दुकेश्वर भूत-भैरव मुहल्ले में हैं।)

दर्शनात्तस्य लिङ्गस्य महाकारुणिकस्य वै ।
न क्षेत्रान्निर्गमो जातु बहिर्भवति कस्यचित्[२] ॥

इस महाकरुणेश्वर शिवलिङ्ग के दर्शन से कभी भी किसी का इस काशी-क्षेत्र से बहिर्गमन नहीं होता है, अर्थात् करुणेश्वर का दर्शन-पूजन करनेवाले को काशी से बाहर नहीं जाना पड़ता, यतः धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष चारों पदार्थ काशी में ही प्राप्त होते हैं ।

अविमुक्तं महत्क्षेत्रं पञ्चक्रोशपरीमितम् ।
ज्योतिर्लिङ्गं तदेकं हि ज्ञेयं विश्वेश्वराभिधम्[३] ॥

पञ्चक्रोशीपर्यन्त अविमुक्त अत्यन्त बृहत् क्षेत्र है, तो भी एक ही विश्वेश्वर नामक ज्योतिर्लिङ्ग जानना चाहिए।

तत्राहं ज्ञानदो नृणां ज्ञानकेशवसंज्ञकः ।
न ज्ञानाद् भ्रश्यते क्वापि ज्ञानकेशवपूजनात्[४] ॥

विष्णु जी कहते हैं कि वरणा संगम में ज्ञानकेशव नाम से मैं मनुष्यों को ज्ञान देता हूँ। ज्ञानकेशव के पूजन से कभी भी मनुष्य ज्ञान-भ्रष्ट नहीं होता है। (ज्ञानकेशव आदिकेशव से सटे हुए बगल में वसन्त कालेज मुहल्ला में हैं।)

या मे मुक्तिपुरी काशी सर्वाभ्योऽपि गरीयसी ।
आधिपत्ये च तस्यास्ते कालराजः सदैव हि ॥

सभी मुक्तिदायिनी पुरियों में मेरी काशी सर्वश्रेष्ठ पुरी है; क्योंकि यहाँ का आधिपत्य साक्षात् कालराज करते हैं। (कालराज भैरव मुहल्ला में कालभैरव नाम से प्रसिद्ध हैं।)

---

१. का० ख० ६५।३९; २. वही—९४।२१; ३. वही—२।१३१।
४. वही—६१।७-८;

तस्मात्सदैव द्रष्टव्यः कपर्दीश्वर उत्तमः ।
पूजितव्यं प्रयत्नेन स्तोतव्यं वैदिकैः स्तवैः[1] ॥

इसलिए कपर्दीश्वर का दर्शन-पूजन और स्तुति वैदिक मन्त्रों से करनी चाहिए। (कपर्दीश्वर पिशाचमोचन मुहल्ले में हैं।)

अनेकजन्मपापानि कृतानि मम शङ्कर ! ।
गतानि पञ्चक्रोशात्मलिङ्गस्यास्य प्रदक्षिणात्[2] ॥

हे भगवान् शंकर ! आपके पञ्चक्रोशात्मक इस शिवलिङ्ग की प्रदक्षिणा से मेरे अनेक जन्म में किये हुए पाप नष्ट हो गये । अतः पञ्चकोशी प्रदक्षिणा, यात्रा प्रयत्न-पूर्वक करनी चाहिए ।

शर्वलिङ्गं समभ्यर्च्य काश्यां परमसिद्धिकृत् ।
यत्र यज्ञेश्वरं लिङ्गं सर्वलिङ्गफलप्रदम्[3] ॥

काशी में भगवान् शिवलिङ्ग की पूजा कर मनुष्य सम्पूर्ण सिद्धि प्राप्त कर लेता है । सभी शिवलिङ्गों के दर्शनजन्य फलों को प्रदान करनेवाले यज्ञेश्वर शिव-लिङ्ग का दर्शन कर मनुष्य सहस्रों जन्म के पापों को नष्ट करता है । (यज्ञेश्वर शिव-लिङ्ग कोतवालपुरा मुहल्ले में विनायक के सटे हुए बगल में हैं ।)

कृतसन्ध्यादिनियमः परितर्प्य पितामहान् ।
धृतमौनव्रतो धीमान्यावल्लिङ्गविलोकनम्[4] ॥

सन्ध्यादि नित्यकर्म, देव, ऋषि एवं पितामहादि का तर्पण समाप्त कर मौन व्रत को धारण करता हुआ जो बुद्धिमान् शिवलिङ्ग का दर्शन करता है, उस व्यक्ति को मनोवाञ्छित फल प्राप्त होता है ।

लिङ्गे त्वनादिसंसिद्धे ह्यवतस्थे त्रिविष्टपे ।
पुण्ये पिलिपिलातीर्थे सर्वेषां तारकप्रदे[5] ॥

अनादि काल से संसिद्ध त्रिविष्टप शिवलिङ्ग के दर्शन से तथा पुण्यप्रद, सभी को तारक मन्त्र का ज्ञान प्रदान करने वाले पिलिपिलातीर्थ में स्नान करके त्रिलोचने-श्वर शिवलिङ्ग (त्रिलोचन घाट पर) का दर्शन-पूजन करने वाले भक्तों के मनोरथ सिद्ध होते हैं और धन, ऐश्वर्य की प्राप्ति होती है ।

---

१. पद्म-पुराण, स्वर्ग-खण्ड—३५।१२; २. का० रह० ; ३. का० ख० ६९।८२-८३ ।
४. वही—६९।१५५; ५. वही—६९।१६६-१६७ ।

त्रिविष्टपस्य लिङ्गस्य स्मरणादपि मानवः ।
त्रिविष्टपपतिर्भूयान्नात्र कार्या विचारणा[१] ॥

त्रिविष्टप त्रिलोचन शिवलिङ्ग के स्मरण मात्र से ही मानव स्वर्गपति होता है, अर्थात् स्वर्ग का स्वामी बनता है। इसमें विचार का कोई अवसर ही नहीं है।

पितामहेश्वरं लिङ्गं तत्राभ्यर्च्य नरो मुदा ।
त्रिःसप्तकुलसंयुक्तो मुच्यते नात्र संशयः[२] ॥

जो मनुष्य काशी में पितामहेश्वर शिवलिङ्ग की विधिपूर्वक पूजा करते हैं, वे मनुष्य अपनी २१ पीढ़ियों को मुक्त करते हैं, इसमें संशय नहीं है। अतः पितामहेश्वर का दर्शन-पूजन करनेवाले नर-नारियों के कुल का उद्धार होता है। (पितामहेश्वर कलशेश्वर के बगल में हैं।)

प्रयागस्नानजात्पुण्याच्छूलटङ्कविलोकनात् ।
स प्राप्नुयान्न सन्देहः पुण्यं कोटिगुणोत्तरम्[३] ॥

मनुष्य साक्षात् प्रयाग-संगम में स्नान करने से जो पुण्य प्राप्त करता है, शूलटङ्केश्वर महादेव के दर्शन-पूजन से काशी में उससे करोड़ गुना अधिक पुण्य (फल) प्राप्त करता है। शूलटङ्केश्वर स्वयंभू शिवलिङ्ग हैं। (प्रयागराजघाट गङ्गेश्वर के बगल में है।)

नीलकण्ठेश्वरं लिङ्गं काश्यां यैः परिपूजितम् ।
नीलकण्ठास्त एव स्युस्त एव शशिभूषणाः[४] ॥

जो व्यक्ति श्रद्धा-भक्तिपूर्वक काशी में नीलकण्ठेश्वर भगवान् का विधानपूर्वक पूजन करते हैं, वे निश्चित ही नीलकण्ठेश्वर की कृपा से शशिभूषण शिवस्वरूप हो जाते हैं। (नीलकण्ठेश्वर नीलकण्ठ मुहल्ला में हैं।)

जयन्तेश्वरमालोक्य स्नात्वा गङ्गाजले शुभे ।
प्राप्नुयाद्वाञ्छितां सिद्धिं सर्वत्र विजयी भवेत्[५] ॥

गङ्गाजल में स्नान कर जयन्तेश्वर महादेव का दर्शन करने से जीव अपने अभीष्ट मनोरथ की सिद्धि करता है तथा सर्वत्र विजयी होता है। (जयन्तेश्वर स्वप्नेश्वर के मन्दिर में (शिवालय में) हैं।)

---

१. का० ख० ७५।१३; २. वही—६९।३८; ३. वही—६९।४३।
४. वही—६९।६०; ५. वही—६९।७२।

अविमुक्तेश्वरं येन याम्यामैक्षिष्ट यः स्पृशेत् ।
त्रिसन्ध्यमविमुक्तेशं यो जपेन्नियतः शुचिः ॥
दूरदेशविपन्नोऽपि काशीमृतफलं लभेत्[१] ॥

अविमुक्तेश्वर का जिन्होंने दर्शन-स्पर्शन किया है तथा त्रिकाल नियमपूर्वक पञ्चाक्षरी जप किया है, दूर देश में मरने पर भी वह मनुष्य काशी में मरने का फल प्राप्त करता है। (अविमुक्तेश्वर ढुण्ढिराजगली में राजराजेश्वर के दक्षिण बगल में पूतलिशिवालय के नाम से प्रसिद्ध हैं।)

अविमुक्तं महालिङ्गं दृष्ट्वा ग्रामान्तरं व्रजेत् ।
लब्ध्वाऽऽशु कार्यसंसिद्धिं क्षेमेण प्रविशेद्गृहम्[२] ॥

जो व्यक्ति अविमुक्तेश्वर महालिङ्ग का दर्शन करके कहीं अन्यत्र जाय तो शीघ्र ही कार्य सिद्ध कर घर आ जाता है। अतः अविमुक्तेश्वर का प्रयत्नपूर्वक दर्शन करना चाहिए।

परं लिङ्गार्चनस्थानमविमुक्तेश्वरेश्वरम् ।
तत्र पूजां सकृत्कृत्वा कृतकृत्यो नरो भवेत्[३] ॥

विश्वनाथ जी अपने करकमलों से अविमुक्तेश्वर की स्थापना किये हैं। अविमुक्तेश्वर की अर्चना-पूजा एक बार भी भलीभाँति करने से मनुष्य कृतकृत्य हो जाता है।

स्मरणादस्य लिङ्गस्य पापं जन्मद्वयार्जितम् ।
अवश्यं नश्यति क्षिप्रं मम वाक्यान्न संशयः[४] ॥

स्कन्द जी अगस्त्य ऋषि से कहते हैं कि शिवलिङ्ग के स्मरणमात्र से दो जन्म के अर्जित पाप मेरे कथनानुसार शीघ्र ही नष्ट हो जाते हैं, इसमें कोई सन्देह नहीं है।

कुण्डोदरेश्वरं लिङ्गं दृष्ट्वा लोलार्कसन्निधौ ।
सर्वपापविनिर्मुक्तः शिवलोके महीयते[५] ॥

लोलार्क के समीप में कुण्डोदरेश्वर शिवलिङ्ग का दर्शन करने वाला व्यक्ति सब पाप से मुक्त होकर शिवलोक में पूजनीय होता है। (कुण्डोदरेश्वर लोलार्क-कुण्ड से सटे हुए दक्षिण बगल के गङ्गेश्वर मन्दिर में हैं।)

---

१. का० ख० ३९।-९५९६; २. वही—३९।९७; ३. वही—७९।९२।
४. वही—९९।२३। ५. वही—५३।७८।

कुक्कुटेश्वरलिङ्गस्य येऽत्र भक्ति वितन्वते ।
कुक्कुटाण्डाकृतेस्तस्य न ते गर्भमवाप्नुयुः[1] ॥

कुक्कुटेश्वर शिवलिङ्ग का जो लोग भक्ति से दर्शन करते हैं, वे पुनः माँ के गर्भ में नहीं आते हैं, अर्थात् वे मुक्ति प्राप्त करते हैं ।

शिवस्यैव परा मूर्तिः खखोल्को नाम भास्करः ।
काशीवासिजनानेकभवपापक्षयङ्करः[2] ॥

शिव जी की परा मूर्त्ति खखोल्कादित्य नामक सूर्य काशीवासी जनों के संसार-रूपी अर्थात् जन्म-मृत्यु रूप पापों का क्षय करने वाले हैं । (खखोल्कादित्य कामेश्वर गली में मच्छोदरी मुहल्ले में हैं ।)

यदुक्तं लिङ्गमेकैकं महासारतरं परम् ।
काश्यां परमनिर्वाणकारणं कारणेश्वर[3] ! ॥

हे कारणेश्वर जी ! आपने जो सार से सार परमतत्त्वरूप एक-एक शिवलिङ्गों को बतलाया है, जो काशी में परम निर्वाण (परमानन्द मोक्ष) के कारण हैं, अर्थात् मुक्ति प्रदान करते हैं ।

सर्वपापप्रशमनं गौतमेशं च नामतः ।
हरितेश्वरनामानं सर्वपापक्षयङ्करम्[4] ॥

गौतमेश्वर नामक शिवलिङ्ग सभी पापों को शान्त करने वाला है । अर्थात् गौतमेश्वर का दर्शन-पूजन करने वाले नर-नारियों के सभी पाप विनष्ट होते हैं । हरितेश्वर नामक शिवलिङ्ग सभी पापों का क्षय करनेवाला है । अर्थात् इनका दर्शन-पूजन करने से पापरूप समष्टि का नाश होता है । (हरितेश्वर भूतभैरव मुहल्ले में हैं)

प्रह्लादतीर्थे तत्रैव नाम्ना प्रह्लादकेशवः ।
भक्तैः समर्चनीयोऽहं महाभक्तिसमृद्धये[5] ॥

विष्णु भगवान् कहते हैं कि प्रह्लादघाट पर प्रह्लाद तीर्थ है तथा वहीं प्रह्लाद-केशव नाम से मैं स्थित हूँ । जो भक्त प्रह्लाद-केशव की पूजा करते हैं, उनकी भक्ति की वृद्धि मैं करता हूँ ।

---

१. का० ख० ५३।५९; २. वही—५०।१४७-१४८ ; ३. वही—७३।७१ ।
४. कू० क० त०; ५. का० ख० ६१।११ ।

महाबलनृसिंहोऽहमोङ्कारात्पूर्वतो मुने ।
दूतान्महाबलान्याम्यान्न पश्येत्तु तदर्चकः[1] ॥

हे मुनि ! ओंकारेश्वर की पूर्व दिशा में मैं महाबली नृसिंह के रूप में स्थित हूँ। महाबली नृसिंह की पूजा करनेवाला व्यक्ति यमराज के महाबलशाली दूतों को नहीं देखता है। अर्थात् अन्तकाल में यमराज के दूत उसे लेने के लिये नहीं आते हैं। (प्रह्लादकेशव के ऊपर में प्रह्लाद-नृसिंह हैं।)

तद्दर्शनाद्भवेत्सम्यग्गोदानजनितं फलम् ।
गोलोकात्प्रेषिता गावः पूर्वं यच्छम्भुना स्वयम् ।
वाराणसीं समायाता गोप्रेक्षं तत्ततः स्मृतम्[2] ॥

गोप्रेक्षेश्वर के दर्शन से सम्यग् रूप से सम्पन्न गोदान का फल प्राप्त होता है। पहले गोलोक से श्री शम्भु ने गायों को काशी के लिये प्रेषित किया था। वे सभी वाराणसी में आयीं। उनके द्वारा स्थापित शिवलिङ्ग गोप्रेक्षेश्वर के नाम से प्रसिद्ध है। (लालघाट के ऊपर गोप्रेक्षेश्वर विराजमान हैं।)

येन काशी हृदि ध्याता येन काशीह सेविता ।
तेनाहं हृदि संध्यातस्तेनाहं सेवितः सदा ॥
काशीं यः सेवते जन्तुर्निर्विकल्पेन चेतसा[3] ॥

विश्वनाथ जी कहते हैं कि जो मनुष्य निर्विकल्प चित्त से काशी का स्मरण करता है, उससे सदैव मैं सेवित रहता हूँ तथा जो व्यक्ति काशी का निरन्तर हृदय में ध्यान करता है, मानो वह मेरा ही ध्यान, स्मरण करता है।

येन बीजाक्षरे योगे काशीति हृदि धारितम् ।
अबबीजानि भवन्त्येव कर्मबीजानि तस्य वै ॥

जो प्राणी 'काशी' नाम बीजरूप को हृदय में धारण करता है, उसके कर्म-बीज निर्बीज हो जाते हैं, अर्थात् उसका कर्मजन्य फल नष्ट हो जाता है।

---

१ का० ख० ६१।१८९; २. वही ९७।१०-११।
३. वही—५३।९३-९४।

॥ पञ्चम अध्याय ॥

फलस्य दर्शने पुण्यं स्पर्शात्कोटिगुणं भवेत् ।
शतकोटिगुणं पुण्यं धारणाल्लभते नरः ॥

रुद्राक्ष का दर्शन करने से जो पुण्य होता है, उससे कोटि गुना पुण्य स्पर्श करने से होता है और उसका अरब गुना फल रुद्राक्ष को धारण करनेवाले मनुष्य को प्राप्त होता है।

लक्षकोटिसहस्राणि लक्षकोटिशतानि च ।
जपाच्च लभते नित्यं नात्र कार्या विचारणा ॥

लक्ष कोटि से सहस्र गुना तथा शतगुना फल रुद्राक्ष की माला पर जप करने वाले मनुष्य को प्राप्त होता है। इसमें कुछ सन्देह नहीं है।

रुद्राक्षधारणाद्रुद्रो भवत्येव न संशयः ॥

रुद्राक्ष धारण करने से पुरुष स्वयं भगवान् शङ्कर के समान हो जाते हैं।

सर्वाश्रमाणां वर्णानां स्त्रीशूद्राणां शिवाज्ञया ।
धार्याः सदैव रुद्राक्षा यतीनां प्रणवेन हि ॥

सभी आश्रमों तथा सभी वर्णों की स्त्री और शूद्रों को भी भगवान् शिव की आज्ञा के अनुसार सदैव रुद्राक्ष धारण करना चाहिए।

आनन्दाख्ये कानने ये वसन्ति क्षेत्रन्यासं संविधायात्र पुत्र ।
तैर्वस्तव्यं रुद्ररूपैर्हि यत्नाद्यतो रुद्रो धर्मपालः प्रसिद्धः[1] ॥

हे पुत्र ! विधिपूर्वक काशी में क्षेत्र-संन्यास लेकर जो इस आनन्दकानन (काशी-क्षेत्र) में निवास करते हैं, वे रुद्ररूप ही हैं। जिस प्रकार से धर्मपाल रुद्र रूप में प्रसिद्ध हैं, उसी प्रकार काशी में क्षेत्र-संन्यास लेकर वास करने वाले नर और नारी जीवन्मुक्त और सिद्ध हैं। इसलिए उन्हें सताने वाले को भैरव के गण दण्ड देते हैं।

ये क्षेत्रसंन्यासकरा महामते ! ते वन्दनीयाः कृतबुद्धयः सदा ।
ते शङ्करत्वं समवाप्य जीवा भवन्ति चेदिन्द्रियार्थेषु लोलाः[2] ॥

हे महामते ! काशी में जो नर-नारी क्षेत्र-संन्यास लेकर काशीवासी करते हैं,

---

१. का० ख० २।५८ ; २. वही—२।५९ ।

वे ज्ञान-बुद्धि-सम्पन्न लोग सदा पूजा करने योग्य हैं। वे मनुष्य शिवत्व को प्राप्त कर इन्द्रियों में अनासक्त होते हैं।

श्री 'काशी'पुरी पृथ्वी का मनःप्रदेश है और 'कुरुक्षेत्र' पृथ्वी का हृदय-प्रदेश है, ऐसा पुराणकाल से सिद्ध है। चन्द्रपिण्ड विराट् के मन से समुद्भूत है और मनस्वी प्राणियों के मन चन्द्रपिण्ड से अनुस्यूत और अनुप्राणित हैं। चन्द्रग्रहण के समय जब चन्द्रपिण्ड से पृथ्वी-प्रदेश को मिलने वाले सोमांश का 'केतु' अपर नामक चेतन देवाधिष्ठान भूच्छाया से अवरोध हो जाता है, तो उस समय सांसारिक व्यवहार-कार्यों में क्षीयमाण मनःशक्ति में मानसिक रोगों की छाप पड़ जाने का पूरा भय होता है। अतः आस्तिक लोग उस समय स्नान-दान, पूजा-पाठ और ईश्वराराधन करते हुए अपने मानसिक स्तर को स्थिर रखने का प्रयत्न करते हैं। अन्यान्य भूप्रदेशों की तुलना में 'काशी'-पुरी का पञ्चकोश परिमित भूखण्ड पृथ्वी का मनोमय प्रदेश होने के कारण उपर्युक्त कार्यों के लिये सर्वाधिक उपयुक्त है। इसी वैज्ञानिक भावना से प्रेरित होकर सनातनधर्मी जनता समय-समय पर चन्द्रग्रहण के समय काशीपुरी में एकत्रित होकर गङ्गास्नान और भगवान् श्रीविश्वनाथ के दर्शन से अपने आपको कृतार्थ करती है।

यत्र ब्रह्मा पवमानः छन्दस्यां वाचं
वदन्, ग्राब्णा सोमे महीयते।
सोमेनान्तं जनन्निन्द्रायेन्द्रो परिस्रव[1] ॥

जिस काशी-क्षेत्र में जगत्स्रष्टा ब्रह्मा ने पवित्र वेदवाणी का पाठ किया था और जहाँ ग्राब्णा पाषाण प्रतिमाएँ भी (सोमे) उमा = अन्नपूर्णासहित विश्वनाथ के रूप में पूजनीय हो गयीं। हे चन्द्रदेव ! उस काशी-क्षेत्र में उमासहित शङ्कर आनन्द प्रदान करते हैं, अतः आप परमैश्वर्य के लिये अपना मनोमय सोमांश-परिस्रव, चारों ओर से प्रवाहित करें।

दशाहाभ्यन्तरे यस्य गङ्गायामस्थि मज्जति।
तावत् स्वर्गे वसेत् प्रेतो यावत्तत्रास्थि तिष्ठति ॥

मृत व्यक्ति की अस्थि (हड्डी) जिस दिन मृत्यु हुई, उस तिथि से दश दिन के भीतर ही काशी में या गङ्गा जी में डाल दी जाय तो वह मृतक स्वर्ग में तब तक निवास करता है, जब तक गङ्गा जी के जल में उसकी हड्डी रहती है। स्कन्दपुराण

---

१. ऋ० सं० ७।११३।४।

में लिखा है कि बाहर से सभी लोग मृतकों को काशी में लाकर दाह-संस्कार करते हैं। जिस व्यक्ति का काशी में दाह-संस्कार हुआ है, उसका पुनर्जन्म नहीं होता और जिस मृतक व्यक्ति की अस्थि बाहर से लाकर गङ्गा जी में छोड़ी जाती है, वह मृतक-मनुष्य स्वर्ग में वास करता है। काशी में यदि शव (मृतक लाश) का दर्शन हो जाय तो **'विश्वनाथाय नमः'** कहकर नमस्कार करना चाहिए। चूँकि वह मृतक मुक्त हो गया, इसी प्रसन्नता (हर्ष) से सब लोग मृतक को सजाकर काशी में बाजा बजाते हुए बड़े उत्तम ढंग से जुलूस निकालते हैं। शव के ऊपर सुगन्धित फूल, लावा और पैसा वर्षाते हुए 'हर-हर-महादेव शम्भो ! काशी विश्वनाथ गङ्गे' का कीर्तन करते हुए तथा 'राम नाम सत्य है' कहते हुए सब मिलकर चलते हैं। जगह-जगह रुककर पिण्डदान करते हैं। धीरे-धीरे हरिचन्द्रघाट या मणिकर्णिकाघाट पर जाते हैं। दाह-संस्कार करके सब अपने को धन्य समझते हैं। शव-यात्रा में जहाँ तक हो सके, मनुष्यों को अवश्य ही सम्मिलित होना चाहिए; क्योंकि वेद, पुराणों में अमित फल लिखा है। काशीवासी लोग शव-यात्रा को मंगल मानते हैं। (इस प्रसंग में 'काशी-मोक्ष-निर्णय' अवश्य द्रष्टव्य है।)

मम प्रियस्य क्षेत्रस्य योऽविमुक्तस्य चिन्तनात् ।
प्राणप्रयाणसमये दूरगोऽप्यघवानपि[1] ॥

मेरे प्रिय अविमुक्त क्षेत्र का प्राण-प्रयाण (मृत्यु) समय में जो व्यक्ति स्मरण करता है, वह दूर स्थित पापी विश्व में कहीं भी रहे, पापरहित हो जाता है।

विना तपोजपाद्यैश्च विना योगेन सुव्रत ।
निःश्रेयो लभते काश्यामिहैकेनैव जन्मना[2] ॥

हे सुव्रत ! प्रत्येक प्राणी जप-तप और योग के विना ही काशी में एक जन्म में ही परम कल्याण अर्थात् मोक्ष को प्राप्त करता है।

सायुज्यमुक्तिरत्रैव सान्निध्यादिरथान्यतः ।
सुलभा सोऽपि नो नूनं काश्यां मोक्षोऽस्ति हेलया[3] ॥

सायुज्य मुक्ति तो मात्र काशी में ही प्राप्त होती है। अन्यत्र तो सान्निध्यादि मुक्ति प्राप्त होती है। जो सायुज्य मुक्ति अन्यत्र परम दुर्लभ है, वह भी काशी में अनायास ही प्राप्त हो जाती है।

---

१. का० ख० २६।१०५ ; २. वही—२२।११२ ; ३. वही—९४।५५।

द्वा सुपर्णा सयुजा सखाया
समानं वृक्षं परिषस्वजाते ।
तयोरन्यः पिप्पलं स्वाद्वत्त्य-
नश्नन्नन्यो अभिचाकशीति[1] ॥

जिस प्रकार गीता आदि में जगत् का अश्वत्थ वृक्ष के रूप में वर्णन किया गया है, उसी प्रकार इस मन्त्र में शरीर को अश्वत्थ वृक्ष का और जीवात्मा तथा परमात्मा को पक्षियों का रूप देकर वर्णन किया गया है। इसी प्रकार कठोपनिषद् में जीवात्मा और परमात्मा को गुहा में प्रविष्ट छाया और धूप के रूप में बताकर वर्णन किया गया है (कठ० १।३।१)। दोनों जगह का भाव प्रायः एक ही है। यहाँ मन्त्र का सारांश यह है कि यह मनुष्य-शरीर मानो एक पीपल का वृक्ष है। ईश्वर और जीव ये दोनों सदा साथ रहने वाले दो मित्र मानो दो पक्षी हैं। ये दोनों इस शरीररूप वृक्ष में एक साथ एक ही हृदयरूप घोसले में निवास करते हैं। शरीर में रहते हुए प्रारब्धानुसार जो सुख-दुःखरूप कर्मफल होते हैं, वे ही मानो इस पीपल के फल हैं।

इन फलों को जीवात्मारूप एक पक्षी तो स्वादपूर्वक खाता है, अर्थात् हर्ष, शोक का अनुभव करते हुए कर्मफल को भोगता है। परमात्मारूप पक्षी इन फलों को खाता नहीं, केवल देखता रहता है। अर्थात् इस शरीर में प्राप्त हुए सुख-दुःखों को वह भोगता नहीं है, उनका साक्षी बना रहता है। परमात्मा की भांति यदि जीवात्मा इनका द्रष्टा बन जाय, तो फिर उसका इससे कोई सम्बन्ध न रह जाय। ऐसे ही जीवात्मा के सम्बन्ध में पिछले मन्त्र में यह कहा गया है कि वह प्रकृति का उपभोग कर चुकने के बाद उसे निःसार समझकर उसका परित्याग कर देता है, उससे मुँह मोड़ लेता है। उसके लिए फिर प्रकृति अर्थात् जगत् की सत्ता ही नहीं रह जाती। फिर तो वह और उसका मित्र दो ही रह जाते हैं और परस्पर मित्रता का आनन्द लूटते हैं, और यही इस मन्त्र का तात्पर्य है।

सर्वपापहर भस्म दिव्यं ज्योतिसमप्रभम् ।
सर्वक्षेमकरं पुण्यं गृहाण परमेश्वर ॥

हे महेश्वर ! दिव्य ज्योतिःस्वरूप भस्म सर्व प्रकार के पाप-ताप मिटाकर हर प्रकार का कल्याणकारी पुण्यप्रद है। इसे सादर ग्रहण करें।

---

१. श्वेताश्वतरोपनिषद्—४।६।

त्रिपुण्ड्रं मस्तके धृत्वा वर्तुलं रक्तचन्दनम् ।
निधने याति वैकुण्ठं मुक्तो भवति वै जनः ।।

जो भक्त नियम से प्रेमपूर्वक मस्तक पर वर्तुलाकार (टेढ़ा) रक्त चन्दन का त्रिपुण्ड्र धारण करता है। मर जाने पर वह वैकुण्ठ प्राप्त करता है तथा अन्त में मुक्त हो जाता है।

स्फुटं निर्वहते यस्य यावज्जीवं शिवार्चनम् ।
मनुष्यचर्मणा नद्धः स रुद्रो नात्र संशयः ।।

जब तक मनुष्य के शरीर में जीव रहता है, तब तक जिसका शिव-पूजन कर्म बराबर बना रहता है, उस पुरुष का कभी भी नाश नहीं होता, अर्थात् वह पुरुष कभी भी परमार्थ से भ्रष्ट नहीं होता, वह साक्षात् शिवरूप है, इसमें कुछ सन्देह नहीं है।

वरं प्राणपरित्यागः शिरसो वापि कर्तनम् ।
न त्वसम्पूज्य भुञ्जीत भगवन्तं त्रिलोचनम् ।।

प्राणों का निकल जाना और सिर का कट जाना भी अच्छा है; परन्तु शिव-पूजन किये बिना भोजन करना अच्छा नहीं है।

प्रतिमायां प्रयत्नेन कृतया साङ्गपूजया ।
यत्फलं तत्फलं प्राप्यं व्यङ्गया लिङ्गपूजया ।।

शिवरहस्य में कहा गया है कि सावधानी के साथ प्रतिमा में साङ्गोपाङ्ग पूजा करने से जो फल प्राप्त होता है, वही फल शिवलिङ्ग की पूजा करने से भी प्राप्त होता है।

योऽर्चायामर्चयेद्भक्त्या पूर्णवर्षशतं नरः ।
लिङ्गमेकदिनं पूज्यं समेतं न हि संशयः ।।
शम्भोर्लिङ्गं समभ्यर्च्य पुरुषार्थचतुष्टयम् ।
प्राप्नोत्यत्र पुमान्सद्यो नात्र कार्या विचारणा ।।

स्कन्दपुराण में कहा गया है कि भक्तिपूर्वक सौ वर्ष तक तपस्या से जो फल प्राप्त होता है, वह फल एक दिन भी शिवपूजन से प्राप्त होता है। इसमें सन्देह नहीं है। शिवलिङ्ग का पूजन करने से अर्थ, धर्म, काम, मोक्ष इन चारों पदार्थों को मनुष्य प्राप्त कर लेता है।

अयमेव परो धर्मस्त्विदमेव परं तपः ।
इदमेव परं ज्ञानं शिवलिङ्गं यदर्च्यते ॥

वायुपुराण में कहा गया है कि यही एक बड़ा धर्म है, यही बड़ा तप तथा यही परम ज्ञान है। इसलिए सदैव शिवलिङ्ग का पूजन अवश्य करना चाहिए।

एकं लिङ्गं महाविष्णुर्भक्त्या शुद्धं च पार्थिवम् ।
चारुचित्रं समभ्यर्च्य लब्धवान्परमं पदम् ॥

रुद्र के मनोहर और शुद्ध पार्थिवलिङ्ग का पूजन करने से विष्णु भगवान् परम पद को प्राप्त हुए थे।

एककालं द्विकालं वा त्रिकालमथवा नरः ।
लिङ्गं महीजं सम्पूज्य शिवसायुज्यमाप्नुयात् ॥

दिन में एक समय या दो बार अथवा तीन काल में पार्थिव लिङ्ग का नियम से पूजन करने वाले मनुष्य शिवसायुज्य मुक्ति को प्राप्त करते हैं।

यस्येन्द्रियाणि पूजार्थं भवन्ति शुभदेहिनः ।
कदाचिदपि वा विप्र सफलं तस्य जीवितम् ॥

हे विप्र ! जिन उत्तम देहधारी नर-नारियों की इन्द्रियाँ शिव-पूजा के लिए कभी भी प्रवृत्त होती हैं, उसी का जीना सफल है।

शिव जी को पुष्प, फल, नैवेद्य, चमर तथा दीप आदि अर्पित करने का फल—

पत्रं पुष्पं फलं तोयमन्नपानाद्यमौषधम् ।
अनिवेद्य न भुञ्जीत यदाहाराय कल्पितम्[1] ॥

पत्र, पुष्प, फल, जल, अन्न, पान तथा औषधि आदि सभी पदार्थों को शिवार्पण किये बिना नहीं ग्रहण करना चाहिए।

मनुष्य मात्र को अपने घर के उत्तर-पूर्व के कोने के कमरे में पूजा-मन्दिर बनाकर पूजागृह को सजाकर नर्मदेश्वर को रखकर प्रतिदिन स्नान कराकर पूजा करने के पश्चात् नैवेद्य अर्पित करके प्रसाद बाँटकर अन्त में स्वयं प्रसाद खाना चाहिए। सभी वस्तुओं को शिवार्पण करके भोजन करना उत्तम है।

---

१. स्कन्दपुराण ।

एकं बिल्वदलं रम्यं मद्भक्तेनार्पितं मयि ।
अनन्ताघहरं नूनं सत्यमेवोच्यते मया ॥

मेरे भक्त का मेरे ऊपर चढ़ाया हुआ एक ही बिल्वपत्र अनन्त पापों का नाश करता है । मैं यह निश्चय ही सत्य कहता हूँ ।

पञ्चाक्षरेण मन्त्रेण बिल्वपत्रैः शिवार्चनम् ।
करोति श्रद्धया यस्तु स गच्छेदैश्वरं पदम् ॥

जो पुरुष पञ्चाक्षर मन्त्र पढ़कर बिल्वपत्रों से शिवपूजन करता है, वह (भक्त) शिवपद को प्राप्त करता है ।

शुष्कैः पर्युषितैः पत्रैरपि बिल्वस्य नारद ।
पूजयेद् गिरिजानाथमलाभे यत्नतो नरः ॥

शिवरहस्य में शिव जी ने नारद जी से कहा है कि हे नारद ! नवीन बिल्वपत्र न हो तो मनुष्य का यत्नपूर्वक सूखे या बासी विल्बपत्र से ही शिव जी का पूजन करना चाहिए ।

वर्ज्यं पर्युषितं पुष्पं वर्ज्यं पर्युषितं जलम् ।
अवर्ज्यं जाह्नवीतोयं तुलसीपत्रबिल्वकम् ॥

बासी पुष्प और बासी जल वर्जित है; किन्तु गंगाजल, तुलसी के दल, कमल के फूल और बिल्वपत्र ये बासी भी वर्जित नहीं हैं ।

बिल्वपत्रैर्महादेवं स्वाहृतैरेव कोमलैः ।
यः पूजयति यत्नेन पदं प्राप्नोति शाङ्करम्[1] ॥

जो पुरुष अपने लाये हुए कोमल बिल्वपत्रों से यत्नपूर्वक शिव जी का पूजन करता है, वह मनुष्य शिवपद को प्राप्त करता है ।

एकं वापि तु धत्तूरं कार्तिके सोमवासरे ।
यदि दद्यान्मम प्रीत्या मयि लीनो भविष्यति[2] ॥

जो पुरुष कार्तिक के महीने में सोमवार को मेरी प्रीति के लिए धतूरे का एक पुष्प भी मुझे अर्पित करता है (अर्थात् मेरे ऊपर मुझे चढ़ाता है), वह शिवरूप में लीन हो जाता है ।

---

१. शिवरहस्य ; २. वही ।

उपवीतन्तु यो दद्याद् ब्रह्मवेतृत्वमेव च।
भूषणानि च यो दद्याद् नापदं समवाप्नुयात् ॥

जो मनुष्य यज्ञोपवीत शिव जी को अर्पित करता है, वही व्यक्ति ब्रह्मवेत्ता होता है और जो नर-नारी आभूषण चढ़ाते हैं, वे सब सभी प्रकार की आपत्तियों से छुटकारा पा जाते हैं।

मृदु सूत्रं सपीतञ्च पट्टसूत्रादिनिर्मितम्।
दत्त्वोपवीतं रुद्राय भवेद्वेदान्ततः सुखी ॥

जो भक्त उपासक बनते हुए कोमल, पीत वर्ण और उत्तम सूत्र से बना यज्ञोपवीत शिव जी को चढ़ाते हैं, वे मनुष्य सब प्रकार से सुखी रहते हैं।

दत्वा वै चमरं देवं वीज्यते यः शिवःपुरे।
युगकोटिशतं भुक्त्वा चान्ते राज्यमवाप्नुयात् ॥

जो मनुष्य शिव जी के लिए चँवर अर्पित करता है तथा उसी चँवर से पुजारी प्रतिदिन हवा करता है। ऐसा चँवर अर्पित करने वाला व्यक्ति एक अरब युग तक सुख भोगकर अन्त में राजा होता है।

एकमाम्रफलं पक्वं यः शम्भुं विनिवेदयेत्।
वर्षाणामयुतं भोगैः क्रीडते सः शिवे पुरे ॥

जो मनुष्य एक भी आम का पका हुआ फल शिव जी को अर्पित करता है, वह दस हजार वर्ष तक शिवलोक में विहार करता है।

यो दाडिमफलं चैकं दद्याद् विकसितं नवम्।
शिवाय गुरवे वापि तस्य पुण्यफलं शृणु ॥
यावत्तद्बीजसंख्यानं शोभनं परिकीर्तितम्।
तावदष्टयुतान्युच्च शिवलोके महीयते ॥

जो मनुष्य विकसित नवीन और पके हुए केवल एक अनार के फल को शिव जी को या गुरु को अर्पित करता है, उस फल में जितने बीज होते हैं, उनके आठ गुने हजार वर्षों तक प्राणी सम्मानपूर्वक शिवलोक में निवास करता है।

ये दीपमालां कुर्वन्ति कार्तिक्यां श्रद्धयान्विताः।
यावत्कालं प्रज्वलन्ति दीपास्ते लिङ्गमग्रतः ॥
तावद्युगसहस्राणि दाता स्वर्गे महीयते ॥

जो पुरुष कार्तिक को पूर्णिमा एवं अमावास्या की तिथि को परम श्रद्धा से शिव-मन्दिर में अर्थात् शिव जी के आगे दीपों को पंक्ति बनाकर प्रकाश करते हैं, वे मनुष्य जितने समय तक वे दीपक प्रज्वलित रहते हैं, उसके सहस्र गुना युग तक स्वर्ग में निवास करते हैं।

पूजयित्वा महादेवं लिङ्गरूपिणमव्ययम् ।
प्रदक्षिणात्रयं कृत्वा प्रणमेद्दशपञ्च च ।।

शिव-मन्दिर में शिवलिङ्गरूप अविनाशी शिव की पूजा करके तीन बार परिक्रमा करने के पश्चात् पन्द्रह बार नमस्कार करने वाले नर-नारी के रोग, संकट दूर हो जाते हैं।

लिङ्गं समर्चितं दृष्ट्वा यः कुर्यात् प्रणतिं सकृत् ।
सन्देहो जायते तस्य पुनर्देहनिबन्धने ।।

काशीखण्ड में कहा गया है कि शिवलिङ्ग की पूजा करने के पश्चात् पुनः शिवलिङ्ग का दर्शन करते हुए जो मनुष्य शिवलिङ्ग को नमस्कार करता है, उसका पुनर्जन्म होने में सन्देह ही है, अर्थात् वह मोक्ष को प्राप्त करता है।

यत्फलं समवाप्नोति तन्मे निगदतः शृणु ।
राजन्प्रदक्षिणैकेन मुच्यते ब्रह्महत्यया ।।
द्वितीयेनाधिकारित्वं तृतीयेनेन्द्रसम्पदम् ।।

शिव जी की पूजा करने के पश्चात् शिव जी की परिक्रमा करने से जो फल प्राप्त होता है, मैं कहता हूँ श्रवण करो! हे राजन्! शिव की एक परिक्रमा करनेवाले नर-नारियों की ब्रह्महत्या से भी निवृत्ति होती है। दो परिक्रमा करने से मनुष्य अधिकारी पद प्राप्त करता है और तीसरी से इन्द्र के समान ऐश्वर्य को प्राप्त करता है।

यद्गृहे शिवनैवेद्यप्रचारोऽपि प्रजायते ।
तद्गृहं पावनं सर्वमन्यपावनकारणम् ।।
भक्षिते शिवनैवेद्ये शिवसायुज्यमाप्नुयात् ।।

शिव-पूजा करने के पश्चात् नैवेद्य खाने वाले समग्र नर-नारी शिवभक्त शिव-सायुज्य मुक्ति को प्राप्त करते हैं। जिसके घर में शिव जी को अर्पित नैवेद्य पहुँच जाता है, वह घर परम पवित्र हो जाता है और शिवप्रसाद बांटने वाले लोग भी पवित्र हो जाते हैं।

दृष्ट्वाऽपि शिवनैवेद्यं यान्ति पापानि दूरतः ।
भुक्ते तु शिवनैवेद्ये पुण्यान्यायान्ति कोटिशः ॥

शिव जी के नैवेद्य को देखते ही सारे पाप दूर भाग जाते हैं और शिव नैवेद्य को खाने से तो करोड़ों प्रकार के पुण्य अपने पास दौड़ आते हैं ।

आगतं शिवनैवेद्यं गृहीत्वा शिरसा मुदा ।
भक्षणीयं प्रयत्नेन शिवस्मरणपूर्वकम् ॥

यदि शिव-नैवेद्य मिल जाता है, तो उसे लेकर, सिर पर चढ़ाकर (प्रणाम कर) और शिव जी का स्मरण करते हुए प्रयत्नपूर्वक उसका ग्रहण (भोजन) करना चाहिए।

यावत्फलसंख्यानमुभयोर्विनिवेदितम् ।
तावद्युगसहस्राणि रुद्रलोके महीयते ॥

जो नर-नारी पके हुए अंगूर के फल शिव जी को अथवा शिव-भक्तों को दान करते हैं, वे उन फलों की संख्या के हजार गुना वर्षों तक शिवलोक में प्रतिष्ठा प्राप्त करते हैं।

यो नारङ्गफलं पक्वं शिवाय विनिवेदयेत् ।
अष्टलक्षं महाभोगैः क्रीडते स शिवे पुरे ॥
निवेद्य भक्त्या शर्वाय प्रत्येकं च फले फले ।
दशवर्षसहस्राणि रुद्रलोके महीयते ॥

जो स्त्री-पुरुष पके हुए नारंगी के फल शिव जी को अर्पित करते हैं, वे विविध प्रकार के भोगों को भोगते हुए आठ लाख वर्षों तक शिवलोक में आनन्द करते हैं। इसी तरह कोई भी ऋतु-फल शिव जी को अर्पित करने वाला व्यक्ति दश हजार वर्षों तक रुद्रलोक में सुख भोगता है।

भक्षिते शिवनैवेद्ये शिवसायुज्यमाप्नुयात् ।

शिवनैवेद्य भक्षण मात्र से प्राणी शिव-सायुज्य मुक्ति को प्राप्त करता है ।

[शिवलिङ्ग और जलधारी के अन्दर चढ़ा हुआ शिव-नैवेद्य एक पत्ते में ५ ग्राम रखकर सबको प्रसाद वितरित करें। जलधारी से बाहर रखा हुआ प्रसाद वैष्णव, शैव, शाक्त सबके लिए अमृततुल्य है ।]

चान्द्रायणसमं प्रोक्तं शम्भोर्नैवेद्यभक्षणम् ।
ब्रह्महापि शुचिर्भूत्वा निर्माल्यं यस्तु धारयति ॥
भक्षयित्वा द्रुतं तस्य सर्वपापं प्रणश्यति ॥

शिव-मन्दिरों में चढ़ा हुआ नैवेद्य खाने का फल चान्द्रायण व्रत के समान कहा गया है। चाहे जो कोई ब्रह्म-हत्यारा ही क्यों न हो यदि वह व्यक्ति पवित्र होकर शिव जी की माला को शरीर में धारण करता है और शिव-नैवेद्य ग्रहण करता है तो उस नर-नारी के सब पाप नष्ट हो जाते हैं।

निर्माल्यं देवदेवस्य चान्द्रायणशताद्वरम् ।
मदीयभुक्तं निर्माल्यं पादाम्बु कुसुमं जलम् ॥
धर्ममर्थश्च कामं च मोक्षं च ददते क्रमात् ।
मल्लिङ्गधारिणो लोके दशैका मत्परायणाः ॥
मदेकशरणास्तेषां योग्यं नैवाल्पजन्तुषु[1] ॥

शङ्कर भगवान् नारद जी से कहते हैं कि हे नारद ! शिव जी का निर्माल्य सैकड़ों चान्द्रायण से भी श्रेष्ठ है। मुझे अर्पण किया हुआ निर्माल्य, चरणोदक, पुष्प और जल क्रमशः धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष इन चारों पदार्थों को देने वाला है। जो मनुष्य त्रिपुण्ड्र लगाकर मेरे परायण होकर एकमात्र मेरी शरण में आते हैं, उन्हें किसी और योनि में नहीं जाना पड़ता, मैं उन्हें मुक्त कर देता हूँ।

जहाँ शङ्कर जी का पूजन अभीष्ट हो वहाँ पूजन-कर्ता गंगा की बालू या मिट्टी लेकर शिवलिङ्ग बनावे, तदनन्तर शिवलिङ्ग को बाएँ हाथ पर रखकर 'ॐ शिवाय नमः' इस मन्त्र से पूजनादि सब कार्य करे। किसी आचार्य का मत है—

"हरो महेश्वरश्चैव शूलपाणिः पिनाकधृक् ।
रुद्रः पशुपतिश्चैव महादेव इति क्रमः" ॥

'ॐ हराय नमः' इस मन्त्र से मिट्टी लेकर 'ॐ महेश्वराय नमः' इस मन्त्र से पानी डालकर साने और गोल मूर्ति बनावे।

बाद में 'ॐ शूलपाणये नमः' से स्नान तथा 'ॐ पशुपतये नमः' से पूजन और 'ॐ महादेवाय नमः' से विसर्जन कर मूर्ति को बहते हुए जल में छोड़ देवे।

[शिव-पार्थिव-पूजाविधि नित्य-कर्मपद्धति में विस्तार से लिखी है।]

काशीप्रदक्षिणा येन कृता त्रैलोक्यपावनी ।
सप्तद्वीपा साब्धिशैला भूः परिक्रामिताऽमुना ॥

हे भवानी ! जिसने काशी की पञ्चक्रोशी प्रदक्षिणा, दर्शन-यात्रा की है, मानो उसने त्रैलोक्य-पावनी सातों द्वीपों, सातों समुद्रों, सम्पूर्ण पर्वतों के सहित पृथ्वी की

१. स्कन्दपुराण।

प्रदक्षिणा कर ली। वह पुरुष निष्पाप और पुण्यवान् होकर कृतार्थ होता है और वह चौरासी लाख योनियों से छूटकर शिवसायुज्य मुक्ति प्राप्त करता है।

प्रत्यब्दं ये प्रकुर्वन्ति पञ्चक्रोशीप्रदक्षिणाम्।
जीवन्मुक्तास्तु ते ज्ञेया निष्पापाः काशिवासिनः॥

जो मनुष्य प्रतिवर्ष पञ्चक्रोशी की प्रदक्षिणा, दर्शन-यात्रा करते हैं, वे मनुष्य जीवन्मुक्त हैं और वे ही काशीवासी निष्पाप हैं।

यावज्जीवं वसेत् काश्यां प्रत्यब्दं सुप्रदक्षिणाम्।
कुर्यादेव निरालस्य आनन्दसदनस्य हि॥

जन्मभर, जब तक काशीवास करे, तब तक आलस्यहीन होकर आनन्द-सदन काशी की वार्षिक पञ्चक्रोशी प्रदक्षिणा, दर्शन-यात्रा अवश्य करनी चाहिए।

यथाकथञ्चिद्द्वेवेशि पञ्चक्रोशीप्रदक्षिणम्।
कुर्यादेव न मासादि चिन्तयेद्धर्मकोविदः॥
स एव शुभदः कालो यस्मिन् श्रद्धोदयो भवेत्॥

पञ्चक्रोशी दर्शन-यात्रा में जाने के लिए वार, तिथि, मास, काल, चन्द्र और समय का विचार नहीं करना चाहिए; क्योंकि पापों का नाश करने वाली और मोक्ष देने वाली पञ्चक्रोशी दर्शन-यात्रा में जाने के लिए जिस दिन हृदय में श्रद्धा उत्पन्न हो वही शुभ दिन, शुभ काल और वही उत्तम मुहूर्त्त माना जाता है।

प्रदक्षिणात्रयं कृत्वा पापं जन्मशतार्जितम्।
विलयं प्रापयत्येव नात्र कार्या विचारणा॥

तीन पञ्चक्रोशी प्रदक्षिणा, दर्शन-यात्रा करने वाले भक्त के सौ जन्मों के पाप अवश्य छूट जाते हैं, इसमें सन्देह नहीं करना चाहिए।

शङ्कर जी भवानी से कहते हैं कि हे भवानी! सभी मनुष्यों को यथाशक्ति पञ्चक्रोशी प्रदक्षिणा, दर्शन-यात्रा करनी चाहिए, पापों को नष्ट करने वाला इतना सहज उपाय अन्य नहीं है।

पञ्चक्रोशी क्षेत्र (काशी) की परिक्रमा करके बड़े से बड़ा पापी प्राणी भी पाप-रहित हो जाता है।

प्रायश्चित्तविहीनानां यातनास्ति सुदारुणा।
ज्ञानस्वरूपा काशीयं पञ्चक्रोशे परिस्थिता।
तस्याः प्रदक्षिणां कृत्वा सर्वपापैः प्रमुच्यते॥

पाप करके प्रायश्चित्त नहीं करने पर घोर यातना (पीड़ा) होती है ; लेकिन ज्ञानस्वरूप पञ्चक्रोशी मात्र काशी की प्रदक्षिणा करने से सभी पापों से मुक्ति अवश्य मिल जाती है।

पञ्चक्रोशात्मकं लिङ्गं ज्योतीरूपं सनातनम् ।
भवानीशङ्कराभ्यां च लक्ष्मीश्रीशिवराजितम्[1] ॥

पञ्चक्रोशात्मक भगवान् शिव का लिङ्ग शाश्वत तथा ज्योतिः स्वरूप है। भवानी तथा शिव जी के साथ लक्ष्मी तथा भगवान् विष्णु इस लिङ्ग में विराजमान रहते हैं।

कृष्णरामत्रययुतं कूर्ममत्स्यादिभिस्तथा ।
अवतारैरनेकैश्च युतं विष्णोः शिवस्य च ॥
गौर्यादिशक्तिभिर्जुष्टं क्षेत्रं कुर्यात्प्रदक्षिणम्[2] ॥

कृष्ण, राम आदि से युक्त तथा कूर्म, मत्स्यादि अनेकों अवतारों से युक्त भगवान् विष्णु और भगवान् शिव जी, गौरी, लक्ष्मी, अन्नपूर्णा आदि विशिष्ट शक्तियों तथा काशी-क्षेत्र की प्रदक्षिणा अवश्य करनी चाहिए।

पञ्चक्रोशात्मकस्यैव लिङ्गस्य परमात्मनः ।
प्रदक्षिणात्रयं कृत्वा जीवन्मुक्तो भवेन्नरः ॥
प्रदक्षिणाया माहात्म्यं महापापहरं शुभम् ॥

इस पञ्चक्रोशी यात्रा के अन्तर्गत शिवलिङ्गों की जो मनुष्य तीन बार यात्रा करता है। वह मनुष्य आवागमन से मुक्त हो जाता है। पञ्चक्रोशी प्रदक्षिणा का माहात्म्य महापापों को नष्ट करने वाला है।

पुत्रस्य जननी लोके सर्वदा हितकारिणी ।
हितकृत् सर्वजन्तूनां काशीहाऽमुत्र सिद्धिदा ॥

जिस प्रकार माता पुत्र का हित करने वाली होती है, उसी प्रकार यह काशी मातृवत् सभी जीव-जन्तुवों का हित करके सिद्धि को प्रदान करती है।

दक्षिणे चोत्तरे चैव ह्ययने सर्वदा मया ।
क्रियते क्षेत्रदाक्षिण्यं भैरवस्य भयादपि[3] ॥

विश्वनाथ जी कहते हैं कि हे भवानी ! मैं भैरव के भय से उत्तरायण और दक्षिणायन दोनों अयनों में काशी की सर्वदा पञ्चक्रोशी यात्रा करता हूँ।

१. का० रह० १०।११ ; २. वही १०।१३-१४; ३. सनत्कुमार-संहिता।

प्रदक्षिणा प्रकर्त्तव्या क्षेत्रस्यापापकाङ्क्षिभिः ।
श्रुत्वा मनुष्यो येनाऽऽशु निष्पापः पुण्यवान् भवेत् ।।

इस काशी-क्षेत्र की प्रदक्षिणा करने से सभी पाप नष्ट हो जाते हैं। इस क्षेत्र के माहात्म्य को सुनने से मनुष्य निष्पाप होकर पुण्यवान् हो जाता है।

काश्यां तिष्ठति यो नित्यं स्नाति भागीरथीजले ।
कुर्यात्सांवत्सरीं यात्रां पञ्चक्रोशस्य सुन्दरि[1] ।।

जो काशी-क्षेत्र में नित्य वास करता हुआ माँ भागीरथी गङ्गा जी के जल में स्नान करता है तथा हे पार्वती ! जो सांवत्सरी पञ्चक्रोशी की यात्रा करता है वह व्यक्ति जीवन्मुक्त हो जाता है।

नरयानं चाश्वतरो हयादिसहितो रथः ।
तीर्थयात्रा ह्यशक्तानां यानदोषकरी न हि[2] ।।

जो यात्री पञ्चक्रोशी दर्शन-यात्रा में चलने में असमर्थ हैं वे यात्री आटो, रिक्सा, कार, जीप, मिनी बस आदि साधनों से पञ्चक्रोशी दर्शन-यात्रा कर सकते हैं। इन साधनों से चलना कोई दोष नहीं है।

काशी की पञ्चक्रोशी प्रदक्षिणा, दर्शन-यात्रा सभी दुःखों का नाश करने वाली और सभी पापों को समाप्त करने वाली है। अतः प्रयत्नपूर्वक पञ्चक्रोशी प्रदक्षिणा, दर्शन-यात्रा करनी चाहिए।

१. दण्डपाणिभ्यो नमः (म० नं० सी० के० ३६।११)
मु० ढुण्ढिराजगली।

२. ढुण्ढिराजाय नमः (म० नं० सी० के० ३५।२७)
मु० सावित्रीफाटक अन्नपूर्णागली।

दर्शन-पूजन कर प्रार्थना करें—

ढुण्ढिराज ! गणेशान ! महाविघ्नौघनाशन ! ।
पञ्चक्रोशस्य यात्रार्थं देह्याज्ञां कृपया विभो ।।
विश्वेशं त्रिः परिक्रम्य दण्डवत्प्रणिपत्य च[3] ।।

३. पञ्चविनायकाय नमः (म० नं० सी० के० ३५।२१) कालराजेश्वराय नमः (मु० विश्वनाथ जी)।

४. श्रीविश्वनाथाय नमः (म० नं० सी० के० ३५।१९) मु० विश्वनाथ जी।

---

१. ब्रह्मपुराण ; २. कूर्मपुराण ; ३. का० रह० १०।१६-१७।

प्रार्थना-मन्त्र है —

पञ्चक्रोशस्य यात्रां वै करिष्ये विधिपूर्वकम् ।
प्रोत्यर्थं तव देवेश ! सर्वाघौघप्रशान्तये[1] ।।

हे विश्वनाथ भगवान् ! मैं समस्त पापों का प्रायश्चित्त करने के लिए और ग्रहों की शान्ति के लिए, दुःख-दरिद्रता और संकट दूर करने के लिए एवं पितरों का उद्धार करने के लिए पंचक्रोशी दर्शन-यात्रा करना चाहता हूँ, आप मुझे आज्ञा दें ।

हे विश्वनाथ भगवान् ! समस्त पापों के समूहों की शान्ति के लिए, पितरों के उद्धार के लिए मैं विधिपूर्वक यात्रा करना चाहता हूँ । देव-ऋण एवं पितृ-ऋण से मुक्ति पाने के लिए, दैहिक, दैविक, भौतिक ताप की निवृत्ति के लिए, रोग और ग्रहों की शान्ति के लिए विधिपूर्वक पञ्चक्रोशी यात्रा करना चाहता हूँ । आप आज्ञा दें । प्रार्थना करने के पश्चात् विश्वनाथ जी के मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा करके प्रणाम करना चाहिए ।

५. मुक्तिमण्डप-ज्ञानवापीतीर्थाय नमः ।

सङ्कल्प लेकर, ब्राह्मण को दक्षिणा देकर, मौन होकर चलें । मणिकर्णिकातीर्थाय नमः । (मणिकर्णिका घाट)

प्रदक्षिणोकृतान्देवान् स्मरेत्तत्र क्रमात्सुधीः ।
जय विश्वेश विश्वात्मन् काशीनाथ जगद्गुरो ।।
त्वत्प्रसादान्महादेव ! कृता क्षेत्रप्रदक्षिणा ।
अनेकजन्मपापानि कृतानि मम शङ्कर ।।
गतानि पञ्चक्रोशात्मलिङ्गस्यास्य प्रदक्षिणात् ।
त्वद्भक्तिकाशिवासाभ्यां रहितः पापकर्मणा ।।
सत्सङ्गश्रवणाद्यैश्च कालो गच्छतु नः सदा ।
हर शम्भो महादेव सर्वज्ञ सुखदायक ।।
प्रायश्चित्तं सुनिर्वृत्तं पापानां त्वत्प्रसादतः ।
पुनः पापमतिर्मास्तु धर्मबुद्धिः सदाऽस्तु मे ।।
इति जप्त्वा यथाशक्त्या दत्वा दानं द्विजन्मनाम् ।
बद्ध्वा करयुगं मन्त्री मन्त्रमेतदुदीरयेत् ।।

---

१. का० रह० १०।१५ ।

पञ्चक्रोशस्य यात्रेयं यथाशक्त्या मया कृता ।
न्यूनं सम्पूर्णतां यातु त्वत्प्रसादादुमापते ॥
इति प्रार्थ्य महादेवं गच्छेद्गेहं स्वकं स्वकम् ।
न्यूनातिरिक्तदोषाणां परिहाराय दक्षिणाम् ॥
सङ्कल्प्य गत्वा च गृहं ब्राह्मणान्भोजयेत्ततः ।
तत आगत्य च गृहं कुटुम्बैः सह भोजनम् ॥
कृतात्मानस्ततो ध्यायेत् कृतकृत्यो भवेत्ततः[1] ॥
उपास्य सन्ध्यां विधिवत् कृतसर्वोदकक्रियः ।
उपचन्द्रोदतीर्थेषु श्राद्धं विधिवदाचरेत् ॥
कुर्वंञ्छ्राद्धञ्च तीर्थेऽस्मिन् श्रद्धयोद्धरतेऽखिलान् ।
गयायां पिण्डदानेन यथा तुष्यन्ति पूर्वजाः ॥
तथा चन्द्रोदकुण्डेऽत्र श्राद्धैस्तृप्यन्ति पूर्वजाः ।
गयायाञ्च यथा मुच्येत्सर्वर्णात्पितृजान्नरः[2] ॥

चन्द्रेश्वराय नमः । (म० नं० सी० के० ७।१२४) मु० सिद्धेश्वरी ।

अमावास्यायुक्त सोमवार के दिन चन्द्रकूप-स्नान, उपवास, सन्ध्या, तर्पण, श्राद्ध कर एक दिन पहले अर्थात् चतुर्दशी के दिन उपवास व्रत रहकर रात्रि में जागरण, कीर्तन, जप, रुद्राभिषेक आदि सम्पन्न कर, प्रातःकाल (सोमवती अमावास्या योग में) चन्द्रकूप के जल से स्नान, सन्ध्या आदि से निवृत्त होकर चन्द्रकुण्ड तीर्थ के नजदीक सविधि श्राद्ध करने से सब पितरों का पूर्ण रूप से उद्धार हो जाता है। अर्थात् गया में पिण्डदान करने से पितरों की जैसी तृप्ति होती है वैसी ही तृप्ति चन्द्रकूप में पिण्डदान करने से भी होती है ।

आवाहनार्घ्यरहितं पिण्डान् दद्यात्प्रयत्नतः ।
वसुरुद्रादितिसुतस्वरूपपुरुषत्रयम्[3] ॥

वृषभध्वजेश्वराय नमः, कपिलधारातीर्थाय नमः । (मु० कपिलधारा)

शङ्कर जी कहते हैं कि सोमवारयुक्त अमावास्या तिथि के दिन कपिलधारा तीर्थ में श्राद्ध करने से अक्षय फल प्राप्त होता है। प्रलयकाल में समुद्र का भी जल सूख

१. का० रह० १०।६९-७८ ; २. का० ख० १४।५१, ५४-५५ ; ३. वही—१४।५२ ।

जाता है; परन्तु सोमवती अमावास्या में इस कपिलधारा तीर्थ पर सम्पन्न अनुष्ठान, श्राद्ध का कभी क्षय नहीं होता। बहुत क्या कहा जाय, स्वर्ग, अन्तरिक्ष और भूमण्डल के जितने भी तीर्थ हैं, सब सोमवती अमावास्या के पर्व में कपिलधारा तीर्थ पर विराजमान रहते हैं। कुरुक्षेत्र, नैमिषारण्य और गंगासागर के संगम में पिण्डदान करने से जो फल मिलता है, वह फल इस वृषध्वज तीर्थ (कपिलधारा) में भी मिलता है तथा सोमवती अमावास्या को कपिलधारा तीर्थ में श्राद्ध करने से गया श्राद्ध से आठ गुना अधिक पुण्य होता है और उक्त पर्व पर पितरों को तृप्ति हो इस मनोकामना से कपिलधारा में साधु, ब्राह्मण को यथाशक्ति भोजन कराने से अनन्त फल प्राप्त होता है।

देवि किं बहुनोक्तेन चतुर्वर्गप्रदा भुवि।
काशीं विना जगत्यन्या नास्ति नास्ति कलौ ध्रुवम् ॥

भगवान् विश्वनाथ जी कहते हैं कि हे देवि! अधिक क्या कहूँ—काशी धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष चारों पुरुषार्थों को देने वाली है। कलियुग में काशी को छोड़कर जगत् में दूसरी कोई भी पुण्य-नगरी नहीं है।



श्लोकानुक्रमणिका




सम्पूर्णानन्द-संस्कृत-विश्वविद्यालयः
श्रुतम् मे गोपाय